जिहाद, आतंकवाद और इस्लाम

प्रस्तुत पुस्तक में इस्लाम पर लगाए गए आरोप, इस्लाम का प्रचार और उस का प्रभाव, काफ़िर, जिहाद, आतंकवाद और दूसरे धर्मो में उसका आदेश, योरोप की जंगों का उल्लेख करते हुए क़ुर्आन के मानवतापूर्ण आदेश, ग़ैर मुस्लिमों से दोस्ती, इस्लामी शासन, जिज़्या और ख़िराज तथा प्रसिद्ध विद्वानों के विचारों के बाद ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के सुकथनों का वर्णन किया गया है।

(मुफ़्ती) मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी (आचार्य)

जमअ़ीयत पयामे अम्न
मर्कज़ुत्तौह़ीद अल् इस्लामी, अम्न कालोनी (सिकरौरी)
हरदोई रोड, लखनऊ (यू०पी०) इण्डिया–227107

© सर्वाधिकार सुरक्षित

नाम–	जिहाद, आतंकवाद और इस्लाम
लेखक–	मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी (आचार्य)
प्रकाशक–	जमअ़ीयत पयामे अम्न, मर्कज़ुत्तौह़ीद अल् इस्लामी,अम्न कालोनी (सिकरौरी) हरदोई रोड,लखनऊ (यू०पी०) इण्डिया–227107
संस्करण हिन्दी–	चौथा
पुस्तक संख्या–	5000
वर्ष–	2011
मूल्य–	110
Book Name:	**Jihad Atankwad Aur Islam**
Publisher:	**Jamiat Payam-e-Amn** **Markaz-ut-Tauheed, Al-Islami, Amn Colony (Sikrauri) Hardoi Road, Lucknow (U.P.) India-227107**
Distributer:	**Maktaba Payam-e-Amn** **Nadwa Road, Daliganj, Lucknow (U.P.) India-20**
Website:	**www.islamicjpamn.com**
Mobile–	**0091– 9919042879, 9984490150**
Phone No.	**0091–0522–2740942– Phone & Fax– 0522–2741906**
E–Mail–	**jpa_lko@yahoo.com, siddiquilko@yahoo.com**

मिलने के पते

१. मकतबः पयामे अम्न, जामिया दारे अरक़म फ़तेह़पुर
२. मकतबः नदविया नदवा (लखनऊ)
३. मकतबः अशरफ़िया मुह़म्मद अ़ली रोड (बम्बई)
४. मकतबः अल् फ़ुरक़ान, नज़ीराबाद (लखनऊ)
५. फ़रीद बुक डिपो (नई दिल्ली)
६. मजलिस तह़क़ीक़ात, नदवा, लखनऊ

विषय सूची

विषय	पृष्ठ सं०
सन्देश	11
प्रस्तावना	12

भाग- 1
इस्लाम धर्म पर आरोप और उसकी वास्तविकता

धर्म की वास्तविकता	15
इस्लाम धर्म की परिभाषा	15
काफ़िर का अर्थ	15
व्याकरण की दृष्टि में	16
काफ़िर शब्द निष्ठावान के अर्थ में	16
शब्द कुफ़्र इन्कार के अर्थ में	17
शब्द कुफ़्र किसान के अर्थ में	17
शब्द कुफ़्र नाशुक्री के अर्थ में	18
मुसलमानों से भी युद्ध	18
हिन्दू धर्म में नास्तिक (काफ़िर)	19
इस्लाम धर्म पर आरोप	19
ख़ूनी धर्म	20
नंगी तलवार	20
ज़िन्दगी का मक़सद नहीं	21
अंग्रेज़ी साम्राज्य का प्रचार और क़ुर्आन का एलान	22
अल्लामा इब्ने कसीर	23
इमाम फ़ख़रुद्दीन राज़ी	23
ज़ोर ज़बरदस्ती और हिंसा	26
समझाने बुझाने का रास्ता	27
आस्था की स्वतंत्रता इस्लाम धर्म में	27
क़ुर्आन का न्याय	28
सड़ा हुआ अंग	28
युद्ध के मैदान में	29
स्वस्थ समाज की स्थापना	30
तलवार से लैस सिपाही	30
मुस्लिम क्यों	30
मुसलमान हुक्मराँ न होने के बावजूद	31

विषय	पृष्ठ सं०
इस्लाम के विरोध का मुख्य कारण	31
पहला कारण ईर्ष्या द्वेष	31
अ़रब की नैतिकता	32
आचरण भ्रष्ट देश	32
ऐतिहासिक चमत्कार	32
दूसरा कारण अज्ञानता	33

भाग- 2
इस्लाम का प्रचार व प्रसार क़ुर्आन की दृष्टि में

क़ुर्आन का आदेश इस्लाम स्वीकार करने के विषय में	37
क़ुर्आन के अनुसार इस्लाम के प्रचार का तरीक़ा	37
दारोग़ा नहीं	37
बात पहुँचाने की ज़िम्मेदारी	38
अच्छी नसीह़त	38
धर्म में ज़बरदस्ती नहीं	38
जो अ़मल करेगा अपने ही लिए	40
जिसका जी चाहे माने या माने	40
कामों का बदला	40
कट्टरता ज़बरदस्ती नहीं	41
सीधी राह	41
किसी को बुरा न कहो	42
वह जानता है	42
अपना अपना ह़िसाब	42
ह़क़ की पहचान	43
भलाई या बुराई अपने ही लिए	43
अ़मालों का बदला	43
रसूल के ज़िम्मे पैग़ाम पहुँचाना	44

भाग- 3
इस्लाम के प्रचार व प्रसार का प्रभाव इन्सानी दुनिया पर

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के समय में इस्लाम के फैलने का माध्यम	47
ह़ज़रत उ़मर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) का इस्लाम	47
ह़ज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी (रज़ि०) का इस्लाम	47
ह़ज़रत उ़स्मान बिन मजऊन (रज़ि०) का इस्लाम	48

विषय	पृष्ठ सं०
ह़ज़रत ज़ुबैर बिन मुतइम (रज़ि०) का इस्लाम	48
आचरण से प्रभावित होकर इस्लाम	49
एक यहूदी का इस्लाम	49
सुमामः बिन आसाल का इस्लाम	50
ह़ज़रत ह़ारिस बिन अ़ब्दुल उज्ज़ः का इस्लाम	50
ह़ज़रत अबू राफ़ेअ़ (रज़ि०) का इस्लाम	50
इस्लाम के प्रचार का प्रभाव	51
आप (सल्ल०) के चमत्कार का प्रभाव	51
क़बील-ए-दौस का इस्लाम	52
कामियाबी पर मुसलमान	52
ज़म्माद बिन सअ़लबा का इस्लाम	53
ह़ज़रत अबूज़र (रज़ि०) का इस्लाम	54
ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) से मुलाक़ात	55
क़बील-ए-अस्लम का इस्लाम	56
कई क़बीलों (समुदायों) का इस्लाम	56
ज़ुबैर बिन मुतअ़िम का इस्लाम	56
भविष्यवाणी का प्रभाव	57
क़बील-ए-मुज़ैना का इस्लाम	57
क़बील-ए-अशज का इस्लाम	58
क़बील-ए-ज़ुहैनिया का इस्लाम	58
सुलह़ हुदैबिया का इस्लाम	58
फ़तेह़ मक्का के बाद	59
ह़ाफ़िज़े क़ुर्आन	59
फ़तेह़ मक्का के बाद	59
यमन में इस्लाम	60
क़बील-ए-हमदान का इस्लाम	61
नजरान वालों का इस्लाम	62
बह़रैन में इस्लाम	63
उमान में इस्लाम	64
शाम में इस्लाम	65
हिन्दुस्तान में इस्लाम फैलने का कारण	65
समाजी समानता	66
पहला कारण ताजिरों के अच्छे सम्बन्ध	66
इस्लाम का हिन्दुस्तान में फैलने का दूसरा कारण	67
हिन्दुस्तान में इस्लाम फैलने का तीसरा कारण	68
इस्लाम के फैलने का चौथा अहम कारण	68
सूफ़ियों के ज़रिये इस्लाम	68
बारहवीं सदी ईस्वी में इस्लाम	69

विषय	पृष्ठ सं०
पन्द्रहवीं सदी ईस्वी	70
रहनुमाओं का एहतिराम	70
हिन्दू के अवतारों का एहतिराम	70
दोनों वर्गो को क़रीब लाने के लिए हिन्दी अशआ़र	71
कृष्ण बीती	72
सूफ़ियों के हिन्दी दोहे	73
ह़ज़रत शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया (रह़०)	73
इस्लाम के हिन्दुस्तान में फैलने का पाँचवा कारण	74
उलमा-ए-इस्लाम और ह़क़	74
विश्व प्रसिद्ध आलिम शाह (रह़०) की नसीह़तें, मुस्लिम बादशाहों के नाम	75
ह़ुकूमत की अहम ज़िम्मेदारियाँ	77
ह़ज़रत शाह इस्माईल शहीद (रह़०)	78
ह़ज़रत शरफ़ुद्दीन यहया मुनेरी (रह़०)	78
ह़ज़रत अ़ब्दुल क़ुद्दूस गंगोही (रह़०)	78
ज़ुल्म के ख़िलाफ़	78
जबरन मुसलमान न बनाने का फ़त्वा	79
उलमा मज़लूमों के साथ	79

भाग- 4
ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को युद्ध के आदेश मिलने से पूर्व की दशा

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के युद्ध से पूर्व	81
आचरण भ्रष्ट	81
मुह़म्मद (सल्ल०) का विरोध	81
धर्म भ्रष्ट	82
यहूदी और ईसाई	82
ज़ुल्म के पहाड़	82
ह़ज़रत बिलाल (रज़ि०) पर अत्याचार	83
ह़ज़रत ख़ब्बाब (रज़ि०) पर अत्याचार	83
ह़ज़रत सुहैब व ह़ज़रत अम्मार (रज़ि०) पर अत्याचार	83
ह़ज़रत अबू फ़कीह (रज़ि०) पर अत्याचार	83
ह़ज़रत सुमइया (रज़ि०) पर अत्याचार	84
ह़ज़रत अबूज़र गिफ़ारी (रज़ि०) पर अत्याचार	84
ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) पर अत्याचार	84
ह़ज़रत उस्माने ग़नी (रज़ि०) पर अत्याचार	85
ह़ज़रत ज़ुबैर बिन अव्वाम (रज़ि०) पर अत्याचार	85
ह़ज़रत सईद बिन ज़ैद (रज़ि०) पर अत्याचार	85

विषय पृष्ठ सं०

हज़रत आइशा बिन अबी रबीअः व हज़रत सलमा बिन हिशाम (रज़ि०) पर अत्याचार. 85
हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) पर अत्याचार..... 85
मुसलमानों का बहिष्कार..... 86
हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की हत्या का षडयंत्र..... 86
इस्लाम का प्रकाश मदीने में..... 87
मदीना वालों का आग्रह..... 87
मक्का वासियों की शत्रुता..... 87
हिजरत के बाद पहला काम..... 88
मदीना के यहूदी क़बायल से सुलह..... 88
मक्का वालों को ख़त मदीना वालों के नाम..... 89
कुरैशे मक्का का खुल्लम खुल्ला एलाने जंग..... 90
मुसलमानों की कुव्वत..... 91
सरयों की विशेषता..... 91
किसी को बर्बाद नहीं किया..... 92
हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की जंगों का संक्षिप्त परिचय..... 93
इस्लाम के प्रचार का राज़..... 95

भाग- 5
इस्लामी जिहाद का तुलनात्मक वर्णन और आतंकवाद

जिहाद का अर्थ..... 97
जिहाद का पारिभाषिक अर्थ..... 97
जिहाद और युद्ध में अन्तर..... 97
बेहतरीन जिहाद..... 99
जिहाद ज़ाती फ़ायदे के लिए नहीं..... 100
जिहाद का उद्देश्य..... 100
जिहाद का शरअ़ी हुक्म..... 101
दो सूरतें..... 103
मुजाहिदीन की हिदायतें..... 104
जिहाद और उसका सन्दर्भ..... 105
धार्मिक ग्रन्थों की टीकाएँ..... 105
एक शब्द के विभिन्न अर्थ..... 106
वेदों पर आस्था न रखने वालों का क़त्ल..... 106
उर्फ़ शरअ़ में जिहाद कई अर्थों में 107
माँ-बाप के हुक़ूक़ जिहाद..... 107
हज भी एक जिहाद है..... 107
इन्साफ़ की बात कहना जिहाद..... 108

विषय पृष्ठ सं०

नफ़्स पर क़ाबू पाना जिहाद है..... 108
वक़्त पर नमाज़ पढ़ना जिहाद..... 108
ईमान और हज भी जिहाद है..... 109
नमाज़ के बाद जिहाद..... 109
ज़बान से जिहाद..... 110
क़लम से जिहाद..... 110
माल के ज़रिए जिहाद..... 111
शिक्षा के ज़रिए जिहाद..... 111
क़ुर्आन के ज़रिए जिहाद..... 112
कठिनाई झेलने के ज़रिए जिहाद..... 112
दबाव डालने के ज़रिए जिहाद..... 113
जिहाद अपने लिए..... 113
कोशिश के ज़रिए जिहाद..... 114
लड़ाई के ज़रिए जिहाद..... 115
मुजाहिद की मिसाल रोज़ेदार नमाज़ी की है..... 115
जिहाद का हुक्म क़ियामत तक रहेगा..... 116
हक़ीक़ी जिहाद..... 117
बड़े जिहाद को जहन्नम नहीं छू सकती..... 118
जिहाद के लिए मुसलमानों को हुक्म..... 118
तीर और जन्नत..... 119
जिहाद की तमन्ना से खाली दिल..... 120
ज़ालिमों के ख़िलाफ़ जिहाद..... 121
जान व माल की हिफ़ाज़त में मरना शहादत है..... 122
फ़सादात में मरने वाले शहीद हैं..... 123
जिहाद की आयतों पर आपत्ति..... 124
दंगे फ़साद..... 124
पवित्र क़ुर्आन में युद्ध का आदेश..... 125
मज़लूम का हक़..... 126
हक़ीक़त..... 127
जिहाद कब और किससे..... 128
काफ़िरों को कहाँ और कब क़त्ल करो..... 129
क़त्ल का कारण..... 130
अत्याचार की एक झलक..... 130
आप (सल्ल०) के जान के दुश्मन..... 131
ज़्यादती क्या है..... 132
रक्तपात..... 132
कअ़बः की मर्यादा..... 132
युद्ध का परित्याग..... 133

विषय पृष्ठ सं०

बाधा को दूर करने के लिए..... 133
विचारणीय प्रश्न..... 133
मृत्यु दण्ड..... 134
मुसलमान बनने के लिए दिल से राज़ी होना है..... 134
एक आवश्यक स्पष्टीकरण..... 134
जिहाद पर आक्षेप..... 135
जिहाद आदेश शत्रुओं के साथ..... 136
विधर्मियों से युद्ध..... 136
फ़ितना की व्याख्या..... 137
युद्ध की परिस्थियाँ..... 138
ईश्वरीय मार्ग के लिए युद्ध..... 138
युद्ध..... 138
युद्ध सम्बन्धी सीमाओं का पालन करना अनिवार्य..... 138
इस्लामी लड़ाईयाँ क्यों ?..... 139
मिसेज़ एनीबेसन्ट..... 139
प्रसिद्ध इतिहासकार एडवर्ल्ड गिब्बन लिखते हैं..... 140
प्रसिद्ध इतिहासकार मिस्टर टामस कारलायल लिखते हैं..... 141
वैदिक ग्रन्थों में युद्ध सम्बन्धी निर्देश..... 143
शत्रुओं से जंग..... 143
शत्रुओं के धन का बटवारा..... 144
शत्रु का मुक़ाबला..... 144
अत्याचारियों को दण्ड..... 144
शत्रुओं को सख़्त सज़ा..... 145
अत्याचारियों को दण्ड..... 144
हिंसकों का क़त्ल..... 146
वेद द्वेषियों का नष्ट..... 146
शत्रुओं का क़त्ल..... 146
कष्ट देने वाले की सज़ा..... 146
पापी को नष्ट कर..... 146
दुष्ट की पसुलियों को तोड़..... 147
जीता हुआ माल..... 147
शत्रु के साथ मामला..... 147
धर्म युद्ध न करने वाले पापी..... 147
युद्ध से भागने की सज़ा..... 148
सैनिकों द्वारा जीता हुआ धन..... 148
शेर के समान हमला..... 148
दुष्ट कर्म करने वालों का नाश..... 149
देवता स्वरूप आर्यो ने क्या किया..... 149

विषय पृष्ठ सं०

रावण का धर्म..... 150
एक ही घटना के दो रुख़..... 150
आतंकवाद और इस्लाम..... 151
आतंकवाद का अर्थ..... 151
आतंकवाद का इतिहास..... 151
आतंकवाद की परिभाषा..... 152
आतंकवाद और इस्लाम..... 152
इस्लाम में भ्रष्टाचार की अनुमति नहीं..... 152
आतंकवाद की गुन्जाईश नहीं..... 153
जिहाद का आदेश न्याय के शर्त के साथ..... 154
तलवार के प्रयोग का तरीक़ा इस्लाम धर्म में..... 156
हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का आदेश..... 157
जंग की नसीहतें..... 157
मुहम्मद (सल्ल०) द्वारा सेना के उपदेश..... 158
इस्लामी जिहाद की अस्ल रुह..... 159

भाग- 6

यूरोप का जंगी जूनुन और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की जंगे तुलनात्मक दृष्टि में

वर्तमान सभ्यता का अपराध..... 162
ख़ूनी हाथ..... 162
इस्लामी सभ्यता की मिसाल..... 163
अंग्रेज़ों की नीति..... 164
इस्लाम में इन्सानों के शिकार की अनुमति नहीं..... 164
क़ैदी औरतें और इस्लाम..... 164
औरतों को आज़ादी की हक़ीक़त..... 165
वैश्यावृत्ति और वर्तमान सभ्यता..... 166
स्वार्थपरता..... 166
वैश्यावृत्ति का मूल कारण..... 166
सोसाइटी गर्ल्ज़..... 167
वर्तमान सभ्यता का कारनामा..... 167
यूरोप में गुलामी की दास्तान..... 168
कम्यूनिस्ट देश..... 168
इन्क़िलाबी आइडियालोजी..... 169
दहशतगर्दी..... 169
जुल्म व सितम का राज..... 170

विषय पृष्ठ सं०

लूथर के ख़ूनी हाथ ... 170
बीसवीं सदी की सलीबी जंगें ... 171
ईसाइयत की ख़ूँरेज़ आँधी ... 172
रुस की तरक़्क़ी के नाम पर ज़ुल्म के पहाड़ ... 172
सोलहवीं सदी ... 173
रुस की दरिन्दग़ी ... 175
सर में कीलें ... 175
क़ैदियों पर पेट्रोल ... 176
निशाना लगाते ... 176
हवा-पानी बन्द करके ... 176
बिजली के तार ... 176
सर और धड़ को अलग बांधकर ... 176
ग़र्म सलाख़ ... 176
खौलता तेल ... 176
कीले ठोंकी जाती ... 176
उंगलियों में कीलें ... 176
बांधकर ... 177
बर्फ़ पर लिटाकर ... 177
सर के बाल नोच दिये जाते ... 177
लोहे के कंघे ... 177
जलता हुआ मवाद ... 177
पत्थर रख दिया जाता ... 177
छत से लटका दिया जाता ... 177
कीले वाले डंडे से पिटाई ... 177
जिस्म के टुकड़े-टुकड़े ... 177
जिस्म के सुराख़ ... 178
दीवारों में कील से ठोंक दिया जाता ... 178
ठंडे पानी में डाल दिया जाता ... 178
हाथ पैर बाँध देते ... 178
बेह़याई के घिनौने काम किये जाते ... 178
अ़रबों का दुश्मन क़ौम के बन्दियों के साथ सुलूक ... 178
वह़शियाना मन्ज़र ... 178
चीन के मुसलमानों पर ज़ुल्म ... 180
जर्मनी की ज़ुल्म व बर्बरियत ... 181
ह़ब्शा के मुसलमानों पर ज़ुल्म के पहाड़ ... 182
मज़ह़बी जंगे तुल्नात्मक दृष्टि में ... 183
मुह़म्मद (सल्ल०) की तमाम जंगों का वर्णन ... 184
मुह़म्मद (सल्ल०) की जंगों में कुल जानी नुक़्सान ... 185

विषय पृष्ठ सं०

दुश्मन बन्दियों की संख्या ... 185
कुल जानें ... 186
जम्हूरियत के नाम पर ख़ून की नदियाँ ... 186
जंगे अ़ज़ीम में मरने वालों की संख्या ... 187
मुह़म्मद (सल्ल०) की कामियाब जंगें ... 188
जान डेविस पोर्ट के अनुसार जानी नुक़सान ... 188
मुह़म्मद (सल्ल०) की नसीह़त ... 189

भाग- 7
इस्लाम के मानवतापूर्ण आदेश तमाम इन्सानों के नाम

इस्लाम के मानवतापूर्ण आदेश क़ुर्आन की दृष्टि में ... 191
किसी इन्सान का क़त्ल महापाप है ... 191
ख़ून के बदले का अधिकार किसको ... 191
इन्सान में दो गुनाह सबसे बड़े ... 192
अपनों के लिए मानवता, दूसरों के लिए ... 192
इस्लाम और इन्सान ... 193
जान बचाने की शक्लें ... 194
हर इन्सान की जान ... 194
इस्लाम में मुस्लिम या ग़ैर मुस्लिम औ़रत का आदर ... 195
हर माँगने वाले की बिना भेदभाव मदद का आदेश ... 196
हर व्यक्ति की मदद ... 196
हर इन्सान को आज़ादी का ह़क़ ... 196
हर इन्सान के साथ न्याय का आदेश ... 197
दुश्मन से भी इन्साफ़ ... 197
तमाम इन्सानों के साथ समानता का आदेश ... 198
इस्लामी समानता ... 200
भलाई में सहयोग देना और बुराई को मिटाना ... 200

भाग- 8
दुश्मन के प्रति मानवतापूर्ण अधिकार इस्लाम की दृष्टि में

दुश्मन के अधिकार इस्लाम की दृष्टि में ... 203
जर्मन लेखकों के विचार ... 203
प्राचीन ग्रन्थ ... 203
हरिदत्त वेदालंकार जी के अनुसार ... 204
ग्रोशियस का युद्ध और शान्ति का क़ानून ... 204

विषय पृष्ठ सं०

युद्ध में शिष्टाचार..... 204
द्वितीय विश्वयुद्ध..... 205
इस्लामी शिष्टाचार..... 205
इस्लाम में युद्ध न करने वालों के अधिकार..... 205
रोमियों और ईरानियों का इतिहास..... 206
शांति की स्थापना के लिए..... 206
इस्लाम का सिद्धान्त..... 207
युद्ध करने वालों के साथ व्यवहार..... 207
ग़फ़लत में आक्रमण न किया जाए..... 207
आग़ का अ़ज़ाब न दिया जाए..... 208
लूटमार और ग़ारतगरी न की जाए..... 208
फ़साद..... 208
बाँध कर क़त्ल न किया जाए..... 209
दुश्मनों की लाशों पर ग़ुस्सा न निकाला जाए..... 210
दुश्मन की लाशें..... 210
वादा ख़िलाफ़ी..... 210
हुदैबिया की घटना..... 211
दूतों को क़त्ल न किया जाए..... 211
बर्बरतापूर्ण अ़मल के ख़िलाफ़ हिदायत..... 212
पराजितों के अधिकार..... 213
ज़िम्मियों के अधिकार..... 213
नजरान के ईसाईयों के साथ व्यवहार..... 214
मिस्टर जेसन के अनुसार..... 215
श्री सुन्दर लाल जी के अनुसार..... 215
शत्रु देश के नागरिकों के अधिकार..... 215
विजयी सेनाएँ..... 216
स्वामी बुद्धानन्द जी के अनुसार..... 216
आर्यो का बर्बरतापूर्ण व्यवहार..... 217
ज़िज़्या भेदभाव के आधार पर नहीं..... 218
आस्था बदलने के लिए इस्लाम विवश नहीं करता..... 219

भाग- 9
इस्लाम के विषय में विश्व प्रसिद्ध विद्वानों के विचार

इस्लाम के विषय में प्रसिद्ध विद्वानों के विचार..... 222
गाँधी जी के अनुसार इस्लाम की तलवार..... 222
एडवर्ल्ड गिब्बन जी के अनुसार इस्लाम की तलवार..... 222
ए० एडोल्फ़ ट्रीटन जी के अनुसार इस्लाम की तलवार..... 222

विषय पृष्ठ सं०

डी लेसी ओलेरी जी के अनुसार इस्लाम की तलवार..... 222
मिसेज़ एनीबेसन्ट के अनुसार इस्लाम..... 223
मुह़म्मद (सल्ल०) के विवाह पर आक्षेप..... 224
काफ़िरों को मार कर इस्लाम..... 224
मिस्टर बनार्ड शा के अनुसार..... 225
लेन पोन जी के अनुसार..... 225
विश्व-बन्धुत्व और मानव-समानता के संस्थापक..... 226
मानव समानता..... 226
दास को भी उच्च पद..... 227
मिस्टर देवदास गाँधी जी के अनुसार..... 227
मुह़म्मद (सल्ल०) का जीवन..... 228
आपकी ईमानदारी..... 229
पहले स्वंय कर के दिखाते..... 229
आपकी सादगी..... 230
कर्म्योगी..... 230
आप अपना काम ख़ुद करते..... 231
बच्चों से प्रेम..... 231
दयालुता..... 232
प्रो० डी० डब्लू० अर्नाल्ड के अनुसार..... 233
डेविड पोर्ट के अनुसार इस्लाम..... 233
योरोपी प्रसिद्ध इतिहासकार फ़न ले के अनुसार..... 234
विश्व प्रसिद्ध इतिह़ासकार गिब्बन के अनुसार..... 234
कॉंट हेनरी दी कास्तरी (प्रसिद्ध फ़्रांसीसी शोधकर्ता)..... 234
जार्ज सेल (अनुवादक क़ुर्आन) के अनुसार..... 235
एच० जी० वेल्ज़ के अनुसार इस्लाम..... 235

भाग- 10
ग़ैर मुस्लिमों से दोस्ती या दुश्मनी क़ुर्आन की दृष्टि में

ग़ैर मुस्लिमों से दोस्ती या दुश्मनी क़ुर्आन की दृष्टि में..... 237
मोमिनों को छोड़कर दोस्ती..... 237
इ़ज़्ज़त का देने वाला अल्लाह..... 238
युद्ध के आदेश के बाद सतर्कता..... 238
बिना भेदभाव सत्य के साथ..... 239
जुल्म के ख़िलाफ़..... 239
दोस्ती उन से नहीं जो ज़ालिम हैं..... 240
अम्न पसन्द ग़ैर मुस्लिमों से नहीं..... 240
अल्लाह और रसूल के दुश्मन..... 241

विषय पृष्ठ सं०

ग़ैर मुस्लिमों के साथ इन्साफ़ का हुक्म ... 241
केवल जंग करने वालों से दुश्मनी ... 241
पवित्र क़ुर्आन की आयतों का उद्देश्य ... 242
क़ुर्आन का उद्देश्य तमाम इन्सानों के हित में ... 242
ज़मीन पर फ़साद न मचाओ ... 243
अल्लाह फ़साद करने वालों को पसन्द नहीं करता ... 243
ज़मीन में फ़साद न फैलाओ ... 243
न ज़मीन पर फ़साद न बड़ाई ... 244
दुश्मनों से न्याय और इन्साफ़ करने का आदेश ... 244
बुराई को अच्छे ढंग से दूर करो ... 244
भले कामों में ग़ैर मुस्लिमों के साथ सहयोग ... 245
किसी एक इन्सान को क़त्ल करना जैसे तमाम इन्सानों को क़त्ल करना है ... 246
भलाई के कामों में एक दूसरे से आगे बढ़ो ... 247
दुनिया इत्तिहान हाल है ... 248
अच्छा अ़मल किसका ... 248
अ़मल का बदला ... 249
इन्सानी अधिकार ... 250
अपने-अपने धर्म पर अ़मल करने का अधिकार ... 250
इस्लाम की नैतिकता क़ुर्आन की दृष्टि में ... 251
क़ुर्आन के नैतिकतापूर्ण आदेश ... 251
अपशब्द तक नहीं ... 251
एकता ... 252
नेकी के कामों में सहयोग ... 252
धर्म का प्रचार ... 253
आरोपो का जवाब ... 253
विधर्मियों के साथ अच्छे बर्ताव ... 254
ग़ैर मुस्लिमों की दो क़िस्में ... 254
अहले किताब से शादी ... 255
ऊपर की मुख्य आयतों पर आक्षेप ... 255
क्या क़ुर्आन के कुछ आदेश निकाल देने चाहिए ... 257
शत्रुओं से मित्रता ... 257
वेदों के अनुसार दोस्ती ... 257
मनुस्मृति के अनुसार दोस्ती ... 258
श्रीमद्भागवत गीता ... 258
श्री कृष्ण जी और अर्जुन ... 258
अर्जुन की उदारता ... 259
श्री कृष्ण जी का उत्तर ... 260
और देखिए अर्जुन के एक प्रश्न के उत्तर में कृष्णजी ने कहा ... 260
अल्लाह तआ़ला पवित्र क़ुर्आन में फ़रमाता है ... 261

विषय पृष्ठ सं०

एक और आयत पर आक्षेप ... 261
मानव प्रेम की वास्तविकता ... 261
ऋग्वेद में ... 262
आर्यवर्त से भिन्न विदेशी ... 263
भविष्य पुराण के अनुसार म्लेच्छ ... 263
इस्लामी समानता ... 264
ग़ैर मुस्लिमों के साथ हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की सन्धियाँ ... 265
ग़ैर मुस्लिमों से सन्धियाँ ... 265
मिस्र की विजय ... 266
एक दास ... 266
महत्वपूर्ण विभाग युद्ध ... 267
जुर्जान निवासियों से प्रतिज्ञा पत्र ... 268
शाम के साथ प्रतिज्ञा ... 268
सुलह हुदैबिया ... 269
फ़तेह मक्का ... 269
इस्लाम की तलवार ... 270

भाग- 11
इस्लामी शासन में जिज़्या, ख़िराज और ग़ैर मुस्लिमों के अधिकार

इस्लामी शासन में ग़ैर मुस्लिमों के अधिकार ... 272
ग़ैर मुस्लिमों के साथ सम्बन्ध ... 272
इस्लामी समाज की हिमायत ... 272
इन्सानी उसूलों पर अ़मल ... 273
जुल्म से ज़िम्मियों की हिफ़ाज़त ... 274
खुल्फ़-ए-राशिदीन और ज़िम्मी ... 275
जुल्म की संगीनी ... 275
जन्नत से दूरी ... 276
ग़ैर मुस्लिमों के ख़ून का बदला ख़ून ... 276
मुसलमानों का ज़िम्मी के बदले क़त्ल ... 277
ज़िम्मी को जिस्मानी सुरक्षा ... 277
हज़रत अ़ली (रज़ि०) की हिदायत ... 278
माल के हिफ़ाज़त की ज़िम्मेदारी ... 279
हज़रत उमर फ़ारुक़ (रज़ि०) की हिदायत ... 279
मुसलमानों का अ़मल ... 279
शराब व खिंजीर और मुसलमान ... 280
ग़ैर मुस्लिमों की शराब व खिंजीर का बदला ... 280

इ़ज़्ज़त व आबरु की ह़िफ़ाज़त..... 280
ग़ैर मुस्लिमों के लिए रोज़ी-रोटी का हुक्म..... 281
बूढ़ों को पेंशन..... 282
ग़ैर मुस्लिम बूढ़ों की मदद..... 282
ग़ैर मुस्लिम बीमारों की मदद..... 282
हर इन्सान की बुनियादी ज़रुरत की ज़िम्मेदारी..... 283
सर्दी गर्मी के कपड़े डाक्टरों की फ़ीस..... 283
ग़ैर मुस्लिम को पूरी मज़हबी आज़ादी..... 283
ईसाईयों का जब्र..... 284
ग़ैर मुस्लिमों की इ़बादतगाहों की रक्षा..... 285
ईलिया के ग़ैर मुस्लिमों के साथ मुआ़हिदा (संधि)..... 286
ह़ज़रत ख़ालिद (रज़ि०) के मुआ़हिदे में नाकूस बजा सकते थे..... 286
ग़ैर मुस्लिम इ़बादतगाहें बना सकते हैं..... 287
गिरजाघरों की तआ़मीर..... 287
दीन के विरोधियों के साथ बर्ताव..... 288
मशहूर फ्रांसीसी लेखक मुसन्निफ़ लोबोन लिखते हैं..... 288
ग़ैर मुस्लिमों को तिजारत की आज़ादी..... 289
सूदी कारोबार पर रोक..... 289
ग़ैर मुस्लिमों की दीनी काम के अ़लावह हर पद पर नियुक्ति..... 289
ज़िम्मेदारी का ह़क़..... 289
ईसाईयों को मन्त्रालय के पद..... 290
जिज़्या क्या है..... 291
जिज़्या की मिक़दार..... 291
ख़िराज किसे कहते हैं..... 292
जिज़्या किससे लिया जाएगा..... 293
जिज़्या लेने का कारण..... 294
जिज़्या जमा करने का तरीक़ा..... 294
जिज़्या किन को माफ़ है..... 294
जिज़्या में नर्मी..... 295
शाँतिवादी धर्म..... 295
शत्रुओं के प्रति उदारता..... 296
धन वापस..... 296
जिज़्या कब ख़त्म हो जाती है..... 297
दुश्मन की ग़िरफ़्तार औ़रतें..... 298
अल्प संख्यकों के साथ हमदर्दी..... 298
मुस्लिम देशों में फ़िर्क़ा वाराना कोई ज़ुल्म नहीं..... 299
इस्लामी हुकूमत में ग़ैर मुस्लिमों की जनसंख्या..... 300
ईसाईयों की जनसंख्या..... 301

भाग- 12
ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के संक्षिप्त सुकथनों का वर्णन

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के संक्षिप्त सुकथनों का वर्णन..... 303
अच्छे व्यवहार..... 303
अल्लाह की मख़्लूक़ पर दया..... 304
पड़ोसियों से अच्छा व्यवहार..... 307
जानवरों पर दया..... 308
वृक्षारोपण में सवाब..... 308
मज़दूर की मज़दूरी..... 309
झूठ न बोले..... 309
चर्ब ज़बानी..... 309
पहलवान कौन..... 309
न्याय..... 310

सन्देश

प्रख्यात विश्व विद्वान एवं श्रेष्ठ विचारक ह़ज़रत मौलाना सय्यद अबुल ह़सन अ़ली ह़सनी नदवी (रह़०) के क़लम से

" अल्ह़म्दुलिल्लाहिरब्बिल्अ़ालमीन वस्सलातु वस्सलामु अ़ला रसूलेहिल्करीम "

ख़ाकसार ने मोलवी 'मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी साह़ब' की किताब **"जिहाद आतंकवाद और इस्लाम"** विषयों पर नज़र डाली तो ज़रुरत के एतिबार से बहुत मुफ़ीद मालूम हुई कि 'जो मग़्रिब की तरफ़ से लोगों के ज़ेहनों में फैलाया गया है कि इस्लाम धर्म तलवार से फैला।

इस बात की सख़्त ज़रुरत थी कि मुस्तनद ह़क़ाएक़ की रोशनी में इसकी तर्दीद की जाए, कि इशाअ़ते इस्लाम और तब्लीग़ व दअ़वत में जो ख़ुलूस कारफ़रमा था उसमें खुद जो कोशिश और जाज़्बियत थी उस को क़ुर्आन व ह़दीस की रोशनी में और तारीख़ी वाक़िआ़त के ताईद से साबित किया जाये कि-

لَآ إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ ۖ قَد تَّبَيَّنَ الرُّشْدُ مِنَ الْغَيِّ

अनुवाद- "धर्म में ज़बरदस्ती नहीं, वास्तविकता गुमराही से अलग हो चुकी।"

(सूरः बकरः आयत २५६)

शुक्र व मसर्रत की बात है कि **'मोलवी मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी'**(आचार्य बी० एच० यू०) ने इस के लिए शहादतें और मवाद जमा कर दिया, अल्लाह तआ़ला इस से फ़ायदा पहुँचाये और उन ग़लत बयानियों और इफ़्तरा प्रदाज़ियों का असर ख़त्म हो जो मुस्तश्रिकीन और मुख़ालिफ़ीने इस्लाम की तह़रीरों व तक़रीरों से पैदा हुआ था।

अबुल ह़सन अ़ली ह़सनी नदवी
दारुल उ़लूम नदवतुल् उ़लमा, लखनऊ

1 ज़िलहिज्ज 1918 हि०
30 मार्च 1998 ई०

सन्देशः-

प्रख्यात विश्व विद्वान तथा प्रसिद्ध एवं श्रेष्ठ साहित्यकार ह़ज़रत मौलाना सअ़ीदुर्रह़मान आज़मी नदवी साह़ब के क़लम से-

'चान्सलर' इन्टिगरल यूनिवर्सिटी, 'सम्पादक' अल्बअ़सुल इस्लामी (अ़रबी मासिक पत्रिका) व 'प्रधानाचार्या' दारुल उ़लूम नदवतुल उ़लमा लखनऊ

बिस्मिल्लाहिर्रह़मानिर्रह़ीम

बहुत से लोग इस बात पर विश्वास रखते हैं कि इस्लाम एक इन्सानी धर्म है और वह इन्सान के मिज़ाज के अनुकूल है। इस्लाम में जिहाद का नाम आते ही लोग भयभीत हो जाते हैं और उस के नतीजे में इस्लाम को एक हमलाआवर धर्म क़रार देने लगते हैं। शायद उनका यह विचार जिहाद शब्द के सही अर्थ व उद्देश्य को न समझने की वजह से उनके दिलों में पैदा हो जाता है।

इस्लाम किसी धर्म के मानने वाले या न मानने वाले पर किसी प्रकार की जंग थोपने की ज़रूरत अनुमति नहीं देता, क्योंकि जिहाद तो सुधार के अन्तिम प्रयास के बाद उन लोगों के ख़िलाफ़ प्रयोग करने की अनुमति देता है, जो सारे संसार में और इस धरती पर फ़साद बरपा करके इन्सानों के अपने वास्तविक जीवन को व्यतीत करने से रोकते हों और न्याय का गला घोटते हों और इन्सानी समाज की विभिन्न ग़ैर इन्सानी हर्बे अपना कर दुनिया के अम्न व अमान और इन्सानी अधिकार से लोगों को मह़रूम करने में अपनी ताक़त का प्रयोग करते हों। ज़ाहिर है जब भी इन्सानी सोसाइटी में कोई ऐसा समुदाय पैदा हो जाए जो इन्सानी दुनिया को सच्चाई की राह और न्याय के तरीक़े पर चलने रोकने का प्रयास करे तो उस का हाथ पकड़ना और अत्याचार से रोकना इन्सान के जीवन का एक बुनियादी ह़क़ है। इसी को इस्लाम के परिभाषिक अर्थ में जिहाद शब्द का प्रयोग किया जाता है। जो अत्याचार और ग़ैर इन्सानी मिज़ाज़ को रोकने और उसको सही रास्ते पर लाने का एक प्रयास है।

इन्सानी सामाजिक जीवन को सुखमय और शान्तिमय बनाने के लिए अल्लाह तआ़ला ने ऐसे लोगों को रोकने और सही रास्ते पर उन को ले आने के लिए वैसे ही

माध्यम के प्रयोग को भी ज़रूरी क़रार दिया है ताकि इन्सानी ज़िन्दगी के किसी मैदान में शैतानी फ़ुल्सफ़ा राह न पा सके और पूरी दुनिया में अमन व शान्ति के साथ निर्भय व निडर होकर ज़िन्दगी गुज़ारने का रिवाज आम हो और हर प्रकार की बुराईयों का ख़ात्मा हो और एक अल्लाह की, जिसने ज़मीन व आसमान और इन्सानों को पैदा किया उस की अ़िबादत का चर्चा और उसकी रुह़ का चलन पूरे इन्सानी समाज में एक स्वस्थ मिज़ाज बनकर उभरे और जब भी कोई व्यक्ति या समुदाय इस रास्ते में रुकावट बने तो उसका सुधार या फिर उस को रास्ते से हटाने के प्रयास में कोई कमी न छोड़े।

इस बिना पर जिहाद को एक दिफ़ाई (रक्षार्थ) ज़रूरत क़रार देना और इन्सानियत की कामियाबी का ज़रिया तलाश करना ज़्यादा मुनासिब है। इसी नुक़्ते नज़र से इस पुस्तक में पूरे विस्तारपूर्वक उल्लेख किया गया है और यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि जिहाद के बारे में जो ग़लत फ़हमियाँ फैली हुई हैं और उस को नाहक इन्सानी जानों से खेलने का जो नाम दिया जाता है वह बिलकुल ग़लत और इतिहास की सच्चाई के आइने में केवल एक काल्पनिक विचार है।

इस्लाम में ग़ज़वे (जंग) का अ़मल जिसकी रहनुमाई अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने की। वह इसी सच्चाई की मिसाल है। उसको और उससे सम्बन्धित तमाम हुक्मों और नसीह़तों को मालूम करने के लिए इस किताब का अध्ययन किया जाए जिसको हमारे दोस्त जनाब 'मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी' ने तर्तीब किया है, ताकि विशेष रूप से हिन्दी दाँ लोगों में फैली हुई ग़लत फ़हमी दूर हो और जिहाद के अर्थ व उद्देश्य को समझने में कोई दुश्वारी न पेश आए।

अल्लाह के रसूल से दर्याफ़्त किया गया कि उस व्यक्ति के बारे में क्या ख़याल है जो जंग करता हो ताकि उसे बहादुर समझा जाए या इसलिए जंग करता हो ताकि उसकी क़ौमी अस्बियत का अलम्बरदार समझा जाए या इसलिए जंग करता है कि वह अपनी ताक़त का मुज़ाहिरा दिखाये। इन सब में कौन सबसे अफ़ज़ल है। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया कि इनमें से जो अल्लाह के कलिमे को बुलन्द करने के लिए करे, केवल वही अल्लाह की राह में है। इसके अतिरिक्त कोई अल्लाह की राह में नहीं।

दुआ़ है अल्लाह तआ़ला इस किताब से लोगों को ज़्यादा से ज़्यादा लाभ पहुँचाए और इस्लाम की तमाम ग़लत फ़हमियों को दूर करके वास्तविकता से परिचित होने का ज़रिया बनाये और अल्लाह तआ़ला इनकी इस कोशिश को क़ुबूलियत से नवाज़े।

आमीन

सअ़ीदुर्रह़मान आ़ज़मी

प्रस्तावना

यह एक बड़ा दुर्भाग्य है कि बहुत से लोग इस्लाम और उसकी सम्पूर्ण व्यवस्था को समझने के बजाय, उसे अपना दुश्मन और प्रतिद्वन्दी समझने लगे और इस्लाम को बद्नाम करने की कोशिश करने लगे कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने एक हाथ में क़ुर्आन और दूसरे हाथ में तलवार लेकर इस्लाम का प्रचार किया। परन्तु बहुत से विद्वान, विचारक, दार्शनिक ऐसे भी हैं जिन्होंने इस्लाम को ध्यानपूर्वक पढ़ा, जाना-समझा और उसका सही चित्र उनके सामने आया जिससे उनकी ग़लत फ़हमियाँ दूर हुईं, और इस्लाम का वास्तविक रूप समझ में आया।

जिस प्रकार शाँतिमय जीवन या शाँतिमय समाज को बनाने के लिए अशाँति फैलाने वालों को हटाना अनिवार्य हो जाता है, ठीक उसी प्रकार इस्लाम समाज के उन तत्यों को हटाना चाहता है जो सारे इन्सानों पर ज़ुल्म के पहाड़ तोड़ते हैं। जिहाद का अर्थ होता है- कोशिश या संघर्ष करना, यहाँ तक कि जान देना पड़ जाए तो उस के लिए भी तैयार रहना और "क़िताल का अर्थ होता है क़त्ल करना", परन्तु जहाँ क़िताल के माने हैं वहाँ ऐसा नहीं है कि केवल इस्लाम न स्वीकार करने की वजह से किसी को क़त्ल न कर दिया जाए बल्कि जिहाद या क़िताल के कुछ मानवतापूर्ण नियम हैं जिनका पालन किये बिना वास्तविक जिहाद नहीं हो सकता, जिसका उल्लेख विस्तारपूर्वक पुस्तक में किया गया है।

जिहाद का वास्तविक उद्देश्य-"दुनिया में अम्न व अमान क़ायम करना, अत्याचार का विरोध करना और कमज़ोरों की मदद करके अत्याचार से छुड़ाना और अपने पैदा करने वाले मालिक के अनुसार जीवनयापन करना आदि है।"

प्रस्तुत पुस्तक १२ भागों पर आधारित है। जिसमें से पहले भाग में इस्लाम धर्म पर आरोप और उसकी वास्तविकता, काफ़िर और मुस्लिम का अर्थ, इस्लाम में आस्था की स्वतंत्रता का ज़िक्र क़ुर्आन की दृष्टि में किया गया है। भाग (२) में इस्लाम का प्रचार व प्रसार, क़ुर्आन के अनुसार ज़िक्र करने के बाद रसूल की ज़िम्मेदारी को बयान किया गया है। भाग (३) में इस्लाम का प्रचार व प्रसार हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के समय में किस प्रकार हुआ और अ़रब में इस्लाम के फैलने का कारण ज़िक्र करने के बाद यमन में इस्लाम, बहरैन में इस्लाम, उमान में इस्लाम और हिन्दुस्तान में इस्लाम के फैलने का कारण बताते हुए बारहवीं सदी, पन्द्रहवीं सदी तक कैसे इस्लाम फैला उसका ज़िक्र है।

भाग (४) में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को युद्ध के आदेश मिलने से पूर्व की दशा का विस्तारपूर्वक ज़िक्र करते हुए आप (सल्ल०) की जंगों का संक्षिप्त परिचय कराया गया है। भाग (५) में जिहाद और आतंकवाद का अर्थ, जिहाद की क़िस्में, उद्देश्य और उसके हुक्मों को बताते हुए वेदों में धर्म युद्ध सम्बन्धी श्लोको का ज़िक्र किया गया है और पवित्र क़ुर्आन में जो युद्ध सम्बन्धी आदेश हैं उनका विस्तारपूर्वक ज़िक्र किया गया है। फिर आतंकवाद का इतिहास, जिहाद और आतंकवाद में अन्तर स्पष्ट करते हुए इस्लाम धर्म में तलवार के प्रयोग

को बताया गया है और मुहम्मद (सल्ल०) द्वारा सेना को दिये गये उपदेशों का विस्तारपूर्वक ज़िक्र है।

भाग (६) योरोप का जंगी जुनून और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की जंगों का तुल्नात्मक ज़िक्र करते हुए बीसवीं सदी की सलीबी जंगें, रूस का ज़ुल्म, चीन, जर्मन, हब्शा, अ़रब और दुनिया के दूसरे देशों की जंगों के हालात और उसमें मरने वालों की संख्या का ज़िक्र करते हुए इस्लामी जंगों का ज़िक्र गया है। भाग (७) में इस्लाम के मानवतापूर्ण आदेश जो तमाम इन्सानों के साथ समान हैं उनका ज़िक्र किया गया है। जैसे- हर जान के बचाने की कोशिश की जाएगी, हर माँगने वाले की मदद की जाएगी, हर इन्सान को आज़ादी दी जाएगी, हर इन्सान के साथ न्याय किया जाएगा और भलाई के कामों में मदद की जाएगी बुराई को ख़त्म किया जाएगा।

भाग (८) में इस्लाम ने जो दुश्मनों को मानवतापूर्ण अधिकार दिये हैं उसका ज़िक्र किया गया है, जैसे ग़फ़लत में आक्रमण न किया जाएगा, आग़ का अ़ज़ाब न दिया जाएगा, लूटमार नहीं की जाएगी, बांध कर क़त्ल नहीं किया जाएगा, दुश्मनों की लाशों पर ग़ुस्सा नहीं निकाला जाएगा, वादा ख़िलाफ़ी नहीं की जाएगी, आस्था बदलने के लिए विवश नहीं किया जाएगा आदि।

भाग (९) में इस्लाम के विषय में विश्व प्रसिद्ध विद्धानों के विचार का ज़िक्र है और भाग (१०) में ग़ैर मुस्लिमों से दोस्ती के सम्बन्ध में जो क़ुर्आन में आयतें दी गई हैं उनका विस्तारपूर्वक ज़िक्र करते हुए वेद, पुराण और मनुस्मृति के अनुसार दोस्ती करने से जहाँ मना किया गया है उन श्लोकों का भी ज़िक्र किया गया है फिर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की ग़ैर मुस्लिमों के साथ संधियों और सम्बन्धों का ज़िक्र है।

भाग (११) में इस्लामी शासन में ग़ैर मुस्लिमों को जो अधिकार दिये गये हैं उनका विस्तारपूर्वक ज़िक्र किया गया है। जैसे- ग़ैर मुस्लिमों के इ़ज़्ज़त की हिफ़ाज़त, उनके रोज़ी-रोटी का प्रबन्ध, बूढ़ों को पेंशन, बीमारों की मदद, और उन्हें सर्दी गर्मी के कपड़े, डाक्टरों की फ़ीस, ग़ैर मुस्लिमों को मज़हबी पूरी आज़ादी देने के साथ, हर इन्सान की बुनियादी ज़रूरत की ज़िम्मेदारी का ज़िक्र करते हुए जिज़्या, खिराज आदि का ज़िक्र है। भाग (१२) में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के संक्षिप्त महत्वपूर्ण सुकथनों का वर्णन किया गया है। यह हमारे उन भाईयों के लिए जो इस्लाम की शिक्षाओं से नावाक़िफ़ हैं, एक बेहतरीन तोहफ़ा है। आशा है इसके ज़रिये इस्लाम, मुसलमानों और जिहाद के सम्बन्ध में जो भ्रम है वह दूर होगा और आपसी प्रेम की भावना उत्पन्न होगी।

अन्त में हम जनाब सलमान दामूदी साहब के शुक्रगुज़ार हैं जिन्होंने इस किताब के लिखने और छपवाने में मदद फ़रमाई। अल्लाह तआ़ला अपनी शान के मुताबिक़ उन्हें अज्र अ़ज़ीम अ़ता फ़रमाए।

मुहम्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी
दारूल उलूम नदवतुल उ़लमा (लखनऊ)
25-04-1998

भाग-1

इस्लाम धर्म पर आरोप
और
उसकी वास्तविकता

धर्म की वास्तविकता

अल्लाह ने जिस प्रकार मनुष्य को विविध प्रकार की जीवन सामग्री प्रदान कीं और साधन दिये, उसी प्रकार उसे शिष्ट जीवन व्यतीत करने के लिए शिक्षा प्रदान करने हेतु ईशवाणी और आदेश का अवतरण भी किया।

अतः मनुष्य को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है- एक वह जो ईश्वरीय शिक्षा को स्वीकार करे जिसे 'सुकर्मी और संयमी' कहते हैं, दूसरा वह जो ईश्वरीय शिक्षा का इन्कार करे अर्थात कुकर्मी, इस प्रकार धर्म वह है जो ईश्वरीय शिक्षानुसार जीवन का संविधान प्रदान करे।

इस्लाम, काफ़िर या जिहाद यह सब अ़रबी भाषा के शब्द हैं जिन की अज्ञानता के कारण बहुत से भ्रम हो जाते हैं। उन का अर्थ नीचे प्रस्तुत किया जाता है।

इस्लाम धर्म की परिभाषा

इस्लाम का शब्दिक अर्थ होता है, 'सुपुर्दगी' (Surrender) या अपने आप को बिना किसी शर्त अल्लाह (परमेश्वर) के हवाले कर देना, अर्थात अल्लाह (परमेश्वर) की इच्छा के अनुसार पूर्ण रूप से नत्मस्तक हो जाना।

इस्लाम का पारिभाषिक अर्थ होता है- "अल्लाह तथा ईश्वरीय शिक्षा को स्वीकार कर लेना तथा उसके प्रति नत्मस्तक हो जाना, अपने और अपने सर्वस्व को अल्लाह के अधीन कर देना तथा सम्पूर्ण जीवन में अल्लाह का आज्ञाकारी और भक्त बन जाना।"

अर्थात उसी को उपास्य और पूज्य मानना, उसी से प्रार्थना करना और अपना पूर्ण जीवन उसी के नियम व आदेशानुसार व्यतीत करना।

काफ़िर का अर्थ

पवित्र कुर्आन में शब्द काफ़िर को लेकर भी इस्लाम के विरुद्ध बड़ी

भ्रान्ति फैलाई गई है काफ़िर का अर्थ होता है "इन्कार करने वाला" या "ह़क़ को छिपाने वाला"।

अर्थात वास्तविकता का इन्कार करने वाला। कुफ़्र के अर्थ अवसर के अनुरूप विभिन्न होते हैं, जैसे इन्कार, अवज्ञा, कृतघ्नता, निरादर और नाक़द्री, सच्चाई को छिपाना और अधर्म आदि। कुफ़्र करने वाले को अ़रबी भाषा में 'काफ़िर' कहते हैं।

व्याकरण की दृष्टि में-

'काफ़िर' शब्द व्याकरण की दृष्टि से गुणवाचक संज्ञा है, यह अपमानबोधक शब्द नहीं है। यह शब्द उन लोगों के लिए भी प्रयुक्त हुआ है जिसके सामने ईश्वरीय धर्म-इस्लाम की शिक्षाएँ पेश की गईं और उन्होंने किसी भी कारण से उनको ग़लत समझा और उसका इन्कार कर दिया। कुफ़्र का शब्द उन लोगों के लिए भी प्रयुक्त हुआ है जो अपने को इस्लाम का अनुयायी और मुसलमान कहते थे, परन्तु इस्लाम के प्रति निष्ठावान न थे।

इस प्रकार पारिभाषिक रूप में जो व्यक्ति न अल्लाह को माने और न ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को अन्तिम सन्देष्टा माने और अन्तिम ईश ग्रन्थ का इन्कार करे, चाहे वह हिन्दू, सिख, ईसाई, यहूदी या पारसी यहाँ तक कि मुसलमान भी हो, यदि इन मूल आस्थाओं का इन्कार करेगा तो वह भी काफ़िर कहलाएगा।

उदाहरणार्थ ईशदूत ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का कथन है:

" जिस (मुसलमान) ने जान-बूझकर नमाज़ छोड़ दी उसने कुफ़्र किया।"

(मुह़म्मद सल्ल०)

काफ़िर शब्द कुर्आन की दृष्टि में

पवित्र कुर्आन में काफ़िर शब्द कई अर्थो में प्रयोग हुआ है जिसका उल्लेख इस प्रकार है।

काफ़िर शब्द निष्ठावान के अर्थ में-

अनुवाद- "जो लोग परमेश्वर के भेजे हुए निर्देशों के अनुसार फ़ैसला न करें

वे फ़ासिक़ (अधर्मी) हैं।" (सूरः माइदा-४४)

उपर्युक्त शिक्षाओं में सम्बोधन साफ़ तौर पर उन लोगों से है जो इस्लाम के अनुयायी होने का दावा करते थे और अपने को मुसलमान कहते थे, परन्तु वे इस्लाम के प्रति निष्ठावान न थे।

कुफ़्र शब्द इन्कार के अर्थ में भी प्रयोग हुआ है जैसे-

शब्द कुफ़्र इन्कार के अर्थ में

لَآ اِكْرَاهَ فِي الدِّيْنِ ۙ قَدْ تَّبَيَّنَ الرُّشْدُ مِنَ الْغَيِّ ۚ فَمَنْ يَّكْفُرْ بِالطَّاغُوْتِ وَيُؤْمِنْۢ بِاللّٰهِ فَقَدِ اسْتَمْسَكَ بِالْعُرْوَةِ الْوُثْقٰى ۗ لَا انْفِصَامَ لَهَا ۗ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ۝

अनुवाद-

"धर्म के विषय में कोई ज़बर्दस्ती नहीं, हिदायत तो गुमराही से साफ़-साफ़ खुल चुकी है तो अब जो सरकश (शैतान) को ठुकरा दे और अल्लाह पर ईमान लाए, तो उसने ऐसा मज़बूत सहारा थाम लिया जो कभी टूटने वाला नहीं, और अल्लाह खूब सुनने वाला, जानने वाला है।" (सूरः बकरः २५६)

ऊपर कुर्आन की इस आयत में शब्द 'कुफ़्र' इन्कार के अर्थ में प्रयोग हुआ है।

शब्द कुफ़्र किसान के अर्थ में प्रयोग हुआ है, जैसे-

शब्द कुफ़्र किसान के अर्थ में

اِعْلَمُوْٓا اَنَّمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا لَعِبٌ وَّ لَهْوٌ وَّ زِيْنَةٌ وَّ تَفَاخُرٌۢ بَيْنَكُمْ وَتَكَاثُرٌ فِي الْاَمْوَالِ وَ الْاَوْلَادِ ۭ كَمَثَلِ غَيْثٍ اَعْجَبَ الْكُفَّارَ نَبَاتُهٗ ثُمَّ يَهِيْجُ فَتَرٰىهُ مُصْفَرًّا ثُمَّ يَكُوْنُ حُطَامًا ۭ وَفِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ شَدِيْدٌ ۙ وَّمَغْفِرَةٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرِضْوَانٌ ۭ وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَآ اِلَّا مَتَاعُ الْغُرُوْرِ ۝

अनुवाद-

"जान लो! कि दुनिया की ज़िन्दगी बस खेल और तमाशा है, और ज़ीनत और तुम्हारा आपस में एक-दूसरे पर बड़ाई जताना, और माल और औलाद में एक- दूसरे से बढ़ जाने की चाह है; इसकी मिसाल बारिश की है जिससे खेती (वनस्पति) ने किसान का दिल मोह लिया, फिर वह लहलहाने लगती है, और तुम देखते हो कि वह पीली हो गयी है, फिर वह चूर-चूर हो जाती है, (अर्थात मड़ाई में); और आख़िरत में सख़्त अ़ज़ाब भी है और अल्लाह से माफ़ी भी, और रज़ामन्दी भी; और दुनिया की ज़िन्दगी तो बस धोखे का सामान है।" (सूरः हदीद-२०)

ऊपर कुर्आन की इस आयत में शब्द कुफ़्फ़ार (काफ़िरों) किसान के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

शब्द कुफ़्र नाशुक्री के अर्थ में इस प्रकार प्रयोग हुआ है-

शब्द कुफ़्र नाशुक्री के अर्थ में

فَاذْكُرُوْنِيْٓ اَذْكُرْكُمْ وَاشْكُرُوْا لِيْ وَلَا تَكْفُرُوْنِ ۝

अनुवाद-

"सो तुम मुझे याद करते रहो, मैं तुम्हें याद करता रहूँगा, और मेरी शुक्रगुज़ारी करते रहो, और नाशुक्री न करो।" (सूरः बकरः-१५२)

कुर्आन में जिन काफ़िरों (इन्कार करने वालों) से युद्ध की बात कही गई है उसका कारण उनका मात्र काफ़िर (इन्कार करने वाला) होना नहीं है, बल्कि वह बात उनके घोर अपराधों और उन ह़ालात के कारण कही गई है जो उस समय ह़ालात उन्होंने पैदा किए थे।

मुसलमानों से भी युद्ध

अगर इस्लाम और कुर्आन पर ईमान रखने वाला कोई मुसलमान भी

ऐसे अपराध करेगा और ऐसी ज़ुल्म की परिस्थितियाँ उत्पन्न करेगा जिनमें युद्ध आवश्यक हो जाता है तो उस मुसलमान के विरुद्ध भी इस्लामी राज्य युद्ध करेगा। अतः हम देखते हैं कि इस्लामी राज्य के पहले ख़लीफ़ा (शासक) ह़ज़रत अबू बक्र ने स्वयं ऐसे मुसलमानों के ख़िलाफ़ युद्ध का आदेश दिया था।

हिन्दू धर्म में नास्तिक (काफ़िर)-

हर धर्म में उस धर्म की मौलिक धारणाओं एवं शिक्षाओं को मानने वालों और न मानने वालों के लिए अलग-अलग शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं। जैसे हिन्दू धर्म में उन लोगों के लिए जो हिन्दू धर्म के अनुयायी न हों नास्तिक, अनार्य, असभ्य, दस्यु और मलिच्छ शब्द प्रयुक्त हुए हैं।

अगर कोई व्यक्ति किसी धर्म की धारणा या शिक्षा को स्वीकार नहीं करता तो उसे उसका इन्कार करने वाला अर्थात् 'काफ़िर' (नास्तिक) ही कहा जाएगा।

बुद्ध जी वेदों को नहीं मानते थे, इसलिए उन्हें भी नास्तिक कहा गया है।

इस प्रकार इस्लाम में भी जो मूल धारणाएँ हैं। उन को जो व्यक्ति इन्कार करेगा वह भी काफ़िर कहलाएगा, चाहे मुसलमान ही क्यों न हो।

इस्लाम धर्म पर आरोप

इस्लाम धर्म पर लगाए गए आरोपों में सबसे उग्र आरोप यह है कि "इस्लाम धर्म तलवार के ज़ोर से या जिहाद से फैला", या यह कि "एक हाथ में कुर्आन दूसरे हाथ में तलवार" लेकर धर्म प्रचार किया और कहीं यह कहा गया कि "इस्लाम धर्म विदेशी धर्म है।"

यह एक आश्चर्य की बात है कि 'The New Educator's Encylopadia' जैसी प्रमाणित पुस्तक भी इस आरोप से पाक नहीं है कि-

"जब मुह़म्मद के मानने वालों की संख्या बढ़ गई तो उन्होंने अपनी आस्थाएं तलवार के ज़ोर से मनवाने की ठान ली और जंगों का एक लम्बा

सिलसिला प्रारम्भ हो गया, अन्ततः पूरा अ़रब देश जीत लिया।"

(The New Educator's Encyclopadia, Page No. 2375)

परन्तु यह भी एक वास्तविकता है कि इस्लाम के विरूद्ध जितना प्रचार हुआ वह उतना ही फैलता और उन्नति करता गया। जिस समय ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का अभ्युद्य हुआ, उस समय भी अ़रब के बहुदेववादियों के अतिरिक्त यहूदी और ईसाइयों ने भी इस्लाम से द्वेष की बिना पर अनेकों प्रकार के आरोप लगाए जिसमें विशेष रूप से यह भ्रष्ट प्रचार किया कि 'इस्लाम तलवार के ज़ोर से फैला' परन्तु उन्हीं देशों में ऐसे विद्वान भी हुए जिन्होंने इस आरोप का खण्डन भी किया।

ख़ूनी धर्म-

इस्लाम पर जो भी झूठे आरोप और इल्ज़ाम लगाए गए उनमें एक यह भी था कि 'इस्लाम एक ख़ूनी धर्म है', वह अपने अनुयाइयों को आज्ञा देता है कि दूसरों को ज़बरदस्ती मुसलमान बनाए और जो मुसलमान न बनें उनकी गर्दन उड़ा दें! पोप और पादरी, लेखक और विद्वान, इस झूठे आरोप को एक स्वर से इतनी तत्परता के साथ और इतने दिनों तक दुहराते रहे कि योरोप का पूरा वातावरण इस प्रचार से गूँज उठा और सारे संसार के लोगों को विश्वास हो गया कि अवश्य इस्लाम एक हिंसक और ख़ूनी धर्म है जिसमें दया, प्रेम और मानवता का नाम भी नहीं!

नंगी तलवार-

कुछ योरोपियों ने जिहाद की व्याख्या इस तरह की है जिस को पढ़ कर मह़सूस होता है कि जिहाद करने वाले मज़हबी दीवाने जो दाढ़ियाँ रखे नंगी तलवार हाथ में लिए इन्सानों और क़ौमों के ख़ून के प्यासे घात लगाये बैठे हैं कि इस्लाम क़ुबूल करो वरना क़त्ल कर दिए जाओगे।

इस प्रकार ग़ज़वात व सराया को इस रंग में पेश करना न केवल एक बड़ी ऐतिह़ासिक ग़लती है, बल्कि मुह़म्मद (सल्ल०) और आप के साथियों पर एक

बहुत बड़ा आरोप है।

वास्तविकता यह है कि हुज़ूर (सल्ल०) और आप के अनुयाइयों का अगर गहराई से अध्यन किया जाए तो यह बात बिलकुल साफ़ हो जाती है कि उन की नज़र में जंग से ज़्यादा नापसंदीदा और कोई चीज़ न थी। उजड़े और बिछड़े लोगों का एक नये माहौल में दाख़िल होना, आधी जमाअ़त की आर्थिक तबाही से दो-चार होकर अपनी बहाली के लिए हाथ पांव मारना, एक नये माहौल को इन्क़िलाबी दअ़वत के लिए धीरे-धीरे तैयार करना, विभिन्न गिरोहों को भाई चारगी का जोड़ लगाना, उन की ज़ेहनी और अख़्लाक़ी तर्बियत करना, एक नई हुकूमत क़ायम करके, उसके तमाम शोअ़बों का प्रबन्ध करना, यह सब काम इस्लामी इन्क़िलाब के अ़लमबरदारों के हाथों अन्जाम पा रहे थे फिर उन में से हर काम ऐसा था जो पूरी तवज्जोह और मेहनत चाहता था।

ज़िन्दगी का मक़सद नहीं-

इन कठिन मसायल में घिरी हुई एक छोटी सी जमाअ़त किसी तरह भी जंग को अपने ज़िन्दगी का मक़सद नहीं बना सकती और न लड़ाई मोल लेने के लिए तैयार हो सकती है, लेकिन जब उसको मजबूर किया गया तो उसने इस से मुँह भी नहीं मोड़ा।

इसलिए कि उस को एक विश्व व्यापी इन्सानी मिशन रखने वाली जमाअ़त तैयार करनी थी। उसे किसी ख़ास क़ौम या मुल्क की नहीं, बल्कि तमाम दुनिया की भलाई के उसूल जारी करने थे।

उस ने ज़िन्दगी की अ़ज़ीम तरीन सच्चाई यानी एक खुदा की रुबूबियत (पालनकर्ता) व उलूहियत (एकेश्वरवाद) के नूर से संस्कृति को जगमगा देने के लिए अपना तमाम लाभ और ऐश व सुकून क़ुर्बान कर रखा था और सब्र व भाईचारा की मन्ज़िलों से गुज़रते हुए वह आगे बढ़ रही थी। उस का तो सरमाया ही हक़ था, जिसे वह सीने से लगाए हुए थी। उस का सारा भविष्य ही इस दृष्टि से जुड़ा हुआ था। उस की हिफ़ाज़त के लिए उस के अन्दर ठीक उसी तरह का जज़्बा था जिस तरह के जज़्बे से सरशार होकर 'एक मुर्ग़ी किसी चील को मंडलाते

देखती है तो सब कुछ भुलाकर अपने चूज़ों को पैरों के तले समेट लेती है'।

यह वह जमाअ़त थी जिस के लोग अपने दृष्टिकोण को बढ़ाने के लिए सूखे हुए जिस्मों के साथ, सख़्त चट्टानों से टकरा जाने के लिए तैयार रहते थे।

जब जाहिलियत के अ़लम्बरदारों ने उन्हें ललकारा और जंग की दअ़वत दी, तो यह बेसरो सामान मुहाजिर व अन्सार हज़ारों की फ़ौज से टक्कर लेने को आ गये, और ईमान व अख़्लाक़ और सद्भावना का सिक्का मनवा लिया।

अंग्रेज़ी साम्राज्य का प्रचार और क़ुर्आन का एलान-

भारत में जब मुसलमानों का राज्य समाप्त हुआ और योरोप से अंग्रेज़ी साम्राज्य भारत आया तो अपने दूसरे अस्त्र-शस्त्र के साथ वह प्रचार भी लेता आया जो इस्लाम और मुसलमानों के विरुद्ध सदियों से योरोप में फैला हुआ था। इसी वजह से हिन्दुस्तान में भी इस्लाम के विरुद्ध घृणा और द्वेष विद्यमान होने लगा और योरोप से आये हुए इस्लाम विरोधी प्रचार का ख़ूब स्वागत हुआ और धीरे-धीरे इस प्रचार ने स्थायी रूप धारण कर लिया, लेकिन वास्तविकता और सत्य क्या है? इसका जवाब क़ुर्आन ही से मांगना चाहिये, क्योंकि वही इस्लाम का मूल आधार है, क़ुर्आन में ज़बरदस्ती मुसलमान बनाने की आज्ञा तो बड़ी बात है आपको उसकी अनुमति भी न मिलेगी।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

لَآ إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ ۖ

अनुवाद-

"दीन (धर्म) के विषय में कोई ज़बरदस्ती नहीं। (**सूरः बकरः २५६**)

व्याख्या-

इस आयत की व्याख्या इस्लाम के प्राचीन आचार्यों और विद्वानों ने इस प्रकार किया है। हज़रत अ़ब्दुल्लाह (रज़ि०) क़ुर्आन के प्रमाणित आचार्य थे, उनके द्वारा एक कथा वर्णन की गई है जिसका आश्य यह है कि-

अन्सार (मदीना की प्रसिद्ध जाति) में से एक आदमी के दो बेटे ईसाई

हो गये थे। उन्होंने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से अ़र्ज किया कि मेरे बेटे ईसाई मत को छोड़ने पर राज़ी नहीं होते, क्या मैं उनको बाध्य कर सकता हूँ? इस पर यह आयत उतरी जो ऊपर उद्धृत है।

अल्लामा इब्ने कसीर-

अल्लामा इब्ने कसीर, कुर्आन शरीफ़ के महान और प्रमाणित आचार्य माने गये हैं उन्होंने इस आयत की व्याख्या करते हुए जो कुछ लिखा है उसका आश्य यह है-

किसी व्यक्ति को इस्लाम धर्म में दाख़िल होने पर विवश न करो, क्योंकि वह इतना प्रकट और स्पष्ट है और उसकी उक्तियाँ और प्रमाण इतने दिव्य हैं कि किसी व्यक्ति को इसमें प्रविष्ट होने पर बाध्य करने की ज़रुरत ही नहीं है। अल्लाह ने जिस शख़्स को हिदायत दी हो, और जिसका हृदय सत्य को स्वीकार करने के लिए खोल दिया गया हो, और जिसको ज्ञान चक्षु की ज्योति प्रदान की गई हो वह स्पष्ट प्रमाण के कारण खुद इस्लाम को स्वीकार करेगा। जिसके दिल को ख़ुदा ने अन्धकार कर दिया और जिसकी सुनने और देखने की शक्तियों पर मुहर लगा दी उसका बल और हिंसा के द्वारा इस्लाम में दाख़िल होना उसे कोई लाभ न देगा।

ज्ञात हो कि मुहर उसी के दिल पर लगाई जाती है जो सत्य के स्पष्ट हो जाने के बाद भी उसका विरोध ही करता रहता है।

इमाम फ़ख़रुद्दीन राज़ी-

इमाम फ़ख़रुद्दीन राज़ी भी कुर्आन के प्रसिद्ध टीकाकार हैं। उन्होंने उपरोक्त आयत के बारे में कुर्आन के आचार्य अबू मुस्लिम अस्फ़हानी का कथन उद्धृत किया है उसका आश्य यह है:-

ख़ुदा ने दीन को ज़ोर-ज़बरदस्ती पर निर्भर नहीं रखा है बल्कि अधिकार और अख़्तियार पर रखा है। ख़ुदा ने एकेश्वरत्व के प्रमाण ऐसे सन्तोषप्रद और अटूट रीति से वर्णन कर दिये कि बहाना और इन्कार की कोई जगह नहीं रही, तो उसने फ़रमाया कि इन तर्कों के स्पष्टीकरण के बाद किसी

इन्कारी के लिए इन्कार पर जमे रहने का कोई कारण बाक़ी नहीं रहा, फिर अब अगर वह ईमान न लाये तो उसको मनवाने की केवल यही एक सूरत बाक़ी रह जाती है कि उसको ज़बरदस्ती ईमान लाने पर मजबूर किया जाये! मगर यह जायज़ (उचित) नहीं है क्योंकि यह संसार आज़माइश और परीक्षा की जगह है और ज़ोर-ज़बरदस्ती से इस्लाम को मनवाने पर बाध्य करना, परीक्षा और आज़माइश के उद्देश्य को नष्ट कर देना है इसके प्रमाण में ख़ुदा का यह फ़रमान है।

इसके बाद इसी आश्य की कुर्आन में कई आयतों का प्रमाण दिया गया है। अन्त में इमाम फ़ख़रुद्दीन राज़ी ने भी इसी मत की पुष्टि की है।

इस विषय पर कुछ और आयतें उपस्थित की जाती हैं, एक स्थान पर है-

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

قُلْ يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَآءَكُمُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّكُمْ ۚ فَمَنِ اهْتَدٰى فَاِنَّمَا يَهْتَدِيْ لِنَفْسِهٖ ۚ وَمَنْ ضَلَّ فَاِنَّمَا يَضِلُّ عَلَيْهَا ۚ وَمَآ اَنَا عَلَيْكُمْ بِوَكِيْلٍ ۝

अनुवाद-

कह दीजिए, "ऐ लोगो! तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारे पास ह़क आ गया है, तो अब जो कोई राह पर आएगा, तो वह अपने लिए ही आएगा, और जो कोई गुमराह (पथभ्रष्ट) होगा तो वह अपने ही लिए गुमराह होगा, और मैं तुम्हारा वकील (ज़िम्मेदार) नहीं हूँ।"

(सूरः यूनुस- १०८)

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

اِنْ اَحْسَنْتُمْ اَحْسَنْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ ۖ وَاِنْ اَسَاْتُمْ فَلَهَا ۚ فَاِذَا جَآءَ وَعْدُ الْاٰخِرَةِ لِيَسُوْٓءٗا وُجُوْهَكُمْ وَلِيَدْخُلُوا الْمَسْجِدَ كَمَا دَخَلُوْهُ اَوَّلَ مَرَّةٍ وَّلِيُتَبِّرُوْا مَا عَلَوْا تَتْبِيْرًا ۝

अनुवाद-

"अगर तुमने भलाई की तो अपने ही लिए की और अगर तुमने बुराई की तो अपने ही लिए की, फिर जब दूसरे (वादे) का वक्त

आएगा, तो वह तुम्हारे चेहरे बिगाड़ देंगे और मस्जिद (बैतुल मक़दिस) में दाख़िल हो जाएंगे जैसे पहली बार वह उसमें दाख़िल हो गये थे, और ताकि जिस चीज़ पर उनका ज़ोर हो उसे तबाह कर डालें।" (सूरः **बनी इस्राईल- ७**)

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

وَإِنْ كَذَّبُوكَ فَقُلْ لِي عَمَلِي وَلَكُمْ عَمَلُكُمْ ۖ أَنْتُمْ بَرِيئُونَ مِمَّا أَعْمَلُ وَأَنَا بَرِيءٌ مِمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٤١﴾

अनुवाद-

"और अगर यह आप को झुठलाएँ, तो कह दीजिए, ''मेरा किया मेरे लिए और तुम्हारा किया तुम्हारे लिए; तुम मेरे काम के ज़िम्मेदार नहीं और मैं तुम्हारे काम का ज़िम्मेदार नहीं हूँ।''

(सूरः **यूनुस- ४१**)

साथ ही स्पष्ट कर दिया कि सच्चाई की तरफ़ बुलाने वाले की हैसियत क्या है- मुहम्मद (सल्ल०) से कहा गया कि आप बता दीजिए-

"मैं दाई और मुज़क्किर (उपदेश कर्ता) हूँ, कुछ तुम पर वकील नहीं हूँ। यानी मेरा काम यह है कि नसीहत की बात सुझा दूँ, यह नहीं है कि निगहबान बन कर तुम पर मुसल्लत हो जाऊँ (अधिपात्य जमा लूँ) और समझूँ मुझे तुम्हारी हिदायत की ठेकेदारी मिल गई है।" दूसरी जगह पैग़म्बरे इस्लाम को मुख़ातब (सम्बोधित) करते हुए यही मतलब यूं अदा किया गया है-

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَقُلِ الْحَقُّ مِنْ رَبِّكُمْ ۖ فَمَنْ شَاءَ فَلْيُؤْمِنْ وَمَنْ شَاءَ فَلْيَكْفُرْ ۚ إِنَّا أَعْتَدْنَا لِلظَّالِمِينَ نَارًا ۙ أَحَاطَ بِهِمْ سُرَادِقُهَا ۚ وَإِنْ يَسْتَغِيثُوا يُغَاثُوا بِمَاءٍ كَالْمُهْلِ يَشْوِي الْوُجُوهَ ۚ بِئْسَ الشَّرَابُ ۖ وَسَاءَتْ مُرْتَفَقًا ﴿٢٩﴾

अनुवाद-

और कह दीजिए, ''यह (कुर्आन) हक़ है, तुम्हारे रब की ओर से, तो जिसका जी चाहे ईमान लाए और जिस का जी चाहे इन्कार

करे,'' 'हमने' ज़ालिमों के लिए आग तैयार कर रखी है, जिसकी क़नातें उन को घेरे होंगी, और अगर वह फ़रियाद करेंगे, तो ऐसे पानी से उनकी फ़रियाद पूरी की जाएगी जो तेल की तलछट की तरह होगा, और चेहरों को भून डालेगा; कितना बुरा होगा वह पानी! और कैसी बुरी होगी वह जगह! (सूरः **कहफ़-२९**)

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

لَسْتَ عَلَيْهِمْ بِمُصَيْطِرٍ ﴿٢٢﴾

अनुवाद-

"आप उन पर दारोग़ा (निरीक्षक) नहीं हैं।" (सूरः **ग़ाशियः २२**)

ऊपर की आयतों की विभिन्न शैलियों में यह हक़ीक़त (तथ्य) वाज़ेह कर दी है कि पैग़म्बर का मक़ाम (स्थान) इसके सिवा कुछ नहीं है कि सच्चाई की पुकार बुलन्द करने वाला है, पयामें हक़ पहुँचा देने वाला है, नसीहत की बात समझा देने वाला है, ईमान-व-अ़मल के नताइज (परिणाम) की ख़ुशख़बरी (सुख संवाद) बता देना और इन्कार व बद्अ़मली (कुकर्म) के नतीजे से ख़बरदार कर देना, इससे ज़्यादा इसकी कोई ज़िम्मेदारी नहीं।

कुर्आन ने पिछली दअ़वतों (पैग़म्बरों की शिक्षाओं) की जितनी कथायें बयान की हैं, उन्हें पढ़ेंगे तो, हर जगह देखेंगे कि झगड़े की जड़ यही थी और ख़ुदा के रसूलों का हमेशा यही एलान हुआ कि हम नसीहत करने वाले हैं, मानना न मानना तुम्हारा काम है अगर नहीं मानते तो तुम अपनी राह चलो हमें अपनी राह चलने दो और देखो नतीजा क्या निकलता है लेकिन उनके मुन्किर (इन्कारी) कहते थे कि न तो हम तुम्हारी बात मानेंगे न तुम्हें तुम्हारी राह चलने देंगे...।

ज़ोर-ज़बरदस्ती और हिंसा

इस्लाम और उनके विरोधियों में जो झगड़ा शुरु हुआ वह यही था कि मुहम्मद (सल्ल०) कहते थे कि हमारी राह प्रचार और उपदेश की है। विराधी कहते थे हमारी राह ज़ोर-ज़बरदस्ती और हिंसा की है। मुहम्मद कहते थे अगर

मेरी बात समझ में आये तो मान लो, न समझ में आये तो मानने वालों को राह चलने दो। **वह कहते थे, "हमारी बात तुम्हारी समझ में आये या न आये तुम्हें माननी ही चाहिये, नहीं मानोगे तो जबरन मनवायेंगे।"**

समझाने-बुझाने का रास्ता-

ह़क़ीक़त यह है कि क़ुर्आन की आयतों में जो बात कह दी है अगर दुनिया उसे समझ लेती तो तमाम झगड़े ख़त्म हो जाते। ग़ौर कीजिए झगड़े की अस्ल बुनियाद क्या है, यही है कि लोग समझाने बुझाने और ज़ोर-ज़बरदस्ती में अन्तर नहीं करते। क़ुर्आन कहता है दोनों में अन्तर करो, समझाने की राह यह हुई कि जो बात ठीक समझते हो उसकी दूसरों को भी तर्ग़ीब (उभारो) दो मगर केवल समझा दो, इससे आगे न बढ़ो यानी यह बात न भूल जाओ कि पसन्द करने न करने का ह़क़ दूसरों को भी है तुम इसके लिए ज़िम्मेदार नहीं हो।

ज़ोर-ज़बरदस्ती की राह यह हुई कि डण्डा लेकर खड़े हो जाओ और जो कोई सहमत न हो, उसके पीछे पड़ जाओ गोया ख़ुदा ने आप को लोगों की हिदायत या गुमराही का ठेकादार बना दिया है जिसे क़ुर्आन साफ़-साफ़ कहता है कि ख़ुदा के रसूलों का पद भी समझाने-बुझाने के अन्दर सीमित था, ह़ालाँकि वह अल्लाह की ओर से नियुक्त थे तो फिर वह किसी दूसरे इन्सान के लिये यह कब सहन कर सकता है कि वह जब्र करे।

आस्था की स्वतंत्रता इस्लाम धर्म में

आ़माले इन्सानी (मानव-कर्म) के तमाम गोशों (भागों) में अस्ली सवाल सीमाओं का है, और हर जगह इन्सान ने इसी में ठोकर खाई है यानी हर बात की जो ह़द है उसके अन्दर नहीं रहना चाहता। एक ह़क़ प्रचार व प्रसार का है और एक उस की पसन्द का है। हर इन्सान को इसका ह़क़ है कि जिस बात को वह सह़ी समझता है उसे दूसरों को भी समझाये लेकिन इसका ह़क़ नहीं कि दूसरों के ह़क़ को छीने, जिस प्रकार उसे एक बात के मानने न मानने का ह़क़ है, ठीक उसी प्रकार दूसरे को भी इसका ह़क़ है और एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति

के लिए ज़िम्मेदार नहीं कि उसे ज़बरदस्ती रोके।

हमने ऊपर जिस बात को ह़क़ बताया है, क़ुर्आन उसे हर इन्सान का फ़र्ज़ क़रार देता है, यानी वह कहता है कि जिस बात को तुम सच समझते हो तुम्हारा फ़र्ज़ है कि उसे दूसरों तक पहुँचाओ। अगर इसमें कोताही करोगे तो ख़ुदा के आगे जवाबदेह होगे लेकिन साथ ही याद रखो फ़र्ज़ समझाना-बुझाना है, ज़बरदस्ती नहीं और जवाब देही इसमें है कि तुमने सच को पहुँचाया लोगों तक या नहीं, इसमें नहीं है कि दूसरों ने माना या नहीं।

क़ुर्आन का न्याय-

क़ुर्आन ने न्याय के साथ मामले के दोनों पहलुओं की ह़िफ़ाज़त की है और फिर उसके सीमाओं की रेखा खींच दी है, उसने एक ओर उपदेश और आह्वान पर ज़ोर दिया ताकि ह़क़ीक़त की मांग और स्थापना की रुह क्लान्त न हो। दूसरी ओर इन्सान की व्यक्तिगत स्वतंत्रता भी सुरक्षित कर दी, कि ज़ोर ज़बरदस्ती से बेजा हस्ताक्षेप न कर सके। यही सीमा है, जो यहाँ संतुलन की ह़ालत क़ायम रखता है। यह नहीं कि उसे अपनी जगह से इधर-उधर कर दिया जाए। दोनों में से कोई बात ज़रुर ग़लत हो जायेगी अगर प्रचार व प्रसार का क़दम ज़ोर-ज़बरदस्ती से आगे बढ़ेगा तो आस्था की आज़ादी बाक़ी नहीं रहेगी, अगर व्यक्तिगत आज़ादी की माँगें ह़द से बढ़ जाएँगी तो ह़क़ व अ़दालत ख़त्म हो जायेगा। यानी सत्य और न्याय की मांग और स्थापना की व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाएगी।

सड़ा हुआ अंग-

जिहाद कदापि यह नहीं है कि लोगों के गले पर तलवार रख कर कहा जाए कि मुसलमान हो जाओ वरना क़त्ल कर देंगे या उनको ज़बरदस्ती इस्लाम क़ुबूल करवा दिया जाए। जिहाद के साथ ही जिज़्या (अर्थात ग़ैर मुस्लिमों को अच्छी सुरक्षा हेतु कुछ टैक्स लेना) और उनके जान माल की रक्षा बल्कि मुसलमानों ही की तरह उन से व्यवहार करना।

यह इस बात की गवाही है कि इस्लाम ने कभी काफ़िरों को इस्लाम क़ुबूल करने पर बाध्य नहीं किया इस लिए एक स्वतन्त्र दिमाग़ रखने वाले के लिए आवश्यक है कि वह इस पर ग़ौर करे कि इस्लाम में जिहाद की फ़र्ज़ियत किस लिए हुई।

जिस प्रकार एक डाक्टर मालूम कर लेता है जो अपने फ़न का माहिर हो कि अब केवल मरहम लगाने से काम नहीं चल सकता बल्कि सड़े हुए अंग का आपरेशन करना ज़रुरी है वरना पूरा शरीर नष्ट हो जाएगा तो वह आपरेशन करता है ताकि उस का शरीर स्वस्थ हो जाए यह भावना मरीज़ को स्वस्थ करने की होती हैं।

इसी प्रकार जब मानव रुपी शरीर में ज़ुल्म के ज़हरीले जरासीम पैदा हो गये और वह एक मरीज़ शरीर की तरह हो गया तो अल्लाह तआ़ला ने इस के लिए एक रह़मदिल डाक्टर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को भेजा। जिन्होंने तिरपन साल तक लगातार इसके हर अंग और हर रंग व रेशा के सुधार की फ़िक्र की जिससे सुधरने वाले अंग तंदुरूस्त हो गये लेकिन जो अंग बिल्कुल सड़ चुके थे और उनको अच्छा होने का कोई उपाय न था, बल्कि ख़तरा हो गया था कि वह सड़ान उनके पूरे शरीर में फैल कर पूरा शरीर नष्ट कर दे, उस के लिए उस बीमारी को ख़त्म करना अनिवार्य हो गया था कि आपरेशन करके उस अंग को काट दिया जाये, यही जिहाद की वास्तविकता है।

युद्ध के मैदान में-

यही कारण है कि युद्ध के मैदान में भी इस्लाम ने अपने प्रतिद्वन्दी में से केवल उन्हीं लोगों के क़त्ल की अनुमति दी है जो इस्लाम के मिटाने की योजना बनाएँ और युद्ध के लिए आएँ मगर ऐसी दशा में भी इस्लाम ने स्त्रियों, बच्चों बूढ़ों और धार्मिक गुरुओं को क़त्ल न करने के उपदेश दिए हैं। यहाँ तक कि वह लोग भी जो किसी दबाव या मजबूरी से युद्ध क्षेत्र में लाये गये हों उन्हें भी क़त्ल न करने के उपदेश दिये हैं।

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया-

ह़ज़रत इकरमा (रज़ि०) कहते हैं कि 'गज़व-ए-बद्र' में हुज़ूर (सल्ल०) ने आदेश दिया था कि बनी हाशिम का यदि कोई व्यक्ति तुम्हारे सामने आये तो तुम उन्हें क़त्ल न करना क्योंकि वह अपनी ख़ुशी से युद्ध में शामिल नहीं हुए बल्कि उनको जबरन लाया गया है।

यहाँ तक कि मुक़ाबले पर आने वालों और जंग करने वालों में से भी, जिनके बारे में हुज़ूर (सल्ल०) को उसके अच्छे आचरण या समाज सुधारक की ख़बर मिलती तो उसे भी क़त्ल करने से रोक देते थे।

स्वस्थ समाज की स्थापना

इस्लामी जिहाद दुनिया की तमाम जंगों की तरह नहीं होते कि शहर के शहर बेरह़मी से तबाह व बर्बाद कर दिये जायें या जला दिये जायें या किसी को कष्ट पहुंचाया जाए बल्कि उसका उद्देश्य होता है कि एक अच्छे व स्वस्थ समाज की स्थापना के लिए यदि जान की क़ुर्बानी देनी पड़े तो वह भी दी जा सके।

परन्तु वास्तविकता यह है कि लोग दूसरे के आँखों का तिन्का तक देखते हैं और अपनी आंख का शहतीर (मोटी लकड़ी) भी नज़र अन्दाज़ कर देते हैं।

तलवार से लैस सिपाही-

अगर यह सच है कि इस्लाम सिर्फ़ तलवार के ज़ोर से फैला तो **'कारलायल'** के इस सवाल का क्या जवाब है कि-

"अगर मुह़म्मद (सल्ल०) ने तलवार से लैस सिपाहियों के ज़ोर से इस्लाम को फैलाया है तो <u>पहले उन तलवार से लैस सिपाहियों को किस तलवार से मुसलमान बनाया"।</u>

मुस्लिम क्यों-

इस उसूल की बिना पर तो चाहिए था कि उन मुल्कों में इस्लाम का साया भी न पड़ता जहाँ तलवार ने उस का साथ नहीं दिया। हालांकि सब को मालूम

है कि मुल्क हब्शा पर मुसलमानों ने कभी तलवार नहीं उठाई मगर आज वहाँ आधी आबादी मुसलमान है। 'अफ़्रीका' के उन इलाक़ों में जहाँ मुसलमान सिपाहियों का गुज़र भी नहीं हुआ था वहां मुसलमानों की इतनी बड़ी तादाद क्यों नज़र आती है, 'चीन' पर मुसलमानों ने हमला नहीं किया मगर चार करोड़ मुसलमान वहाँ कहाँ से आ गये।

मुसलमान हुक्मराँ न होने के बावजूद-

जज़ायर, मलाया में मुसलमान हुक्मराँ नहीं रहे मगर आज वहाँ चार करोड़ मुसलमान किस तरह पैदा हो गये?

थाईलैंड, फ़िलपाईन और दूसरे मुल्कों और जज़ीरों में जहाँ किसी मुसलमान सिपाहियों का क़दम भी नहीं पहुँचा, मगर इस्लाम का क़दम वहाँ कैसे पहुँच गया, तुर्क व तातार ने तो खुद मुसलमानों पर तलवार चलाई थी उन पर तलवार किस ने चलाई और उन को किस ने मुसलमान बनाया?.....

इसी तरह हिन्दुस्तान में भी इस्लाम की तरक़्क़ी उन्हीं तरीक़ों से हुई है जिन तरीक़ों से दुनिया में हर मज़हब की हुई है।

इस्लाम के विरोध का मुख्य कारण

ऊपर की पंक्तियों से यह बात साफ़ हो गयी कि इस्लाम ने किसी को तलवार के ज़ोर से मुसलमान नहीं बनाया, बल्कि इस्लाम की विशेषता की बिना पर लोग इस्लाम में दाख़िल होते गये, परन्तु वास्तविकता यह है कि इस्लाम के विरोध का मुख्य कारण 'ईर्ष्या और द्वेष' है, कि इतने कम समय में पूरी दुनिया में कैसे लोगों ने उसकी शिक्षाओं को स्वीकार कर लिया और दूसरा कारण अज्ञानता है।

पहला कारण ईर्ष्या-द्वेष

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से पूर्व देवी देवताओं के अतिरिक्त पशुओं, वृक्षों

और चांद, सूरज की पूजा हो रही थी। जिन वस्तुओं को परमेश्वर ने उसकी सेवा के लिए उत्पन्न किया था उसी के सामने माथा टेकने लगे थे। इस प्रकार सारा समाज पतित हो गया था मानवता नष्ट हो चुकी थी, अशिक्षा, अन्ध विश्वास, जुआ, लूटमार, व्याभिचार यहां तक कि पिता की मृत्यु के बाद सौतेली मां से विवाह तक कर लेते थे, मदिरा पान, झगड़ा-फ़साद, कन्या वध, धोखा-धड़ी, जुल्म, षडयन्त्र, स्त्रियों के साथ दुर्व्यवहार, गुलामों पर अत्याचार, अनाथों का ह़क़ मारा जाता और मानव को विभिन्न वर्गो में बांट दिया गया था।

अ़रब की नैतिकता-

अ़रब देश धार्मिक, सामाजिक और नैतिक दृष्टि से सभी देशों से अधिक पतन ग्रस्त हो गया था परन्तु महा ईशदूत ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) द्वारा सत्य शुद्ध धर्म का जो आन्दोलन आरम्भ हुआ, तो उसका स्वयं आपके कुल, जाति और देश ने पूरी शक्ति से विरोध किया, परन्तु २० वर्ष के प्रचार के फ़लस्वरूप उसी पीढ़ी में एकेश्वरवादी एवं धर्मात्मा पैदा हुए और अ़रब निवासियों को यह विश्वास हो गया कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) वास्तव में सच्चे महाईशदूत हैं।

आचरण भ्रष्ट देश-

इस प्रकार संसार का सबसे अधिक आचरण भ्रष्ट देश अ़रब, संसार के लिए धर्म और मानवता का देश बन गया और ऐतिहासिक चमत्कार में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने पापियों का नाश न करके पापियों के पाप का नाश किया।

अतः इस कहावत को ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने साकार कर दिखाया, सबसे अधिक आश्चर्य का विषय तो यह है कि **ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की मक्का विजय में एक भी प्राण की क्षति नहीं हुई।** ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और उनके अनुयाइयों ने अपने शत्रुओं के कर्मों का बदला लिए बिना छोड़ दिया जिसे देख कर पूरे मक्का निवासी इस्लाम की गोद में आ गये।

ऐतिहासिक चमत्कार-

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का जन्म ५७० ई० में हुआ, परन्तु सात सौ ई०

लगते-लगते इस्लाम ईराक़ और मध्य एशिया तक पहुँच गया, श्री रामधारी सिंह दिनकर अपनी पुस्तक 'संस्कृत के अध्याय चार' में लिखते हैं कि:-

"इतिहास में रोमन साम्राज्य की गरिमा बहुत विशाल समझी जाती है परन्तु उसके निर्माण में लगभग छः सौ वर्ष लगे थे और इस्लामी व्यापक साम्राज्य सौ वर्ष में ही फैल गया और ख़लीफ़ाओं ने इतना बड़ा साम्राज्य स्थापित किया कि सिकन्दर का साम्राज्य उसका एक अंग मात्र था ईरान ने प्रायः एक हज़ार साल तक पड़ोस में अपनी सत्ता क़ायम रखी थी किन्तु वह भी अ़रब के धर्म योद्धाओं के सामने टिक न सका और मुहम्मद (सल्ल०) की मृत्यु के १० वर्ष बीतते-बीतते ईरान पर अ़रब के मुसलमानों का क़ब्ज़ा हो गया और वहां के लोग मुसलमान हो गये।"

इस ह़क़ीक़त को देख कर विरोधियों को बड़ी ईर्ष्या होती है कि इतने कम समय में इस्लाम कैसे विश्वव्यापी रूप में फैल गया इसलिए इसको रोकने के लिए भ्रष्ट प्रचार किया जाए ताकि इस्लाम को फैलने से रोका जा सके।

दूसरा कारण अज्ञानता

इस्लाम के विषय में जो भ्रष्टाचार का प्रचार किया गया उसका एक कारण अनभिज्ञता है और वह यह कि इस्लाम धर्म को समझा यह जाता है कि यह तो अन्तिम धर्म है इससे पूर्व बहुत से धर्म इस धरती पर चल रहे थे जिसे ह़ज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने आकर तलवार के ज़रिये लोगों को उनके वास्तवित धर्म से छुड़ाकर एक नये धर्म की स्थापना कर दी।

जिस प्रकार विभिन्न धर्मो के प्रचारकों ने आकर उन्हें मूल धर्म से हटा कर अपना एक नया धर्म स्थापित कर दिया यहाँ तक कि इस्लाम से अनभिज्ञ लोग इस्लाम धर्म के प्रवर्तक ह़ज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को ही समझने लगे।

इन पंक्तियों को पढ़ने से आप को आश्चर्य अवश्य होगा परन्तु वास्तविकता यही है कि **इस्लाम धर्म के संस्थापक ह़ज़रत मुहम्मद (सल्ल०) नहीं हैं** बल्कि इस्लाम के संस्थापक ह़ज़रत आदम (अ़लै०) हैं और क़ुर्आन सम्पूर्ण रूप से क़ियामत तक के लिए तमाम मानव जाति को कल्याणकारी बनाने

का एक मात्र माध्यम है। अतः इस्लाम धर्म के अन्तिम सन्देष्टा ह़ज़रत मुहम्मद (सल्ल०) हैं। जिनके बाद अब न कोई संविधान आएगा और न कोई सन्देष्टा, आप ही सर्वश्रेष्ठ और अन्तिम महाईशदूत हैं। जिसे पवित्र क़ुर्आन में इस प्रकार कहा गया है:-

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

وَأَنْزَلْنَآ إِلَيْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ الْكِتٰبِ وَمُهَيْمِنًا عَلَيْهِ
فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ بِمَآ أَنْزَلَ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعْ أَهْوَآءَهُمْ عَمَّا جَآءَكَ مِنَ الْحَقِّ ۚ لِكُلٍّ جَعَلْنَا
مِنْكُمْ شِرْعَةً وَّمِنْهَاجًا ۚ وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَجَعَلَكُمْ أُمَّةً وَّاحِدَةً وَّلٰكِنْ لِّيَبْلُوَكُمْ فِيْ مَآ
اٰتٰىكُمْ فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرٰتِ ۚ إِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيْعًا فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ فِيْهِ تَخْتَلِفُوْنَ ۝

अनुवाद-

"और 'हमने' आप की ओर यह किताब ह़क़ के साथ उतारी है, जो उस किताब की तस्दीक़ करती है जो इसके पहले से मौजूद है और जो उसकी मुह़ाफ़िज़ (संरक्षक) है; और उनके बीच मामलों में आप वही फ़ैसला कीजिए जो अल्लाह ने उतारा है; और जो हक़ तुम्हारे पास आ चुका है उसे छोड़ कर उनकी इच्छाओं के पीछे न चलिएगा, 'हमने' तुममें से हर एक के लिए एक दस्तूर और एक तरीक़ा मुक़र्रर किया है, और अगर अल्लाह चाहता तो तुम सब को एक ही उम्मत (समुदाय) बना देता; लेकिन जो कुछ 'उसने' तुम्हें (हुक्म) दिया है उसमें वह तुम्हारा इम्तिह़ान लेना चाहता है, तो तुम भलाई के कामों में एक-दूसरे से आगे बढ़ो; तुम सब को अल्लाह ही की ओर लौट कर जाना है, फिर 'वह' तुम्हें बता देगा, जिसमें तुम इख़्तिलाफ़ करते थे;"

(सूरः माइदा ४८)

क़ुर्आन स्वंय पिछली तमाम आसमानी किताबों में जो कुछ था उसकी पुष्टि करता है, अतः किसी प्रकार का सन्देह नहीं रह जाता कि इस्लाम कोई नवीन धर्म है। बल्कि इस धरती पर केवल एक ही ईश्वरीय धर्म है जो प्रत्येक देशकाल में वहां के सन्देष्टानुसार जो कुछ ईश्वरीय ग्रन्थ में आता रहा उसे ईश्वरीय ज्ञान कहा जाता है। इस प्रकार सर्वप्रथम इस धरती पर जो व्यक्ति आया वह इस्लाम ही

लेकर आया अन्तर केवल यह है कि जो ईशदूत आता था वह अपनी-अपनी भाषा के अनुसार इस्लाम शब्द की व्याख्या करता रहा जिसकी पवित्र कुर्आन ने इस प्रकार पुष्टि की है।

وَلَقَدْ بَعَثْنَا فِي كُلِّ أُمَّةٍ رَّسُولًا أَنِ اعْبُدُوا اللَّهَ وَاجْتَنِبُوا الطَّاغُوتَ ۖ

अनुवादः-

और 'हमने' हर उम्मत (समुदाय) में रसूल भेजे कि, ''एक अल्लाह की इबादत (उपासना) करो, और शैतान (बुतों) से बचते रहो।

(सूरः नह्ल आयत नं० ३६)

इस से यह बात पूरी तरह स्पष्ट हो जाती है कि इसके पूर्व भी हर वर्ग और देश में सन्देष्टा आए परन्तु सभी सन्देश वाहकों ने यह भविष्यवाणी भी की कि मेरे बाद एक अन्तिम महाईशदूत होगा। जिस पर अन्तिम ईशवाणी अवतरित होगी जिसे स्वीकार किये बिना कोई कल्याणकारी नहीं बन सकता।

इस प्रकार वेदों और तौरेत, इन्जील, आदि पुस्तकों में हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के विषय में कहीं 'नरशंस' के नाम से कहीं 'पैरा-क्लीट" और 'फ़ार-क्लीत' के नाम से उल्लेख मिलता है जिसे पढ़ कर बहुत से लोगों ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को पहचाना, जिस पर पंडित वेद प्रकाश उपाध्याय जी ने एक पुस्तक "वेदों के अन्तिम ऋषि नरशंस और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०)" और 'कल्कि अवतार' नाम से लिखी हैं।

जिसमें स्पष्ट रूप से सिद्ध किया है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ही अन्तिम महाईशदूत हैं।

इन प्रमाणों के बाद अब कोई शंका नहीं रह जाती कि इस्लाम धर्म कोई नवीन धर्म है बल्कि यही धर्म सबसे पहला और अन्तिम धर्म है जिसे इन्सान अपनाकर सदाचारी और कल्याणकारी बन सकता है।

भाग-2

इस्लाम का प्रचार व प्रसार

कुर्आन की दृष्टि में

कुर्आन का आदेश इस्लाम स्वीकार करने के विषय में

इस्लाम धर्म उदारता की शिक्षाओं से ओत प्रोत है। महाईशदूत ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का समस्त जीवन उदारतापूर्ण घटनाओं से परिपूर्ण है। इसी प्रकार उनके अनुनाइयों का पूरा इतिहास साक्षी है। महाईशदूत के वचन और सुकथन ऐसे आदेशों से भरे पड़े हैं। सबसे पहले हम इस्लाम धर्म के संविधान पवित्र कुर्आन, जो ईशवरीय वाणी है उसका उल्लेख करते हैं जिससे उसकी उदारता का अनुमान लगाया जा सकता है, पवित्र कुर्आन में है-

कुर्आन के अनुसार इस्लाम के प्रचार का तरीक़ा

अ़ल्लामा सय्यद सुलेमान नदवी (रह़०) अपने मक़ाला **"हिन्दुस्तान में इस्लाम की इशाअ़त क्योंकर हुई"** में लिखते हैं।

"तमाम दुनिया के मज़ाहिब में केवल इस्लाम ही एक ऐसा मज़हब है जिस ने यह फ़ल्सफ़ा दुनिया में ज़ाहिर किया कि **मज़हब यक़ीन का नाम है और यक़ीन तलवार की धार और नेज़े की नोक से नहीं पैदा किया जा सकता।"**

दारोग़ा नहीं

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

لَسْتَ عَلَيْهِمْ بِمُصَيْطِرٍ ﴿٢٢﴾ आप उन पर दारोगा (निरीक्षक) नहीं हैं।

(सूरः ग़ाशियः २२)

पैग़म्बर का काम ज़बरदस्ती नहीं बल्कि सिर्फ़ दअ़वते तब्लीग़ है-

बात पहुँचाने की ज़िम्मेदारी

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

فَإِنْ أَعْرَضُوا فَمَا أَرْسَلْنَاكَ عَلَيْهِمْ حَفِيظًا ۖ إِنْ عَلَيْكَ إِلَّا الْبَلَاغُ ۗ وَإِنَّا إِذَا أَذَقْنَا الْإِنْسَانَ مِنَّا رَحْمَةً فَرِحَ بِهَا ۖ وَإِنْ تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ بِمَا قَدَّمَتْ أَيْدِيهِمْ فَإِنَّ الْإِنْسَانَ كَفُورٌ ﴿٤٨﴾

अब भी अगर यह ध्यान में न लाएँ तो 'हमने' तो आप को उन पर कोई संरक्षक बनाकर नहीं भेजा, आप पर तो केवल पहुँचा देने की ज़िम्मेदारी है, और जब 'हम' इन्सान को अपनी ओर से किसी रह़मत का मज़ा चखाते हैं तो वह उस पर इतराने लगता है, और अगर उसके करतूतों की वजह से कोई मुसीबत उस पर आती है तो वह नाशुक्री करने लगता है। (सूरः शूरा ४८)

अच्छी नसीह़त

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

ادْعُ إِلَىٰ سَبِيلِ رَبِّكَ بِالْحِكْمَةِ وَالْمَوْعِظَةِ الْحَسَنَةِ وَجَادِلْهُمْ بِالَّتِي هِيَ أَحْسَنُ ۚ إِنَّ رَبَّكَ هُوَ أَعْلَمُ بِمَنْ ضَلَّ عَنْ سَبِيلِهِ وَهُوَ أَعْلَمُ بِالْمُهْتَدِينَ ﴿١٢٥﴾

लोगों को अपने 'रब' की राह की ओर बुलाइए, ह़िकमत से और अच्छी नसीह़त से, और उनके साथ नसीह़त कीजिए तो अच्छे तरीक़े से, और आप का 'रब' उसे भली भाँति जानता है जो 'उसकी' राह से भटक गया, और 'वह' उन्हें भी भली भाँति जानता है जो राह पर हैं।

(सूरः नह़्ल १६)

धर्म में ज़बरदस्ती नहीं

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

لَا إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ ۖ قَد تَّبَيَّنَ الرُّشْدُ مِنَ الْغَيِّ

अनुवाद-

"दीन (धर्म) के विषय में कोई ज़बरदस्ती नहीं हिदायत तो गुमराही से साफ़-साफ़ खुल चुकी है **(सूर बकरः आयत २५६)**

व्याख्या- इससे मालूम हुआ कि ज़बरदस्ती किसी को मुसलमान बनाना इस्लाम के विरूद्ध है और इस ईशवरीय आज्ञा का उल्लंघन करना महापाप है।

ह़ज़रत मुह़म्मदुर्रसूलुल्लाह (सल्ल०) के चाचा, ह़ज़रत अ़ब्बास के बेटे ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह (रज़ि०) जो कुर्आन के प्रमाणित आचार्य थे, उनके द्वारा एक कथा वर्णित की गयी है जिसका आशय यह है कि अंसार (मदीना की प्रसिद्व जाति) में से एक आदमी के दो बेटे ईसाई हो गये, तो उन्होंने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से कहा कि मेरे बेटे ईसाई मत को छोड़ने पर राज़ी नहीं होते तो क्या मैं उनको बाध्य कर सकता हूँ इस पर यह आयत उतरी जो ऊपर उद्धृत है।

'अल्लामा इब्ने कसीर' कुर्आन के महान प्रमाणित आचार्य माने गये हैं। उन्होंने इस आयत की व्याख्या करते हुए जो कुछ लिखा है उसका आश्य यह है कि-

किसी व्यक्ति को इस्लाम में दाख़िल होने पर विवश न करो क्योंकि वह प्रकट और स्पष्ट है और उसकी उक्तियां और प्रमाण इतने दिव्य हैं कि किसी व्यक्ति का इसमें प्रविष्ट होने पर बाध्य करने की ज़रुरत नहीं है। अल्लाह ने जिस व्यक्ति को ह़िदायत दी हो और जिसका ह़दय सत्य को स्वीकार करने के लिए खोल दिया हो और जिसको ज्ञान की ज्योति प्रदान की हो वह स्पष्ट प्रमाण के कारण ख़ुद इस्लाम को स्वीकार करेगा और जिसके दिल में ख़ुदा ने अंधकार कर दिया हो और जिसकी सुनने और देखने की शक्तियों पर मुहर लगा दी हो उसको बल और हिंसा द्वारा इस्लाम में दाख़िल करना उसे कोई काम न देगा। (तफ़्सीर इब्ने कसीर)

इसी प्रकार इमाम फ़ख़रुद्दीन राज़ी (रह़०) ने अबूमुस्लिम अस्फ़हानी का कथन लिखा है जिसका आश्य यह है-

ख़ुदा ने दीन के कार्य को ज़बरदस्ती पर निर्भर नहीं रखा है बल्कि अधिकार और अख़्तियार पर रखा है। इस प्रकार कुर्आन की कई आयतों से प्रमाण मिलता है जिसमें ज़बरदस्ती इस्लाम स्वीकार करवाने से मना किया गया है। जैसे-

जो अ़मल करेगा अपने ही लिए

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

قُلْ يٰٓاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَآءَكُمُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّكُمْ ۚ فَمَنِ اهْتَدٰى فَاِنَّمَا يَهْتَدِيْ لِنَفْسِهٖ ۚ وَمَنْ ضَلَّ فَاِنَّمَا يَضِلُّ عَلَيْهَا ۚ وَمَآ اَنَا عَلَيْكُمْ بِوَكِيْلٍ

अनुवाद-

कह दीजिए, "ऐ लोगो! तुम्हारे रब की ओर से तुम्हारे पास ह़क़ आ गया है, तो अब जो कोई राह पर आएगा, तो वह अपने लिए ही आएगा, और जो कोई गुमराह (पथभ्रष्ट) होगा तो वह अपने ही लिए गुमराह होगा, और मैं तुम्हारा वकील (ज़िम्मेदार) नहीं हूँ।" **(सूरः यूनुस, आयत नं० १०८)**

इस प्रकार पवित्र कुर्आन में कई स्थान पर कहा गया है जिससे स्पष्ट हो जाता है कि इस्लाम या दीन (धर्म) समझने बूझने, और समझ-बूझ कर ग्रहण करने का मामला है। इसमें न किसी प्रकार की ज़बरदस्ती है और न ही किसी प्रकार का झगड़ा।

जिसका जी चाहे माने या न माने

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَقُلِ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّكُمْ ۟ فَمَنْ شَآءَ فَلْيُؤْمِنْ وَّمَنْ شَآءَ فَلْيَكْفُرْ ۚ

अनुवादः-

"और कह दीजिए, "यह (कुर्आन) हक़ है, तुम्हारे रब की ओर से, तो जिसका जी चाहे ईमान लाए और जिस का जी चाहे इन्कार करे।" **(सूरः कहफ़, आयत २९)**

कामों का बदला

एक स्थान पर अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

لَكُمْ دِيْنُكُمْ وَلِيَ دِيْنِ

अनुवादः-

"तुम अपने दीन पर, मैं अपने दीन पर!"

(अर्थात तुमको तुम्हारे कर्मो का बदला मिलेगा और मुझ को मेरे कर्मो का बदला मिलेगा)। " (सूरः काफ़िरून आयत ६)

ऊपर की आयतों से स्पष्ट हो जाता है कि किसी व्यक्ति के लिए किसी धर्म विशेष में आने से इन्कार करने पर उससे लड़ाई झगड़ा, युद्ध एवं रक्त पात या ज़ोर ज़बरदस्ती करने की आवश्यकता नहीं, बल्कि नसीह़त करके उसे उसके रास्ते पर छोड़ दिया जाएगा। इसी प्रकार एक दो नहीं बीसों आदेश मौजूद हैं। जिनके पढ़ने के बाद किसी व्यक्ति को कोई शक नहीं रह जाता कि धर्म के भेदभाव के कारण कोई मुसलमान किसी पर अत्याचार करे या ज़ोर ज़बरदस्ती से काम ले जिसे स्वंय पवित्र कुर्आन में एक और स्थान पर अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

कट्टरता, ज़बरदस्ती-नहीं

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَلَوْ شَآءَ رَبُّكَ لَاٰمَنَ مَنْ فِي الْاَرْضِ كُلُّهُمْ جَمِيْعًا ۭ اَفَاَنْتَ تُكْرِهُ النَّاسَ حَتّٰى يَكُوْنُوْا مُؤْمِنِيْنَ

अनुवादः-

और अगर तुम्हारा रब चाहता तो धरती के ऊपर जितने लोग हैं सब के सब ईमान ले आते, तो क्या तुम लोगों पर ज़बर्दस्ती करना चाहते हो कि वे ईमान वाले हो जाएँ? (सूरः यूनुस ९९)

इससे बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि धर्म के सम्बन्ध में कट्टरता या ज़्यादती को उचित समझना। किसी भी प्रकार से कुर्आ़न या इस्लाम आज्ञा नहीं देता है।

सीधी राह

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَالَّذِيْنَ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا صُمٌّ وَّبُكْمٌ فِي الظُّلُمٰتِ ۭ مَنْ يَّشَاِ اللّٰهُ يُضْلِلْهُ ۭ وَمَنْ يَّشَاْ يَجْعَلْهُ عَلٰي صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ

अनुवादः-

और जिन लोगों ने हमारी आयतों को झुठलाया; वे बहरे और गूँगे हैं, अन्धेरों में पड़े हुए हैं; अल्लाह जिसे चाहे भटका दे और जिसे चाहे सीधी राह पर लगा दे। (सूरः अनआ़म, आयत नं० ३९)

किसी को बुरा न कहो

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ مَآ اَشْرَكُوْا ۭ وَمَا جَعَلْنٰكَ عَلَيْهِمْ حَفِيْظًا ۚ وَمَآ اَنْتَ عَلَيْهِمْ بِوَكِيْلٍ وَلَا تَسُبُّوا الَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ فَيَسُبُّوا اللّٰهَ عَدْوًۢا بِغَيْرِ عِلْمٍ

अनुवादः-

और अगर अल्लाह चाहता, तो यह लोग शिर्क़ न करते; और 'हमने' आपको उन पर निगहबान (संरक्षक) मुक़र्रर नहीं किया और न आप उनके कोई ज़िम्मेदार ही हैं; और जिन लोगों को यह मुश्रिक अल्लाह के सिवा पुकारते हैं, उनको बुरा न कहना! यह भी कहीं अल्लाह को बेअदबी से बिना समझे-बूझे बुरा न कह बैठें।

(सूरः अनआ़मः १०७-१०८)

वह जानता है

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

اِنَّ رَبَّكَ هُوَ اَعْلَمُ مَنْ يَّضِلُّ عَنْ سَبِيْلِهٖ ۚ وَهُوَ اَعْلَمُ بِالْمُهْتَدِيْنَ

अनुवादः-

"आप का 'रब' उन्हें अच्छी तरह जानता है जो उसके रास्ते से भटकता है और वह उन्हें भी जानता है जो सीधी राह पर हैं।"

(सूरः अनआ़मः ११७)

अपना-अपना ह़िसाब

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَاِنْ كَذَّبُوْكَ فَقُلْ لِّيْ عَمَلِيْ وَلَكُمْ عَمَلُكُمْ ۚ اَنْتُمْ بَرِيْۗـُٔوْنَ مِمَّآ اَعْمَلُ وَاَنَا بَرِيْۗءٌ مِّمَّا تَعْمَلُوْنَ

अनुवादः-

और अगर यह आप को झुठलाएँ, तो कह दीजिए, ''मेरा किया मेरे लिए और तुम्हारा किया तुम्हारे लिए; तुम मेरे काम के ज़िम्मेदार नहीं और मैं तुम्हारे काम का ज़िम्मेदार नहीं हूँ।

(सूरः यूनुस आयत नं० ४१)

हक़ की पहचान

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَمَا كَانَ لِنَفْسٍ اَنْ تُؤْمِنَ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ ۚ وَ يَجْعَلُ الرِّجْسَ عَلَى الَّذِيْنَ لَا يَعْقِلُوْنَ ۝

अनुवादः-

"और किसी व्यक्ति के लिए यह सम्भव नहीं, कि अल्लाह की इजाज़त के बिना ईमान ले आए, और उन लोगों पर गन्दगी डाल देता है जो अक़्ल से काम नहीं लेते। " (सूरः यूनुस १००)

भलाई या बुराई अपने ही लिए

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

اِنْ اَحْسَنْتُمْ اَحْسَنْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ ۖ وَاِنْ اَسَاْتُمْ فَلَهَا ۚ

अनुवादः-

''अगर तुमने भलाई की तो अपने ही लिए की और अगर तुमने बुराई की तो अपने ही लिए की।" (सूरः बनी इस्राईल ७)

आ़माल का बदला

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

قُلْ لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا يَغْفِرُوْا لِلَّذِيْنَ لَا يَرْجُوْنَ اَيَّامَ اللّٰهِ لِيَجْزِيَ قَوْمًا بِمَا كَانُوْا يَكْسِبُوْنَ ۝

अनुवादः- जो लोग ईमान लाए उनसे कह दीजिए, "जो लोग अल्लाह के दिनों

की (जो आ़माल के बदले के लिए तय है) उम्मीद नहीं रखते उनसे दरगुज़र करें, ताकि 'वह' उन लोगों को उनके आ़माल का बदला दे।" (सूरः जासिया, १४)

ईशदूत का काम लोगों को वास्तविकता से परिचित करा देना है उसको ज़बरदस्ती मनवाना नहीं।

रसूल के ज़िम्मे पैग़ाम पहुँचाना

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

اِنَّمَا عَلَى رَسُوْلِنَا الْبَلٰغُ الْمُبِيْنُ ۝

अनुवादः-

बेशक रसूल के ज़िम्मे तो केवल पैग़ाम को खोल कर पहुँचा देना है। (सूरः माइदा ६२)

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

فَاِنْ اَعْرَضُوْا فَمَاۤ اَرْسَلْنٰكَ عَلَيْهِمْ حَفِيْظًا ۭ اِنْ عَلَيْكَ اِلَّا الْبَلٰغُ ۭ

अनुवादः-

"अब भी अगर यह ध्यान में न लाएँ तो 'हमने' तो आप को उन पर कोई संरक्षक बनाकर नहीं भेजा, आप पर तो केवल पहुँचा देने की ज़िम्मेदारी है", (सूरः शूरा, आयत नं० ४८)

व्याख्या-

क्या पवित्र क़ुर्आन की ऊपर दी गई इन आयतों के बाद भी किसी को शंका रह जाएगी कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने या बाद के मुसलमानों ने इस्लाम को तलवार के ज़रिए या बलपूर्वक लोगों को स्वीकार कराया है। जबकि इन आयतों में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से साफ़-साफ़ शब्दों में कहा गया है कि आप किसी पर निगेहबान (संरक्षक) बनाकर नहीं भेजे गये हैं बल्कि आप का काम केवल लोगों तक सन्देश पहुँचा देना है।

इसके बाद क्या ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) या उनके मानने वाले क़ुर्आन का

अर्थात ईशवाणी का इन्कार या इसका विरोध कर सकते हैं। यदि कोई इसके विरुद्ध करेगा तो स्वार्थ के लिए करेगा उसका इस्लाम से कोई सम्बन्ध नहीं।

ऊपर की आयतों में यह भी जगह-जगह बता दिया गया है कि जो व्यक्ति ईशवरीय वाणी या महामान्य ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) या उनकी शिक्षाओं को ग्रहण करेगा तो वह किसी दूसरे को लाभ नहीं पहुंचाएगा बल्कि स्वयं उसका ही लाभ होगा।

इस प्रकार की और बहुत सी आयतें पवित्र कुर्आन में मौजूद हैं। जिसमें कहा गया है कि धार्मिक स्वतन्त्रता प्रत्येक व्यक्ति को दी गई हैं चाहे स्वीकार करे और चाहे इन्कार, स्वीकार करने पर ईश्वर लोक-परलोक में उसकी मदद का और अच्छे कार्यो के अनुसार फल देने का वादा करता है परन्तु किसी को बाध्य नहीं करता।

भाग-3

इस्लाम के प्रचार व प्रसार का प्रभाव

इन्सानी दुनिया पर

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के समय में इस्लाम के फैलने का माध्यम

इस्लाम के विषय में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के जीवन में कोई एक घटना नहीं मिलती कि आपने किसी को ज़बरदस्ती इस्लाम क़ुबूल करवाया हो। इसके विपरीत कोई आप (सल्ल०) के आचरण व व्यवहार से इस्लाम स्वीकार करता कोई आप को देखकर, कोई पवित्र क़ुर्आन की वाणी सुनकर इस्लाम क़ुबूल कर लेता और कुछ लोग आप (सल्ल०) के भाषण से प्रभावित होकर इस्लाम क़ुबूल कर लेते इसलिए कि इस्लाम के स्वीकार और अस्वीकार करने का सम्बन्ध कोमल हृदय से होता है न कि ऊपरी बनाव सिंहार से। अब हम कुछ नमूने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के समय का आप के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं जिससे अन्दाज़ा हो जाएगा कि इस्लाम कैसे फैला?

ह़ज़रत उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) का इस्लाम-

एक बार ह़ज़रत उ़मर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को क़त्ल करने के लिए तलवार हाथ में लेकर निकले, कि मैं ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को आज क़त्ल कर के रहूँगा इसलिए कि वह हमारी पुरानी आस्थाओं का खण्डन करते हैं। परन्तु जब पवित्र क़ुर्आन की चन्द आयतें सुनीं तो उनका दिल पिघल गया और इस्लाम क़ुबूल कर लिया। **(मिश्कात)**

ह़ज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी (रज़ि०) का इस्लाम-

"ह़ज़रत अबूज़र गिफ़ारी (रज़ि०) ने अपने भाई से क़ुर्आन मजीद के प्रभाव को सुना तो मुह़म्मद (सल्ल०) की ख़िदमत में पहुँचे और सच्चे दिल से इस्लाम स्वीकार कर लिया।" **(बुख़ारी, फ़ज़ाइल अबूज़र)**

ह़ज़रत उस्मान बिन मज़ऊन (रज़ि०) का इस्लाम-

إِنَّ اللَّهَ يَأْمُرُ بِالْعَدْلِ وَالْإِحْسَانِ وَإِيتَاءِ ذِي الْقُرْبَىٰ وَيَنْهَىٰ عَنِ الْفَحْشَاءِ وَالْمُنكَرِ وَالْبَغْيِ ۚ يَعِظُكُمْ لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُونَ ﴿٩٠﴾

अनुवादः-

"अल्लाह हुक्म देता है न्याय का, और भलाई का और नातेदारों को (उनके हक़) देने का और बेह़याई, बुराई और सरकशी से रोकता है, 'वह' तुम्हें नसीह़त करता है ताकि तुम ध्यान दो।" **(सूरः नह़्ल आयत नं० ९०)**

इन आयतों को सुन कर स्वयं जो उनके दिल पर प्रभाव पड़ा वह लिखते हैं "यह वह समय था जब ईमान मेरे दिल में बैठ गया और मैं मुह़म्मद (सल्ल०) से मुह़ब्बत रखने लगा" **(मुस्नद इब्ने ह़म्बल, भाग एक ३१८)**

ह़ज़रत ज़ुबैर बिन मुतइम (रज़ि०) का इस्लाम-

أَمْ خُلِقُوا مِنْ غَيْرِ شَيْءٍ أَمْ هُمُ الْخَالِقُونَ ﴿٣٥﴾ أَمْ خَلَقُوا السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ ۚ بَل لَّا يُوقِنُونَ ﴿٣٦﴾ أَمْ عِندَهُمْ خَزَائِنُ رَبِّكَ أَمْ هُمُ الْمُصَيْطِرُونَ ﴿٣٧﴾

अनुवादः-

"क्या ये किसी के पैदा किये बिना पैदा हो गये हैं या ख़ुद ही अपने को पैदा करने वाले हैं? या आसमानों और ज़मीन को इन्होंने पैदा किया है?- (नहीं,) बल्कि ये यक़ीन ही नहीं रखते; क्या इनके पास आप के 'रब' के ख़ज़ाने हैं? या इन पर उनका क़ब्ज़ा है?" **(सूरः तूर आयत नं० ३५-३७)**

यह सुन कर वह स्वयं कहते हैं कि मेरा दिल उड़ने लगा और इस्लाम क़ुबूल कर लिया। **(बुख़ारी)**

इसी प्रकार ताइफ़ के सफ़र में ह़ज़रत ख़ालिद अल् अद्वानी (रज़ि०) ने आपकी ज़बान से यह आयत सुनी-

وَالسَّمَاءِ وَالطَّارِقِ ﴿١﴾ وَمَا أَدْرَاكَ مَا الطَّارِقُ ﴿٢﴾ النَّجْمُ الثَّاقِبُ ﴿٣﴾

अनुवाद-

"आसमान की क़सम, और (उस तारे की) जो रात में नमूदार (उदय)

होता है।" **(सूरः तारिक़, आयत १)**

यह सुनते ही पूरी सूरः याद कर ली और तुरन्त इस्लाम क़ुबूल कर लिया।

(मुस्नद अह़मद भाग ४, पेज ३३५)

इसी प्रकार कभी-कभी पूरा का पूरा एक गुट और जमाअ़त आती और क़ुर्आन सुन कर इस्लाम क़ुबूल कर लेती जैसे-

"ह़ज़रत अबू उबैदह (रज़ि०), ह़ज़रत अबूसलमः (रज़ि०) ह़ज़रत अरक़म बिन अरक़म (रज़ि०), और ह़ज़रत उ़स्मान बिन मज़ऊन (रज़ि०) जब यह लोग आप की ख़िदमत में ह़ाज़िर हुए तो आप ने इस्लाम समझाया और क़ुर्आन का पाठ सुनाया जिस का परिणाम यह हुआ कि यह तमाम लोग मुसलमान हो गये।"

(असदुल्ग़ाबा, तज़किरः अबूसल्मा बिन अ़ब्दुल् असद)

इसी प्रकार क़ुर्आन में ईरानियों के मुक़ाबले में रूमियों की फ़तेह़ की जो भविष्यवाणी थी वह पूरी हुई तो बहुत से लोगों ने इस्लाम क़ुबूल किया।

(तिमिर्ज़ी, किताबुत्तफ़्सीर सूरः रूम)

आचरण से प्रभावित होकर इस्लाम

एक बार एक व्यक्ति ने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से बहुत सी बकरियाँ माँगी आप (सल्ल०) ने उस का सवाल पूरा किया इस से प्रभावित होकर उसने अपने परिवार वालों को बताया, कि लोगों मुसलमान हो जाओ क्योंकि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) इतना अ़ता करते हैं कि उनको अपने फ़क़ीर हो जाने का भी डर नहीं होता। **(मुस्लिम, किताबुल् फ़ज़ाइल)**

एक यहूदी का इस्लाम-

एक बार आप (सल्ल०) ने एक यहूदी आ़लिम से क़र्ज़ लिया अभी अदा करने की तारीख़ भी नहीं आयी थी कि आकर इतना तंग किया कि जुह़ से फ़ज्र हो गयी तो सह़ाबा ने उसे धमकियां दीं। लेकिन आप (सल्ल०) ने कहा, "अल्लाह ने मुझे ग़ैर मुस्लिम काफ़िरों पर अत्याचार करने की अनुमति नहीं दी है।" (इतना सुनने के बाद) दिन चढ़ते-चढ़ते उसने इस्लाम क़ुबूल कर लिया और कहा मेरा

आधा माल अल्लाह के लिए दान है। आपको तंग करने में मेरा यह मक़सद था कि तौरात में आपके जिन गुणों या विशेषताओं का उल्लेख है उन का तजर्बा करूँ।

(मिश्कात, किताबुल् फ़ितन)

सुमामः बिन आसाल का इस्लाम-

इसी प्रकार सुमामः बिन आसाल गिरफ़्तार होकर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के पास आए लेकिन जब आपने उनको बिना किसी शर्त व बिना किसी मुआ़विज़ा के रिहा कर दिया तो उन्होंने तुरन्त इस्लाम क़ुबूल कर लिया। **(मुस्लिम)**

ह़ज़रत ह़ारिस बिन अ़ब्दुल् उज्ज़ः का इस्लाम-

ह़ज़रत ह़लीमा के पति अर्थात आपके रज़ाई भाई के वालिद जब मक्का आये तो क़ुरैश ने कहा कि कुछ सुना है तुम्हारा बेटा कहता है कि "लोगों को मरने के बाद फिर जीना होगा।"

उन्होंने आप से कहा, "बेटा यह क्या कहते हो"? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अगर वह दिन आया तो मैं आप का हाथ पकड़ कर बताऊँगा कि जो कुछ मैं कहता था सच था। यह सुनकर वह तुरन्त मुसलमान हो गये और इन शब्दों का प्रभाव उमर भर रहा, कहा करते थे कि "मेरा बेटा हाथ पकड़ेगा तो जन्नत में पहुँचा कर ही छोड़ेगा। **(तज़किरः ह़ज़रत ह़ारिस बिन अ़ब्दुल् उज्जः)**

ह़ज़रत अबू राफ़ेअ़ (रज़ि०) का इस्लाम-

बहुत से लोगों ने तो केवल आप (सल्ल०) को देख कर ही आप की नुबूवत का एतिराफ़ कर लिया। ह़ज़रत अबू राफ़ेअ़ (रज़ि०) आप की सेवा में क़ुरैश-ए-मक्का की ओर से एलची बन कर आये थे लेकिन आप की नज़र पड़ते ही इस्लाम क़ुबूल कर लिया। **(अबूदाऊद, किताबुल् जिहाद)**

इसी प्रकार अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम (रज़ि०) को आप (सल्ल०) का चेहरा देखते ही यक़ीन हो गया कि झूठे आदमी का चेहरा ऐसा नहीं हो सकता, और तुरन्त इस्लाम क़ुबूल कर लिया। **(तिर्मिज़ी, अबवाबुज्जुह़्द)**

इस्लाम के प्रचार का प्रभाव

अधिकतर लोग इस्लाम के प्रचारक ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और उनके सह़ाबा के आचरण से प्रभावित होकर इस्लाम क़ुबूल करते थे, बहुत से लोगों ने ह़ज़रत अबूबक्र (रज़ि०) के प्रभाव से इस्लाम स्वीकार किया और यमन के लोग ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) के आचरण व व्यवहार से प्रभावित होकर इस्लाम ले आये इसी प्रकार ह़ज़रत तुफ़ैल (रज़ि०) ने अपने क़बीले के बहुत से लोगों को मुसलमान किया 'क़बीला ह़मदान' ह़ज़रत आ़मिर बिन सहर के प्रभाव से इस्लाम क़ुबूल किया और ह़ज़रत 'अबूज़र ग़िफ़ारी' का आधा क़बीला उनसे प्रभावित होकर मुसलमान हुआ।

आप (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) के चमत्कार का प्रभाव

एक बार एक सफ़र में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से सह़ाबा ने प्यास की शिकायत की तो आप ने दो आदमियों को पानी तलाश करने के लिए भेजा, तो एक सवारी पर सवार बुज़ुर्ग ने पानी आप (सल्ल०) की सेवा में उपस्थित किया, आप(सल्ल०) ने एक बर्तन मंगवाया और उसमें दोनों मशकों से पानी डाल कर मशकों के दहाने बन्द कर दिये और आम एलान कर दिया कि सब लोग पानी पी लें। इस प्रकार सभी लोगों ने पानी पी लिया लेकिन मशक़ों के पानी में कोई कमी नहीं आई, उस स्त्री ने यह चमत्कार देखा तो अपने क़बीले में आ कर बताया कि ख़ुदा की क़सम आसमान व ज़मीन के मध्य यह व्यक्ति अजूबा रोज़गार और ख़ुदा का सच्चा ईशदूत (पैग़म्बर) है। **(बुख़ारी शरीफ़, किताबुत्तमीम बाबुस्सईदुत्तय्यिब)**

इसी प्रकार जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) हिजरत करके मदीना आये तो ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन सलाम (रज़ि०) आप की सेवा में उपस्थित हुए और कुछ भविष्यवाणियों और ग़ैबी चीज़ों के विषय में प्रश्न किया तो आप (सल्ल०) ने उनके उत्तर दिये, जिस से उन्होंने इस्लाम क़ुबूल कर लिया।

(बुख़ारी शरीफ़, बाब हिजरतुन्नबी सल्ल०)

इसी प्रकार जब फ़तेह़ मक्का के बाद आप (सल्ल०) ने ह़ज़रत ख़ालिद को बनू ज़मीमा की ओर भेजा तो साफ़ हिदायत कर दी थी कि केवल इस्लाम का सन्देश पहुँचाना मक़सद है जंग नहीं, इसके बावजूद ह़ज़रत ख़ालिद ने जंग किया जिसे आप (सल्ल०) ने बहुत ना पसंद फ़रमाया और कअ़बः की ओर खड़े होकर फ़रमाया-

"ऐ ख़ुदा! ख़ालिद ने जो कुछ किया उस की ज़िम्मेदारी मुझ पर नहीं है।" फिर आपने ख़ून का बदला अदा करने के लिए ह़ज़रत अ़ली को भेजा और उन्होंने एक-एक बच्चे यहां तक कि कुत्तों तक के ख़ून का बदला अदा किया।"

(तारीख़ तबरी, भाग ३)

क़बील-ए-दौस का इस्लाम

तुफ़ैल बिन अ़म्रअद्दौसी अ़रब का मशहूर शायर था, चूंकि अ़रब में शायरों का असर बहुत था। यानी वह क़बीले के क़बीले को जिधर चाहते थे, उधर कर देते थे। इसलिए कुरैश ने कोशिश की कि वह किसी तरह़ ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ख़िदमत में पहुँच जाए, लेकिन एक बार जब उस ने इत्तिफ़ाक़िया ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को क़ुर्आन मजीद पढ़ते सुना तो मुसलमान हो गया। **(ज़रक़ानी)**

और उस के असर से इसी ज़माने में क़बीले दौस में भी इस्लाम फैलने लगा।

(सह़ी मुस्लिम, किताबुल् ईमान से यह मफ़हूम होता)

इस पर आ़म क़बीले ने तुफ़ैल की दअ़वत क़ुबूल न की तो वह रंजीदा होकर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के पास आये और अ़र्ज़ किया, "या रसूलल्लाह! दौस ने नाफ़रमानी की उन को बद्दुआ़ कीजिए।" आप ने हाथ उठा कर दुआ़ मांगी कि ख़ुदा दौस को हिदायत दे, और उन को भेज, उस के बाद सारा क़बीला मुसलमान हो गया। **(सह़ी बुख़ारी, बाबु क़िस्सा दो)**

कामियाबी पर मुसलमान

अ़म्र बिन अ़न्सबा सल्मा (रज़ि०) भी उन्हीं बुज़ुर्गों में हैं, जिन्होंने लोगों की

ज़बानी यह सुनकर कि मक्का में एक शख़्स पैदा हुआ है जो बहुत सी बातें बताता है, देखने के लिए मक्का आए, ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) उस वक़्त कुरैश के मज़ालिम की बिना पर छुपे थे, अ़म्र बिन अन्सबा (रज़ि०) किसी तरह ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ख़िदमत में पहुँच गये, और अ़र्ज़ किया, "आप कौन हैं?"

आप ने फ़रमाया, "मैं पैग़म्बर हूँ" उन्होंने कहा-

"पैग़म्बर किस को कहते हैं?"

आप ने फ़रमाया "ख़ुदा ने मुझे भेजा है"।

उन्होंने फिर पूछा, "क्या पैग़ाम देकर भेजा है?"

इर्शाद फ़रमाया-

"मुझे ख़ुदा ने यह पैग़ाम देकर भेजा है कि रिश्तेदारी का ह़क़ अदा किया जाए, बुत तोड़ दिये जाएँ, ख़ुदा को एक माना जाए और किसी को उस का शरीक न ठहराया जाए।"

अ़म्र ने पूछा, "इस मज़हब के कितने मानने वाले हैं।"

आप ने फ़रमाया, "एक आज़ाद (अबूबक्र रज़ि०) और एक ग़ुलाम (बिलाल रज़ि०)।"

अ़म्र ने कहा, " मैं भी आप की पैरवी करता हूँ।" इर्शाद हुआ कि अभी तो यह मुम्किन नहीं तुम देख रहे हो कि किस ह़ाल में मैं हूँ और मेरे साथियों का क्या ह़ाल है, मेरी कामियाबी का जब ह़ाल सुनना तो मेरे पास आ जाना, अतः अ़म्र वापस आ गये, और हिजरत के बाद जब लोगों की ज़बानी आप (सल्ल०) के कामियाबी का ह़ाल मालूम हुआ तो ह़ाज़िरे ख़िदमत हुए और इस्लाम क़ुबूल कर लिया। **(सह़ी मुस्लिम, बाबुल् अवक़ाफ़ुन्नबी)**

ज़म्माद बिन सअ़ल्बा का इस्लाम

ज़म्माद बिन सअ़ल्बा एक क़बीले के सरदार और आप (सल्ल०) के बचपन के दोस्त थे, वह मक्का आए तो सुना कि मुह़म्मद को जुनून हो गया है, वह झाड़ फूंक भी करते थे, आप (सल्ल०) के पास आए कि लाओ मैं तुम्हारा इ़लाज कर दूँ। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया-

"अल्ह़म्दु लिल्लाहि नह़मदुहू वनस्तअ़ीनुहू मय्यहदिहिल्लाहु फ़ला मुज़िल्ल लहु वमय्युज़िललहु फ़ला हादिया लहु व अश्हदु अल्लाइलाह इल्लल्लाहु वह़दहू ला शरीक लहु व अश्हदु अन्न मुह़म्मदन अ़ब्दुहू व रसूलुहू।"

इन शब्दों ने ज़म्माद को बहुत प्रभावित किया और अ़र्ज़ किया, "दोबारा इर्शाद फ़रमाइये।"

आप (सल्ल०) ने फिर दोहराया ज़म्माद ने फिर तीसरी बार पढ़वाया, अब वह बिल्कुल प्रभावित हो चुके थे।

बोले कि मैंने काहिनों की बातें, जादूगरों के शायरों के क़सीदे सुनें हैं लेकिन ऐसा कलाम नहीं सुना, यह तो दरिया की तह तक में असर कर जाएगा, लाइये हाथ लाइए मैं इस्लाम पर बैअ़त करता हूँ।"

आप ने उन से बैअ़त ली, फिर फ़रमाया-

अपने पूरे क़बीले की ओर से भी बैअ़त कर लो, अतः उन्होंने पूरे क़बीले की ओर से बैअ़त कर ली, और पूरा क़बीला उन की दअ़वत से मुसलमान हो गया। **(मुस्लिम)**

ह़ज़रत अबूज़र (रज़ि०) का इस्लाम-

ह़ज़रत अबूज़र (रज़ि०) का वाक़िया इस मौक़े पर ख़ास ज़िक्र के क़ाबिल है। गिफ़ार का क़बीला जो कुरैश के शामी तिजारत के रास्ते में आबाद था, जब वहाँ यह चर्चा फैली तो ह़ज़रत अबूज़र (रज़ि०) जो बुतपरस्ती से बेज़ार हो चुके थे, और ह़क़ की तलाश में थे, उन्होंने अपने भाई (अनीस) से कहा, "तुम मक्का जाओ और देखो कि यह व्यक्ति जो नुबूवत का दावा करता है उसकी शिक्षा क्या है"।

अनीस मक्का आए और वापस जाकर बयान किया "वह अच्छे आचरण की तअ़लीम देता है, और जो कलाम पेश करता है वह शायरी से अलग हैं।"

ह़ज़रत अबूज़र (रज़ि०) को इस संक्षिप्त उत्तर से सन्तुष्टि नहीं हुई, ख़ुद गये, रास्ते के लिए मशक़ में पानी और कुछ खाने को लिया और मक्का में आए तो डर के मारे किसी से ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का नाम पूछ नहीं सके।

ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) से मुलाक़ात-

कअ़बः में ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) से मुलाक़ात हो गई उन्होंने घर पर लाकर मेहमान रखा, लेकिन तीन दिन तक उन से कुछ पूछने की ह़िम्मत नहीं हुई। अन्त में ख़ुद ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) ने पूछा, "यहाँ आने की क्या वजह है?" उन्होंने डरते-डरते बताया, "लेकिन फिर वादा ले लिया कि किसी और को न बताइयेगा।" ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) उन को ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ख़िदमत में लाए, और आप ने इस्लाम समझाया, और फ़रमाया, "इस वक़्त घर वापस जाओ फिर मैं जो कुछ संदेश भेजूँगा उस के अनुसार अ़मल करना।" लेकिन उन पर इस्लाम का जोश छाया हुआ था, अ़र्ज़ किया कि मैं तो इस्लाम का एलान करके रहूँगा फिर ह़रम में आए और ज़ोर से पुकार कर कहा-

"अश्हदु अल्लाइलाह इल्लल्लाहु व अश्हदु अन्न मुह़म्मदर्रसूलुल्लाह"

इस आवाज़ को सुनना था कि लोग चारों ओर से दौड़ पड़े और उन को मारना शुरु कर दिया। ह़ज़रत अ़ब्बास (रज़ि०) ने आकर बचाया और लोगों से कहा, "तुम यह नहीं समझते कि तुम्हारी तिजारत का रास्ता ग़िफ़ार की आबादी से होकर गुज़रता है और यह उसी क़बीले के हैं।"

लोगों ने यह सुनते ही छोड़ दिया लेकिन दूसरे दिन ह़ज़रत अबूज़र (रज़ि०) ने ह़रम में जाकर फिर इसी तरीक़े से इस्लाम का ऐ़लान किया, और नतीजा फिर वही हुआ जो कल हो चुका था। आज भी इत्तिफ़ाक़ से ह़ज़रत अ़ब्बास (रज़ि०) आ गये और उन्होंने जान बचाई।

(सह़ी बुख़ारी, सह़ी मुस्लिम में यह वाक़िआ़ जिस तरह मन्क़ूल है उस में बहुत सी बातें इस से ज़्यादा और अलग हैं।)

ह़ज़रत अबूज़र (रज़ि०) मक्का से जब वापस आए और अपने क़बीले को इस्लाम की दअ़वत दी तो आधा क़बीला उसी वक़्त मुसलमान हो गया, बाक़ी लोगों ने कहा, "हम उस वक़्त इस्लाम का इज़हार करेंगे जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) मदीना में आ जाएँ।" अतः जब आप मदीना में तशरीफ़ लाए तो बाक़ी आबादी भी मुसलमान हो गई। **(सह़ी मुस्लिम, इस्लाम अबूज़र)**

क़बील-ए-अस्लम का इस्लाम

ग़िफ़ार से क़रीब अस्लम का क़बीला आबाद था, और दोनों क़बीलों में पुराने सम्बन्ध थे, ग़िफ़ार के प्रभाव से उन्होंने भी इस्लाम क़ुबूल कर लिया।

(सह़ी बुख़ारी, ज़िक्र अस्लम व ग़िफ़ार रज़ि०)

(यह दोनों क़बीले इस्लाम से पहले चोरी में बद्नाम थे, और उन को मालूम था कि इस्लाम इस काम का दुश्मन है। (बुख़ारी)

(मौसमे ह़ज में अ़रब के अक्सर क़बायल जमा हो जाते थे, आप उस मौक़े पर एक-एक क़बीले के क़याम गाह पर जाते, और इस्लाम की दअ़वत देते थे।)

कई क़बीलों (समुदायों) का इस्लाम

मदीने के क़बायल औस व ख़ज़रज विभिन्न जमाअ़तों ने, इसी मौक़े पर इस्लाम क़ुबूल किया, उस के बाद जब ह़ज़रत मुसअ़ब बिन उमैर (रज़ि०) दाइये इस्लाम बना कर मदीना मुनव्वरह भेजे गये, तो उन के फ़ैज़ से चन्द ही महीनों में दो घरानों के सिवा तमाम घराने मुसलमान हो गये, हिजरत के बाद जब आप (सल्ल०) मदीना मुनव्वरह तशरीफ़ लाए तो आस-पास के क़बायल में जैसा कि ऊपर गुज़रा, ग़िफ़ार व अस्लम ने इस्लाम क़ुबूल कर लिया।

कुछ ही दिनों के बाद बद्र का मामला पेश आया, जिस में क़ुरैश को शिकस्त हुई और सत्तर व्यक्ति मुसलमानों के हाथ में क़ैद हुए, उन क़ैदियों की रिहाई के लिए क़ुरैश ने मदीना में आना-जाना शुरु किया जिससे लोगों को मुसलमानों से मिलने जुलने का इत्तिफ़ाक़ हुआ और इस प्रभाव से बहुत से लोग मुसलमान हो गये।

(इन में बहुत से लोग ऐसे होते थे कि इत्तिफ़ाक़िया उन के कानों में क़ुर्आन मजीद की आवाज़ पड़ जाती, और बावजूद सख़्त दुश्मनी के उन का दिल पत्थर से मोम बन जाता।)

ज़ुबैर बिन मुतअ़िम का इस्लाम-

ज़ुबैर बिन मुतअ़िम बद्र के क़ैदियों को फ़िद्या देकर छुड़वाने के लिए आए थे

और क़ैदियों के साथ थे, एक दिन ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) यह आयतें पढ़ रहे थे।

أَمْ خُلِقُوا مِنْ غَيْرِ شَيْءٍ أَمْ هُمُ الْخَالِقُونَ ۝ أَمْ خَلَقُوا السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ ۚ بَل لَّا يُوقِنُونَ ۝

"क्या ये किसी के पैदा किये बिना पैदा हो गये हैं या ख़ुद ही अपने को पैदा करने वाले हैं? क्या आसमानों और ज़मीन को इन्होंने पैदा किया है?- (नहीं,) बल्कि ये यक़ीन ही नहीं रखते;" (सूरः तूर ३५-३६)

जुबैर बिन मुतअ़िम ने यह आयतें सुन लीं तो उन का बयान है कि मुझ को यह मालूम होता था कि मेरा दिल परवाज़ कर गया।

(सह़ी बुख़ारी)

भविष्यवाणी का प्रभाव

(मक्का में रोम व फ़ारस की जंग के सम्बन्ध में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने जो भविष्यवाणी फ़रमाई थी, वह ठीक फ़तेह़ बद्र के मौक़े पर पूरी उतरी, और क़ुर्आन की भविष्यवाणी के अनुसार सात बरस के बाद रोमियों ने फ़ारस पर फ़तेह़ पाई, इस मोअ़जिज़ह (चमत्कार) का यह नतीजा हुआ कि एक बड़े समुदाय ने इस्लाम की सदाक़त का इक़रार किया।)

क़बील-ए-मुज़ैना का इस्लाम

इस तरह़ अपने आप आहिस्ता-आहिस्ता इस्लाम फैलता जाता था। ५ हि० में क़ुरैश, कनाना, ग़त़्फ़ान, असद और अनेक क़बायल ने मिलकर मदीने पर ह़मला किया और शिकस्त खाई, इस मअ़रके का नाम अह़ज़ाब है जिस की तफ़्सील ऊपर गुज़र चुकी है। इस शिकस्त ने क़ुरैश का विश्वव्यापी प्रभाव कम कर दिया, और वह क़बायल (समुदाय) जो क़ुबूले इस्लाम के लिए तैयार थे, लेकिन उन्हें क़ुरैश के डर से इस्लाम को ज़ाहिर करने की हिम्मत नहीं थी, उन्होंने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ख़िदमत में वफ़ूद भेजने शुरु किए सब से पहली जो सिफ़ारत आई वह क़बीले 'मुज़ैना' की थी, जिस में चार सौ लोग शरीक थे, उन्होंने यह भी ख़्वाहिश

की कि अगर इर्शाद हो तो हिजरत करके मदीना आ जाएँ लेकिन आप (सल्ल०) ने इर्शाद फ़रमाया कि तुम जहाँ कहीं भी रहो मुहाजिर हो।

(तबक़ात इब्ने सअ़द, भाग-एक अध्याय २)

क़बील-ए-अशज का इस्लाम

उसी ज़माने में क़बीले अशज़ के दूत, जिन की संख्या १०० थी, मदीना आए और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से कहा कि हम आप से लड़ना नहीं चाहते बल्कि यह चाहते हैं कि सुलह़ का मुआ़हिदा हो जाए। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने क़ुबूल फ़रमाया, उस वक़्त तक यह लोग काफ़िर थे, लेकिन जब सुलह़ हो चुकी तो उन्होंने ख़ुद ब ख़ुद इस्लाम क़ुबूल कर लिया।

(तबक़ात, इब्ने सअ़द)

क़बील-ए-जुहैनिया का इस्लाम

जुहैनिया भी इस क़बीले के आसपास आबाद थे। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने उन को दअ़वत दी और वह तुरन्त एक हज़ार जमाअ़त लेकर मदीना आए और मुसलमान हो गये और उस के बाद वह अक्सर ग़ज़वात में मुसलमानों के साथ शरीक रहे। (असाबा, तज़किरह बशीर बिन फ़िता)

ग़िफ़ार, अस्लम, मुजैना, अशज और जुहैना की इताअ़त और इस्लाम में आगे बढ़े जिस की बिना पर आप (सल्ल०) ने उन के ह़क़ में दुआ़-ए- ख़ैर फ़रमाई।

(सह़ी बुख़ारी, भाग-एक ज़िक्र ग़िफ़ार, अस्लम व जुहैना)

सुलह़ हुदैबिया का प्रभाव

सुलह़ हुदैबिया के ज़माने में कुफ़्फ़ार और मुसलमान निहायत आज़ादी के साथ आपस में मिलते जुलते जिससे मुसलमानों को अपनी बात सुनाने का मौक़ा मिल जाता, जिसका नतीजा यह हुआ कि, केवल दो बरस में यह संख्या बहुत बढ़ गई। अतः जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) सुलह़ हुदैबिया के साल उ़मरः का इरादा करके

मदीना से निकले तो केवल डेढ़ हज़ार लोग साथ थे, लेकिन दो ही बरस के बाद अब जो फ़तेह मक्का को चले तो दस हज़ार मुसलमानों का लश्कर साथ था।

फ़तेह मक्का के बाद-

फ़तहे मक्का के बाद अब दअ़वते इस्लाम के लिए यह ख़त्रा नहीं रहा कि उस के दाई जहाँ जाएँ बेवजह क़त्ल कर दिये जाएँ। इस बिना पर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने तमाम अ़रब में दाअ़िये इस्लाम भेज कर लोगों को इस्लाम की ख़ूबियों को बताने के लिए भेजा ताकि वह तर्ग़ीब दिलाएँ।

ह़ाफ़िज़े कुर्आन

(इस्लाम के प्रचार के लिए जो जमाअ़त मुल्क भेजी जाती थी, उस में कभी-कभी आप एक-एक व्यक्ति का इम्तिह़ान लेते थे, उन में जो साह़िब सब से ज़्यादा ह़ाफ़िज़े कुर्आन होते थे उन को उस का अमीर मुक़र्रर फ़रमाते थे।

अतः आप ने एक बार इसी क़िस्म की फ़ौज रवाना करनी चाही तो एक शख़्स से कुर्आन पढ़वा कर सुना, उन लोगों में एक छोटी उम्र के नौजवान थे। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) उन के पास आए पूछा तुम्हें क्या याद है? उन्होंने कहा कि मुझको सूरः बक़रः और फ़लां सूरतें याद हैं। आप ने फ़रमाया तो तुम ही इन सब के अमीर हो। **(तर्ग़ीब तरहीब, भाग १ पेज २५६, तिर्मिज़ी)**

फ़तेह मक्का के बाद

फ़तेह मक्का के तीन महीने बाद ज़िल् ह़िज्ज ६ हि० के मौसमे ह़ज में एलाने बरात हुआ, इस वाक़िये के बाद पूरे हिजाज़ ने आ़मतौर से इस्लाम क़ुबूल कर लिया। **(तबरी, वाक़िआ़त ६ हि०)**

हिजाज़ से बाहर नुबूवत के इक्कीस बरस तक क़ुरैश और यहूद की वजह से इस्लाम आगे न बढ़ सका, और कहीं-कहीं मुसलमान इधर-उधर नज़र आते रहे, लेकिन उन दीवारों का हटना था कि केवल तीन बरस में ८-९-१० हि० में इस्लाम का असर एक ओर 'यमन बहरैन, यमामा, और दूसरी ओर ईराक़ व शाम की

सीमाओं तक फैल गया, यह अ़रब के वह प्रदेश हैं, जहाँ इस्लाम से पहले अ़रबों की बड़ी-बड़ी हुकूमतें क़ायम थीं और उस वक़्त भी वह रोम फ़ारस और दुनिया की दो अ़ज़ीमुश्शान ताक़तों के अधीन थीं। अतः इस्लाम बग़ैर तलवार के अपनी आवाज़ बुलन्द करता चला गया, और हर जगह से लब्बैक की पुकार ख़ुद ब ख़ुद आने लगी।

यमन में इस्लाम

मुल्क अ़रब के तमाम सूबों में यमन सब से पुराना तिजारती मरकज़ रहा है। सबा और ह़मीर की बड़ी-बड़ी हुकूमतें यहीं क़ायम हुईं थीं। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की पैदाईश से पचास वर्ष पहले ५२५ हि० में ह़ब्शी ईसाईयों ने यमन पर क़ब्ज़ा कर लिया था। मुह़म्मद (सल्ल०) की पैदाईश के कुछ साल बाद अहले ईरान यहाँ के मालिक बन गये, उस से पहले यहाँ एक गवर्नर होता था जो यमन पर हुकूमत करता था।

अहले यमन क़ह़तानी थे, दाईये इस्लाम इस्माईली, अहले यमन को अपने पुराने जाह व जलाल और हुकूमत पर गर्व था, और तमाम अ़रब उन की सत्ता को तस्लीम करता था और तमाम अ़रब में वही हुकूमत के ह़क़दार समझे जाते थे मुल्क में जहाँ कोई बाक़ायदा हुकूमत थी, वह नस्लन इसी ख़ानदान से शुमार होती थी, अतः जब यमन से क़बीला कुन्दह का वफ़्द आया जो यमन का एक शाही ख़ानदान था तो ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को एक अ़रब का व्यक्ति समझ कर सरदार ने पूछा या रसूलल्लाह! क्या आप और हम, ख़ानदानी नहीं हैं? आप ने फ़रमाया-

"हम नज़्र बिन कनाना के ख़ानदान से नहीं हैं, न अपनी माँ पर तोहमत रख सकते हैं और न अपने बाप का इन्कार कर सकते हैं"।

यमन में इस्लाम के प्रचार का सब से बड़ा माध्यम यह हो सकता था कि वह पोलिटिकल ह़ैसियत से ईरानियों के मातेह़त था, और बाशिन्दे मज़हबन यहूदी या ईसाई थे लेकिन क़ुबूले ह़क़ के लिए कोई चीज़ उन में से रुकावट न बनी।

यमन में इस्लाम की दअ़वत हिजरत से बहुत पहले पहुँच चुकी थी यमन में

दौस एक महत्वपूर्ण क़बीला था, इस क़बीले का सरदार तुफ़ैल बिन अ़म्र मक्का आया, और मुसलमान हो गया, उसी ज़माने में कुन्दह का क़बीला ह़ज के लिए मक्का आया हुआ था। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने उन को इस्लाम की दअ़वत दी लेकिन उन्होंने इन्कार किया। **(इब्ने हिशाम)**

७ हि० में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ख़ैबर में तशरीफ़ फ़रमा थे, दौस का क़बीला मुसलमान होकर दारुल इस्लाम में बदल गया। यमन का एक मशहूर क़बीला अशअ़र था, वह भी मुहाजिरीन ह़ब्शा के साथ उसी ज़माने में ख़ुद ब ख़ुद इस्लाम लाया, और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के पास ह़ाज़िर हुआ, अबूहुरैरा दौसी और अबू मूसा अशअ़री (रज़ि०) उन ही क़बायल के साथ ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ख़िदमत में ह़ाज़िर हुए थे।

क़बील-ए-हमदान का इस्लाम

यमन में हमदान सब से बड़ा और साह़िबे असर ख़ानदान था। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ८ हि० के आख़िर में उन को दअ़वते इस्लाम देने के लिए ह़ज़रत ख़ालिद (रज़ि०) को भेजा। ख़ालिद (रज़ि०) छः महीने तक उन को इस्लाम की दअ़वत देते रहे लेकिन उन लोगों ने क़ुबूल नहीं किया, अन्त में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने ख़ालिद को बुलवा लिया और ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) ने उन लोगों को जमा करके रसूलुल्लाह (सल्ल०) का नाम मुबारक पढ़ कर सुनाया, और साथ ही सारे का सारा क़बीला मुसलमान हो गया। ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) ने जब इस वाक़िये की ख़बर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को दी तो ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने सज्द-ए-शुक्र अदा किया और सर उठा कर उन को सलामती की दुआ़ दी। **(बैहक़ी)**

यमन में ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) से लोग परिचित हो गये थे, रबीउलअव्वल १० हि० में तीन सौ सवारों की ह़िफ़ाज़त में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फिर उन को यमन के क़बीले में तब्लीग़-ए-इस्लाम के लिए नामज़द फ़रमाया और साथ ही यह ताकीद फ़रमा दी कि जब तक वह ह़मलाआवर न हों पेश क़दमी न करना, ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) जब वहाँ पहुँचे तो माल गुज़ारी वसूल करने के लिए इधर-उधर लोगों

को तय किया, इतने में क़बीला मज़ह़ज की एक जमाअ़त नज़र आई, ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) ने उन के सामने इस्लाम की दअ़वत पेश की, लेकिन उधर से इस एह़सान का जवाब तीर और पत्थरों से मिला।

यह देख कर ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) ने भी अपने साथियों की सफ़ आराई की, मज़ह़ज अपने बीस आदमी मक़्तूल छोड़ कर भाग खड़े हुए, मुसलमानों ने उनका पीछा न किया कि उन का उद्देश्य केवल मुदाफ़िअ़त था, इस के बाद क़बीला के सरदार ख़ुद ह़ाज़िर हुए और उन्होंने इस्लाम क़ुबूल किया और दूसरों की तरफ़ से इस्लाम का एलान किया। **(इब्ने सअ़द मग़ाज़ी से ली है)**

नजरान वालों का इस्लाम

यमन के पास ही नजरान है, नजरान अ़रब में ईसाईयत का ख़ास मरकज़ था। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने मुग़ीरा बिन शोअ़बा(रज़ि०) को जो सुलह़ हुदैबिया में ७ हि० से पहले इस्लाम ला चुके थे, दअ़वते इस्लाम के लिए नजरान भेजा, ईसाईयों ने क़ुर्आन पर एतिराज़ शुरु किये, यह जवाब न दे सके और वापस चले आये। **(तिर्मिज़ी, तफ़्सीर सूरः मरयम)**

उस के बाद ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने दअ़वते इस्लाम का उन को ख़त भेजा। **(ज़रक़ानी बह़वाला बैहक़ी)**

अहले नजरान ने राहिबों और मज़हबी रहनुमाओं की एक जमाअ़त को जाइज़ा लेने के लिए मदीना भेजा, इस का ज़िक्र आगे आएगा।

नसारा के अतिरिक्त नजरान में मुश्रिकीन की भी कुछ आबादी थी उन में एक क़बीला बनू ह़ारिस इब्ने ज़ियाद था। जो मदान नाम के एक बुत को पूजता था इसलिए अ़ब्दुल मदान के नाम से मशहूर था, रबीउल् आख़िर १० हि० में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने ख़ालिद बिन वलीद (रज़ि०) को वहाँ दअ़वते इस्लाम के लिए भेजा, ह़ज़रत ख़ालिद (रज़ि०) वहाँ पहुँचे, तो सारा क़बीला मुसलमान हो गया। ह़ज़रत ख़ालिद (रज़ि०) ने यहाँ थोड़े दिन क़याम किया, और क़ुर्आन व एह़कामे इस्लाम की तअ़लीम दी। **(ज़रक़ानी भाग ३ पेज नं० ११६)**

अहले यमन का बिना किसी तर्ग़ीब के दिल से क़ुबूल-ए-इस्लाम कोई ऐसा

वाक़िआ न था जो ख़ास रह़मते इलाही का मुन्तज़िर न हो जब अश्अ़रियों के आने की ख़बर हुई तो ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने मुसलमानों को बशारत दी कि कल अहले यमन आएँगे जो बहुत नर्म दिल हैं। **(बुख़ारी)**

हिमयर और तमीम का वफ़्द (गिरोह) आया तो आप ने पहले तमीम की ओर ख़िताब किया, तमीम बशारत क़ुबूल करो, बनू तमीम ने कहा "या रसूलल्लाह! हम ने बशारत तो क़ुबूल कर ली, कुछ अ़ता भी फ़रमाइए, आप ने मुँह फेर लिया कि बशारत से बढ़कर क्या चीज़ हो सकती थी।"

फिर अहले यमन की तरफ़ रुख़ करके फ़रमाया" ऐ अहले यमन! तमीम ने बशारत नहीं क़ुबूल की, तुम क़ुबूल कर लो"।

अहले यमन तुरन्त बोल उठे ऐ ख़ुदा के रसूल! हम ने क़ुबूल किया। **(बुख़ारी)**

फिर आप ने आ़मतौर से फ़रमाया, "ईमान यमन का ईमान है, और दानाई यमन की दानाई है।

यमन से ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) और अबू मूसा (रज़ि०) ह़ज्जतुल विदाअ़ के मौक़े पर वापस आए, और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के साथ ह़ज अदा किया, उन मुबल्लिग़ीन के साथ यमन के बहुत से नव मुस्लिम भी ह़ज व ज़ियारत को आए।

(सीरतुन्नबी, भाग २ पेज नं० ३२)

बहरैन में इस्लाम

बहरैन ईरान की हुकूमत में दाख़िल था, अ़रब के क़बायल वादियों में आबाद थे, जिन में मशहूर और बाअसर ख़ानदान 'अ़ब्दुल क़बीस', 'बक्र बिन वायल' और 'तमीम' थे। उन में से 'अ़ब्दुल क़ैस' के क़बीले में मुन्अ़क़िद बिन ह़िबान तिजारत के लिए निकले।

रास्ते में मदीना पड़ता था, वहाँ ठहरे। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को मालूम हुआ तो उन के पास तशरीफ़ ले गये, और इस्लाम की दअ़वत दी, उन्होंने इस्लाम क़ुबूल किया, और 'सूरः फ़ातिह़ा' व 'सूरः इ़क़रा' सीखी। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने उन को एक फ़रमान दिया, वह सफ़र से वापस गये तो चंद रोज़ तक किसी से

इस का इज़हार नहीं किया, लेकिन उन की बीवी ने उन को नमाज़ पढ़ते देखा तो अपने बाप मुन्ज़िर बिन आ़इज़ से शिकायत की, उन्होंने दर्याफ़्त किया, बह़स व मुबाह़िसा के बाद मुन्ज़िर भी मुसलमान हो गये, और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का नाम-ए-मुबारक लोगों को सुनाया तो सब ने इस्लाम क़ुबूल कर लिया।

(सह़ी बुख़ारी)

(सह़ी बुख़ारी किताबुल जुमा) में रिवायत है कि मस्जिदे नबवी (सल्ल०) के बाद सब से पहला जुमअ़ जिस मस्जिद में अदा किया गया, वह बह़रैन की मस्जिद थी, जो जवासी में है, इस से साबित होता है कि बह़रैन में इब्तिदाई ज़माने में इस्लाम फैल चुका था।

इस्लाम क़ुबूल करने के बाद उन लोगों ने चौदह शख़्सों की एक जमाअ़त ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ख़िदमत में भेजी, जिस के अफ़सर मुन्ज़िर बिन ह़ारिस थे, उन का क़ाफ़िला नुबूव्वत के क़रीब आया, तो यह लोग इस क़द्र बेताब हो गये कि सवारियों से कूद पड़े, और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के हाथ चूमे, लेकिन मुन्ज़िर क़याम गाह पर जाकर कपड़े बदले, फिर ख़िदमत में ह़ाज़िर होकर दस्त बोसी की।

(ज़रक़ानी ब रिवायत बैहक़ी)

८ हि० में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने ह़ज़रमी (रज़ि०) को तब्लीग़-ए-इस्लाम के लिए भेजा, उस ज़माने में यहां ईरान की ओर से मुन्ज़िर बिन सावा गवर्नर थे, उस ने इस्लाम क़ुबूल किया और उस के साथ तमाम अ़रब और कुछ अ़जम (बाहिरी) जो यहाँ मुक़ीम थे, मुसलमान हो गये। **(फ़ुतूह़ुल बुल्दान)**

बह़रैन के इलाक़े में "हिज्र" एक मक़ाम है, यहाँ ईरान की ओर से सीख़बत ह़ाकिम था, ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने उस के नाम ख़त भेजा जिससे उस ने भी इस्लाम क़ुबूल कर लिया। **(ज़िक्र बह़रैन)**

उ़मान में इस्लाम

इस शहर में क़बील-ए-अ़ज़्द का क़ब्ज़ा था, और नुबैद व जाफ़र यहाँ के

सरदार थे। सत्रह हि० में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने अबू ज़ैद (रज़ि०) को जो ह़ाफ़िज़े क़ुर्आन थे, और अ़म्र बिन आ़स (रज़ि०) को दअ़वते इस्लाम का ख़त देकर भेजा, दोनों रईसों ने इस्लाम क़ुबूल कर लिया, और वहाँ के तमाम अ़रब उन की तर्ग़ीब से इस्लाम ले आए। **(ज़िक्र फ़तेह़ उ़मान)**

शाम में इस्लाम

शाम के आस-पास में जो अ़रब आबाद थे, उन में विभिन्न प्रदेश थे, उन में से सआ़न और दज़ला फ़रवह बिन अ़म्र के हुकूमत में थी। ख़ुद फ़रवह(रज़ि०) रुमी सल्तनत की ओर से गोया गवर्नर थे, उन्होंने इस्लाम से वाक़िफ़ियत पैदा की तो मुसलमान हो गये, और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ख़िदमत में इज़हारे इस्लाम के साथ एक ख़च्चर हदिया के तौर पर भेजा (ईसाई) रुमियों को उन के इस्लाम का ह़ाल मालूम हुआ, तो उन को गिरफ़्तार करके सूली दे दी। उस वक़्त यह शेअ़र उनकी ज़बान पर था। **(इब्ने हिशाम)**

(मुसलमान सरदारों को मेरा यह पैग़ाम पहुँचा दो कि मेरा जिस्म और मेरी इ़ज़्ज़त सब अपने परवरदिग़ार के नाम पर निसार है।) **(सीरतुन्नबी भाग-२)**

इस प्रकार विस्तार के लिए सीरतुन्नबी भाग-२ देखी जा सकती है कि अ़रब में किस प्रकार इस्लाम का विस्तार होता रहा।

हिन्दुस्तान में इस्लाम के फैलने का कारण

हिन्दुस्तान में इस्लाम के फैलने के सिलसिले में बहुत सी ग़लत फ़हमियाँ फैलाई गईं हैं और उन में सब से बड़ी ग़लत फ़हमी यह है कि हिन्दुस्तान में इस्लाम हिंसा के ज़रिए और मुसलमानों की तलवारों के साये में फैला। जबकि ह़क़ीक़त यह है कि मुसलमान हुकूमतों के क़याम से बहुत पहले दक्षिणी हिन्द में अ़रब ताजिरों के ज़रिए इस्लाम काफ़ी फैल चुका था। हिन्दुस्तान में इस्लाम अपनी ख़ूबियों की वजह से फैलता रहा मुसलमान बादशाहों ने उस में कभी कोई दिलचस्पी नहीं ली। बल्कि ह़क़ीक़त तो यह है कि जिन इलाक़ों में सदियों तक

मुसलमान हुक्मराँ रहें और उन की राजधानियों तक में मुसलमानों की जनसंख्या उस से कहीं कम है जितना उन इलाक़ों में जहां मुसलमानों की हुकूमतें क़ायम ही नहीं हुईं या बहुत मामूली अ़र्से तक रहीं। दिल्ली, यू० पी०, बिहार और हैदराबाद इस की वाज़ेह मिसाल हैं जहाँ सदियों की हुकूमत के बावजूद मुसलमान १५ फ़ीसद से ज़्यादा नहीं बढ़ सके जबकि केरला, बंगाल और आसाम जैसे इलाक़ों में उन का परसन्टेज कहीं ज़्यादा है।

समाजी समानता-

सच्ची बात तो यह है कि हिन्दुस्तानियों के दिलों को फ़तेह़ करने में इस्लाम की विशेषता, एकेश्वरवाद, समाजी समानता और सामाजिक प्रबन्ध जैसी विशेषताओं का दख़्ल है।

यहाँ के लोग ज़ात-पात और ऊँच-नीच की तक़्सीम और बन्दिशों से ऐसे बेज़ार थे कि इस्लाम की सूरत में उन्हें अपने दुखों का इलाज महसूस हुआ और वह बड़ी संख्या में इस्लाम लाने लगे, और इस्लाम एक ताक़तवर तह़रीक की सूरत में इस तरह फैलने लगा कि वह मक़ामी रस्म व रिवाज और अच्छी ज़िन्दगी के लिए एक चैलेंज बन गया जिसके नतीजे में ख़ुद हिन्दुओं ने बहुत सी सुधारवादी तह़रीकें विभिन्न नामों से शुरु कीं।

मुसलमान उलमा ने लोगों के सामने इस्लामी शिक्षा पेश कीं और अपने आचरण व व्यवहार से बहुत से लोगों के दिल जीते।

पहला कारण ताजिरों के अच्छे सम्बन्ध

हिन्दुस्तान में इस्लाम के प्रचार का सब से पहला माध्यम अ़रबों और हिन्दुओं का तिजारती मेलजोल था। अ़रब व्यापारियों और साहिली हिन्द के सौदागरों के आपसी सम्बन्ध ज़माने से क़ायम थे, जिसकी शुरुआ़त मुह़म्मद (सल्ल०) से बहुत पहले हो चुकी थी। अलबत्ता मुह़म्मद (सल्ल०) के बाद अ़रब क़ौम ने इन सम्बन्धों को और ज़्यादा मज़बूत कर दिया अब अ़रब ताजिर पहले की तरह केवल रुमी माल व सामान और अ़रबी वस्तुएँ व पैदावार ही हिन्दुस्तान

में नहीं लाने लगे, बल्कि अपनी सब से बड़ी दौलत और अपना सब से क़ीमती सामान जो इस ज़माने में उन्हें पैग़म्बर (सल्ल०) के ज़रिए मिला था वह भी धीरे-धीरे अपने साथ लाने लगे और यहाँ से अब केवल ख़ुशबुओं, तलवारों और कपड़ों का सामान ही नहीं बल्कि नये मुस्लिमों की कुछ तादाद भी अपने साथ ले जाने लगे।

मालाबार, सिंध, गुजरात, कच्छ, कोकन, साहिल, बंगाल और जज़ायर-हिन्द की क़ौमों ने उन को रहमत समझ कर क़ुबूल किया।

मालाबार में 'मोपला' और 'नवायत' उन्हीं अरब ताजिरों की यादगार नस्ल में से हैं और यही हिन्दुस्तान में इस्लाम के प्रचार व प्रसार के सब से पहले दाई और मुबल्लिग़ हैं।

इस्लाम का हिन्दुस्तान में फैलने का दूसरा कारण

हिन्दुस्तान में इस्लाम के दाख़िले का दूसरा कारण सिंध है जो मुद्दत से शाहाने ईरान के अधीन था और जाट और मेडिली क़ौम के लोग उन की फ़ौज के सिपाही थे, उस के बाद जब ईरान मुसलमानों के क़ब्ज़े में आया तो गुज़िश्ता सल्तनत के तर्के के तौर पर सिंध के सम्बन्ध उन को हाथ आए और उस वक़्त से लेकर मोहम्मद बिन क़ासिम फ़ातेह सिंध के ज़माने तक ईराक़ और सिंध के दर्मियान सुलह व शिकस्त के वाक़िआत बराबर पेश आते रहे। मोहम्मद बिन क़ासिम के फ़ुतूहात का विस्तार जो ब्लूचिस्तान और कराची से लेकर मुल्तान तक थी बहुत जल्द ख़त्म हो गई यानी उस ने सौ बरस का ज़माना भी नहीं पाया लेकिन इस्लाम बराबर बढ़ता रहा।

अरब में मुहम्मद (सल्ल०) की पैदाइश और हिन्दुस्तान में बुद्ध मज़हब का ख़ात्मा साथ-साथ शुरु हुआ। उस को सिमटते-सिमटते भी एक ज़माना गुज़र गया। अरब मुसलमान जब मालाबार, सीलोन, सिंध, गुजरात और कोकन आदि में आए तो उन का मुक़ाबला वैदिक धर्म के हिन्दुओं से न था बल्कि बुद्ध मत और जैन मत के मानने वालों से था उस समय तुर्किस्तान से काबुल तक और पंजाब व कश्मीर से सिंध तक बुद्ध मत और गुजरात आदि के साहिली इलाक़ों

में जैन मत प्रभावी था और मालाबार व मद्रास के आस-पास वैदिक धर्म के मानने वाले न थे बल्कि ज़्यादहतर हिन्दुस्तान के पुराने बाशिन्दे थे।

(ईस्ट की तारीख़े हिन्द-भाग एक और मक़ालाते सुलेमान भाग-एक)

हिन्दुस्तान में इस्लाम फैलने का तीसरा कारण

हिन्दुस्तान में इस्लाम के फैलने का तीसरा मशहूर कारण दुर्रे- ख़ैबर का है जिधर से वह अपनी पैदाइश के चार सौ बरस बाद दाख़िल हुआ..... ..लेकिन उस से पहले हिन्दुस्तान के विभिन्न भाग इस्लाम के नूर से मुनव्वर हो चुके थे और इस्लाम का शुमार यहाँ के मज़हब में होने लगा था और मुसलमानों की संख्या कम सही मगर उन का सिलूसिला दरया-ए- सिंध से क़न्नौज, मुल्तान और कश्मीर तक फैल चुका था। **(मक़ालाते सुलेमान,भाग एक)**

इस्लाम के फैलने का चौथा अहम कारण

इस्लाम के फैलाने में सूफ़ियों का भी बड़ा हिस्सा रहा है 'मदुरै' और 'तिरुचिन्नपल्ली' में 'हज़रत नाथडोली' (मृत्यु १३०६) की वजह से इस्लाम फैला वह एक तुर्की शहज़ादे थे, और रियासत व इमारत छोड़ कर सन्यासी बन गये और 'अरब देश' ईरान और उत्तर भारत का भ्रमण करके तिरुचिन्नापल्ली पहुँचे और अपने जुहद, इबादत और अख़्लाक़ से वहाँ के लोगों को ऐसा प्रभावित किया कि बहुत से हिन्दू उन के हाथ पर इस्लाम क़ुबूल कर लिये। उन का मज़ार भी तिरुचिन्नापल्ली में है।

उन के जानशीन 'सय्यद इब्राहीम शहीद' (मृत्यु ५६४-११६८ हि०) तो बारह बरस तक उस इलाक़े के बादशाह भी रहे, 'हज़रत नाथडोली' के एक दूसरे मुरीद और ख़लीफ़ा 'बाबा फ़ख़्रुद्दीन' (मृत्य ५६४-११६८ हि०) ने पेनूकोंडा के राजा को मुसलमान बनाया।

सूफ़ियों के ज़रिए इस्लाम

मदुरै में 'हज़रत अली बादशाह' के ज़रिए इस्लाम फैला जो ग्यारहवीं सदी

ईस्वी में बग़दाद से 'बाबा रेहान' की एक जमाअ़त के साथ भड़ौच आए, और वहाँ के राजा के लड़के को मुसलमान किया नूरुद्दीन सतानगर ने गुजरात के कम्बपों, कोरियों, खारवाओं को मुसलमान बनाया।

१३०४ हि० में अ़रब प्रचारकों में एक प्रचारक 'पीर महावीर खन्दायत' के नाम से मशहूर हुए, बीजापुर आकर वहाँ के किसानों को मुसलमान किया।

चौदहवीं सदी में 'ह़ज़रत ख़्वाजा गेसू दराज़' (रह़०) ने पूना और बेलूग़ाम में इस्लाम की तब्लीग़ की, इसी तरह कोकण में 'ह़ज़रत अ़ब्दुल क़ादिर जीलानी' (रह़०) की नस्ल के एक बुज़ुर्ग 'शेख़ बाबा अ़जब' ने इस्लाम फैलाया।

'दहवार' के ज़िलों में 'ह़ज़रत हाशिम पीर गुजराती' के ज़रिए इस्लाम फैला, 'सतारा' के इलाक़े में एक नव मुस्लिम 'पीर शम्बूरापाकोशी' ने वहाँ के लोगों को मुसलमान किया।

बारहवीं सदी ईस्वीं में इस्लाम

बारहवीं सदी ईस्वी में एक बुर्ज़ुग 'सय्यद अह़मद सुल्तान सख़ी सरवर' जो 'लखी दाता' के नाम से मशहूर हैं। (मृत्यु ५८८-११८१ हि०) ने 'शाह कोट' निकट 'मुल्तान' में आकर क़याम किया और हिन्दू मुसलमान दोनों उन के मुअ़तक़िद हो गये। उन के मानने वाले सुल्तानी कहलाते हैं, और पंजाब खुसूसन जालंधर में बहुत हैं, राजस्थान में 'ह़ज़रत ख़्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती' (रह़०) के ज़रिए बहुत से हिन्दुओं ने इस्लाम क़ुबूल किया और केवल दिल्ली से अजमेर के रास्ते में उनके ज़रिए सात सौ हिन्दुओं ने इस्लाम क़ुबूल किया।

पंजाब का पश्चिमी ह़िस्सा 'ह़ज़रत ख़्वाजा बहाउद्दीन ज़करिया मुल्तानी' (रह़०) और 'ह़ज़रत फ़रीदुद्दीन गंज शकर' (मृत्यु ६६४-१२६५ हि०) से लोगों ने इस्लाम क़ुबूल किया, 'जवाहिरे फ़रीदी' में है कि 'बाबागंज शकर' ने पंजाब की ग्यारह क़ौमों को शिक्षा व नसीह़त के ज़रिए मुसलमान किया।

'ह़ज़रत बूअ़ली क़लन्दर' (मृत्यु ७२४ हि०) ने पानीपत में तीन सौ राजपूतों को मुसलमान किया।

कश्मीर में 'शाह मिर्ज़ा बुल्बुल शाह', शाह सय्यद अ़ली हम्दानी (मृत्यु

१३८४ हि०) और मीर शम्सुद्दीन इराक़ी की वजह से इस्लाम को बढ़ावा मिला। बिहार में फ़िरदौसिया सिल्सिले के बुज़ुर्ग इस्लाम की तब्लीग़ व इशाअ़त में लगे रहे।

पन्द्रहवीं सदी ईस्वीं

पन्द्रहवीं सदी ईस्वी में जब बंगाल के राजा 'कंस' के बेटे 'जटमल' ने इस्लाम क़ुबूल किया तो उस के असर से बहुत से हिन्दू मुसलमान हो गये, वहाँ आ़मतौर से मुसलमान क़ह़त के ज़माने में हिन्दुओं के बच्चों की परवरिश करते और उन की अच्छी तर्बियत करते, जिससे प्रभावित होकर लोग मुसलमान हो जाते। जब 'ह़ज़रत निज़ामुद्दीन' ख़लीफ़ा शेख़ 'अख़ी सिराजुद्दीन' (मृत्यु १३५७) और उन के ख़लीफ़ा 'शेख़ अलाउल्ह़क़' (मृत्यु १३९८) ने बंगाल में क़याम किया और तौह़ीद व रिसालत की तालीम के साथ-साथ इस्लामी भाई-चारा को भी फैलाया जिससे वहाँ के नीची ज़ात के हिन्दू, जो नीच समझे जाते थे, इस्लाम में दाख़िल होते रहे।

'सिलहट' में 'शेख़ शहाबुद्दीन सहरवर्दी' (रह०) के मुरीद और 'ह़ज़रत बहाउद्दीन ज़करिया मुल्तानी' (रह़०) के पीर भाई 'शेख़ जलालुद्दीन तबरेज़ी' (मृत्यु १२२५) इस्लाम का प्रचार व प्रसार करते रहे जिससे लोग मुसलमान होते रहे।

रहनुमाओं का एहतिराम-

मुसलमान उलमा और अहले क़लम ने मक़ामी बाशिन्दों के अक़ायद, रुसूम व रिवाज को भी हमदर्दाना अन्दाज़ में समझने की पूरी कोशिश की और हिन्दुओं के मज़हबी रहनुमाओं के एह़तिराम को भी उसी तरह बताया जिस तरह दीगर मज़ाहिब के रहनुमाओं के एह़तिराम की तालीम इस्लाम ने दे रखी है।

हिन्दुओं के अवतारों का एहतिराम

'मिर्ज़ा मज़हर जानजानां' (मृत्यु ११९५ हि०) के नज़दीक हिन्दुओं की बुत परस्ती ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से पहले के अ़रबों की बुत परस्ती से भिन्न है।

मिर्ज़ा साहब ने हिन्दुओं के अवतारों के एहतिराम करने की यह बात कह कर पूरी तंबीह की कि गुज़रे हुए लोगों पर बिना कुफ़्र साबित हुए कुफ़्र का हुक्म लगाना जायज़ नहीं। **(इस्लाम, मुसलमान और ग़ैर मुस्लिम पेज नं० २४)**

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَلَقَدْ بَعَثْنَا فِيْ كُلِّ اُمَّةٍ رَّسُوْلًا اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ وَاجْتَنِبُوا الطَّاغُوْتَ ۚ فَمِنْهُمْ مَّنْ هَدَى اللّٰهُ وَمِنْهُمْ مَّنْ حَقَّتْ عَلَيْهِ الضَّلٰلَةُ ۚ فَسِيْرُوْا فِي الْاَرْضِ فَانْظُرُوْا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِيْنَ ۝

और 'हमने' हर उम्मत (समुदाय) में रसूल भेजे कि, ''एक अल्लाह की इबादत (उपासना) करो, और शैतान (बुतों) से बचते रहो, तो उनमें से किसी को अल्लाह ने सीधी राह सुझाई और किसी पर गुमराही (पथभ्रष्टता) सिद्ध हो कर रही, फिर ज़रा धरती पर चल फिर कर देखो! कि झुठलाने वालों का कैसा अंजाम हुआ? **(सूरः नहलः ३६)**

इस आयत से मालूम हुआ कि हिन्दुओं में भी कोई नबी या डराने वाला ज़रूर आया होगा इसलिए किसी मज़हबी रहनुमा को बुरा भला कहना उचित नहीं।

हिन्दुस्तान से मुहब्बत-

'अमीर ख़ुसरु' ने हिन्दुस्तान के हर चीज़ की तारीफ़ की, अपने हम मज़हबों को उस से मुहब्बत और लगाव पैदा करने का हुक्म दिया, हिन्दुस्तानी ज़बान, हिन्दुस्तानी कपड़े, हिन्दुस्तानी फूल, मेवे, परिन्दे, जानवरों और औरतों के हुस्न के बयान करने में उन का क़लम रक़्स करने लगता है।

दोनो वर्गो को क़रीब लाने के लिए हिन्दी अश्आ़र

इसी दिल को जीतने के लिए उन्होंने हिन्दी में अश्आ़र कह कर यह साबित कर दिया है कि वह हिन् दुस्तान के लोगों के दिलों पर हमेशा छाये रहेंगे।

पं० जवाहरलाल नेहरु अपनी डिस्कवरी आफ़ इन्डिया में लिखते हैं कि

'अमीर ख़ुसरु' ने बहुत से विषयों पर लिखा है ख़ासतौर से हिन्दुस्तान की उन चीज़ों की तारीफ़ की है जिन में हिन्दुस्तान को अहमियत हासिल है, यहाँ के मज़हब, फ़ल्सफ़े, मन्तिक ज़बान, संस्कृत, मौसीक़ी, गणित, विज्ञान और आम की तारीफ़ की है, लेकिन उन की ज़्यादा शोहरत उन के मशहूर गीतों की वजह से है। जो उन्होंने सरल हिन्दी ज़बान में लिखे हैं। पंडित जी यह भी लिखते हैं कि मुझ को किसी जगह की ऐसी मिसाल नहीं मिली कि छः सौ बरस पहले जो गीत लिखे गये वह अ़वाम में बराबर मक़बूल रहे और अल्फ़ाज़ की तब्दीली के बग़ैर वैसे ही गाए जाते हैं।

'अमीर ख़ुसरु' के बाद बहुत से मुसलमान शोअ़रा ने हिन्दी और संस्कृत में अश्आ़र कहे उन के नामों की फ़ेहरिस्त लम्बी है, कुछ के नाम यह हैं, दाऊद, क़तीन, मलिक मोहम्मद जायसी, शेख़ नबी, क़ासिम शाह, नूर मोहम्मद, ताज, जमाल, अ़ब्दुर्रहीम ख़ानख़ाना, क़ादिर, मुबारक, आ़लम, शेख़ शाह मोहम्मद, निज़ामुद्दीन, मधुनायक सय्यद रहमतुल्लाह, मीर अ़ब्दुल जलील बिलग्रामी, ग़ुलाम नबी, सय्यद बरकतुल्लाह, मोहम्मद आ़रिफ़, शाह काज़िम आदि।

कृष्ण बीती-

आख़िर दौर में भी मुसलमान अहले क़लम अपनी कुशादा दिली और वतन और अहले वतन से मोहब्बत का राग अलापते रहे हैं। 'ख़्वाजा हसन निज़ामी' जैसे सूफ़ी बुज़ुर्ग ने "कृष्ण बीती" लिख कर कृष्ण जी को शानदार ख़िराजे तहसीन पेश किया और उर्दू के सब से बड़े फ़ल्सफ़ी शायर **'अ़ल्लामा इक़बाल'** ने तो जिन शब्दों में और जिस ख़ूबसूरती के साथ रामचन्द्रजी का वर्णन किया है। शायद हिन्दी ज़बान में और किसी हिन्दू शायर से भी नहीं बन सका होगा।

अल्लामा इक़बाल-

लबरेज़ है शराबे हक़ीक़त से जामे हिन्द
सब फ़ल्सफ़ी हैं ख़ित्त-ए-मग़्रिब के रामे हिन्द
यह हिन्दियों के फ़िक्र-ए-फ़लके रस का है असर
रफ़अ़त में आसमाँ से भी ऊँचा है बामे हिन्द

इस देश में हुए हैं हज़ारों मुल्के सरश्त
मशहूर जिन के दम से है दुनिया में नामे हिन्द
है राम के वजूद पे हिन्दुस्ताँ को नाज़
अहले नज़र समझते हैं इस को इमामे हिन्द
एजाज़ इस चिराग़े हिदायत का है यही
रौशन तरज़ सहर है जमाने में शामे हिन्द
तलवार का धनी था, शुजाअ़त में फ़र्द था
पाकीज़गी में, जोशे मोहब्बत में फ़र्द था।

सूफ़ियों के हिन्दी दोहे-

ख़ुद सूफ़िया-ए-किराम ने हिन्दी दोहे कहे। ह़ज़रत शेख़ 'शरफ़ुद्दीन यह़या मुनीरी' ह़ज़रत शेख़ 'अ़ब्दुल् ह़क़ रूदौली', और ह़ज़रत अ़ब्दुल् क़ुद्दूस गंगोही के दोहे मशहूर हैं। क़व्वाली में भजन का रंग ग़ालिब है जो हिन्दुओं ही के लिए पैदा किया गया, सूफ़िया-ए-किराम ने अपनी मोह़ब्बत, हमदर्दी, नर्मी, अच्छे आचरण, आपसी मुह़ब्बत और इन्सान दोस्ती से ग़ैर मुस्लिमों को अपनी ओर मायल करने की कोशिश करते रहे, कभी तलवार नहीं उठाई।

ह़ज़रत शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया (रह़०)

'ह़ज़रत शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया' हिन्दू जोगियों से बिना तकल्लुफ़ मिलते और उन की बातें ग़ौर से सुनतें, फ़वायद में है कि-

"एक बार 'ह़ज़रत निज़ामुद्दीन औलिया' के पास एक जोगी आया तो 'ह़ज़रत शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया' ने उस से पूछा कि तुम कौन सा तरीक़ा पसंद करते हो, और किस चीज़ पर अ़मल करते हो तो उस ने जवाब दिया कि हमारा ज्ञान यह बताता है कि इंसान के अन्दर दो जगत हैं, एक उच्चस्तरीय जगत और एक निम्न स्तरीय जगत, सर से नाभि तक तो आ़लमे अलवी या उच्चस्तरीय जगत है, और नाफ़ से पांव तक को आ़लमे सिफ़ली या निम्न स्तरीय जगत कहते

हैं। उच्चस्तरीय जगत में सच्चाई, सफ़ाई, नैतिकता अख़्लाक़ी और ह़ुस्न मामला होता है और निम्न स्तरीय जगत में निगरानी, पाकी और पारसाई या संयम शीलता होती है। **(इस्लाम मुसलमान और ग़ैर मुस्लिम, अल्लामा यूसुफ़ कर्ज़ावी पेज नं० ३१)**

ह़ज़रत ने जब यह बातें सुनीं तो फ़रमाया "मुझे यह बात पसन्द आई।" इसी तरह एक और जोगी 'ह़ज़रत फ़रीदुद्दीन गंज शकर' की ख़ानक़ाह आया तो उस ने बच्चों की पैदाइश के सम्बन्ध में बातचीत की, जिस को ह़ज़रत 'फ़रीदुद्दीन गंज शकर' ने बड़े शौक़ से सुना और कहा कि मैंने तुम्हारी गुफ़्तुगू को सुन कर अपने ज़ेहन में बिठा लिया है, और तुम भी अब मेरी बातचीत को ग़ौर से सुनो।[1]

इस प्रकार सूफ़ियों ने ज्ञान और अपने अच्छे आचरण के द्वारा इस्लाम से प्रभावित करते रहे, जिस से इस्लाम फैलता रहा। उन्होंने कभी तलवार नहीं उठाई परन्तु सबसे अधिक लोग उन्हीं के ज़रिए इस्लाम क़ुबूल करते रहे।

इस्लाम के हिन्दुस्तान में फैलाने का पाँचवा कारण

इस्लाम की शिक्षा के अलम्बरदार की ह़ैसियत से उलमा-ए-इस्लाम हर दौर में इस की बराबर कोशिश करते रहे कि शासकों को बेनकेल होकर अपनी मनमानी न करने देते और ह़क़ बात कहकर उन्हें मुमकिन ह़द तक राहे रास्ते पर लाते रहते। इस्लामी शिक्षा में ज़ालिम सुल्तान के सामने ह़क़ बात कहने को सब से बेहतर जिहाद क़रार देते और यह उलम-ए-इस्लाम का बड़ा कारनामा है कि वह अपनी जानें ख़त्रें में डाल कर भी यह फ़रीज़ा अदा करते रहते। ह़क़ीक़त तो यह है कि मुसलमानों में हमेशा ऐसे ही उ़लमा को एह़तिराम व एतिबार भी ह़ासिल होता रहा है।

उलमा-ए-इस्लाम और ह़क़-

जिन्होंने वक़्त के बादशाहों के हाथों सख़्त तकलीफ़ें झेलीं और उन के

१- विस्तार के लिए देखिए "हिन्दुस्तान के सलातीन उ़लमा, व मशायख़ के तअ़ल्लुक़ात पर एक नज़र

दरबारों से जुड़ने को अपनी इल्मी व दीनी शान के ख़िलाफ़ समझा। इमाम मालिक (रह़०) और इमाम अबू ह़नीफ़ा (रह़०) से लेकर हिन्दुस्तान में मुजद्दिद अल्फ़ सानी(रह़०) व शाह वली उल्लाह (रह़०) तक ऐसे उलमा-ए-किराम का एक लम्बा व शानदार सिल्सिला है जिन्होंने ह़क़ बात कहने का फ़रीज़ा अदा करने में हर तरह का ख़त्रा मोल लिया और हर परेशानी को ख़ुशदिली के साथ बर्दाशत की और बादशाहों को जुल्म से रोकते रहे, जिनके आचरण से प्रभावित होकर लोग इस्लाम स्वीकार करते रहे।

उलमा ही बादशाहों को नसीह़तें करते और मानव सम्मान और देश की उन्नति की ओर ध्यान आकृष्ट करवाते जिस की एक झलक इस प्रकार देखी जा सकती है कि उलमा मुस्लिम शासको को किस प्रकार नसीह़त करते थे उसका सह़ी अन्दाज़ा शाह वली उल्लाह (रह़०) के लेख से किया जा सकता है, जो बिना किसी भेदभाव के होती थी वह इस प्रकार है-

विश्व प्रसिद्ध आ़लिम शाह वलीउल्लाह (रह़०) की नसीह़तें, मुस्लिम बादशाहों के नाम-

१- दौलत की अस्ल बुनियाद मेह़नत है। मज़दूर और काश्तकार ताक़त का ज़रिया हैं। आपसी मदद, शहरियत की रुह़ है, जब तक कोई व्यक्ति मुल्क और क़ौम के लिए काम न करे, मुल्क की दौलत में उस का कोई ह़िस्सा नहीं।[१]

२- जुआ, सट्टा और अय्याशी के अड्डे ख़त्म किये जाएँ जिन की मौजूदगी में दौलत का सह़ी प्रबन्ध नहीं हो सकता, और बिना इस के यह कि क़ौम और मुल्क की दौलत की तक़सीम में बढ़ौतरी हो दौलत बहुत सी जेबों से निकल कर एक तरफ़ सिमट आती है।[२]

३- मज़दूर क़ाश्तकार और जो लोग मुल्क और क़ौम के लिए दिमाग़ी काम करें दौलत(की तक़्सीम) के अस्ल ह़क़दार हैं। उन की तरक़्क़ी और ख़ुशह़ाली है। जो निज़ाम इन क़ुव्वतों को दबाए वह मुल्क के लिए ख़त्रा है, उस

१- हुज्जतुल्लाहिल् बालिग़ा। २- हुज्जतुल्लाहिल् बालिग़ा।

को ख़त्म हो जाना चाहिए।[१]

४- जो समाज मेह़नत की सह़ी क़ीमत अदा न करे, मज़दूरों और काश्तकारों पर भारी टैक्स लगाए क़ौम का दुश्मन है, उस को ख़त्म हो जाना चाहिए।[२]

५- ज़रुरतमंद मज़दूर की रज़ामंदी क़ाबिले एतिबार नहीं। जब तक उस की मेह़नत की वह क़ीमत अदा न की जाए जो आपसी लेन देन के उसूल पर न हो वह ख़िलाफ़े क़ानून है।[३]

६- जो पैदावार या आमदनी आपसी सहयोग के उसूल पर न हो वह ख़िलाफ़े क़ानून है।[४]

७- काम का समय तय किया जाए मज़दूरों को इतना वक़्त ज़रुर मिलना चाहिए कि वह अख़्लाक़ी और रुहानी सुधार कर सके और उन के अन्दर भविष्य के सम्बन्ध में ग़ौर व फ़िक्र की सलाह़ियत पैदा हो सके[५]।

८- आपसी सहयोग का बहुत बड़ा ज़रिया तिजारत है, लिहाज़ा इस को सहयोग के उसूल पर ही जारी रहना चाहिए। या इस तरह ताजिरों के लिए जायज़ नहीं कि वह ब्लैक मार्केट या ग़लत क़िस्म के "कम्पिटीशन" से आपसी हमदर्दी को नुक़सान पहुँचाए, ऐसे ही हुकूमत के लिए दुरुस्त नहीं कि भारी टैक्स लगाकर तिजारत के फ़रोग़ व तरक़्क़ी में रुकावट पैदा करे या रुकावट डाले[६]

९- वह कारोबार जो दौलत के हेर-फेर को किसी ख़ास समुदाय में सुनिश्चित करे वह मुल्क को तबाह करने वाला है।[७]

१०. वह शाहाना निज़ामे ज़िन्दग़ी जिस में चन्द लोग या चन्द ख़ानदानों की ऐ़श व इ़श्रत की वजह से दौलत के सह़ी तक़सीम में ख़लल हो, वह इस का ह़क़दार है कि उस को जल्द से जल्द ख़त्म करके अ़वाम की मुसीबत ख़त्म की जाए और उन को सामने ज़िन्दग़ी का मौक़ा दिया जाए[८]।

१-२-३-४-५-६. हुज्जतुल्लाहिल् बालिग़ा ७- ऐज़न ८- हुज्जतुल्लाहिल् बालिग़ा।

११. ज़मीन का मालिके ह़क़ीक़ी अल्लाह (और ज़ाहिरी निज़ाम के लिह़ाज़ से स्टेट) है। नागरिकों की ह़ैसियत वह है जो किसी मुसाफ़िर ख़ाने में ठहरने वालों की। मिल्कियत का मतलब यह है कि उस के ह़क़ में दूसरे की दख़्ल अन्दाज़ी क़ानूनन मना हो।

१२. सारे इन्सान बराबर हैं। किसी को यह ह़क़ नहीं कि वह अपने आप को मालिके मुल्क, मालिके क़ौम या इन्सानों का मालिक समझे। न किसी के लिए जायज़ है कि वह किसी शासक के लिए ऐसे शब्द प्रयोग करे, जो अल्लाह के लिए प्रयोग होते हैं।

१३. स्टेट के अधिकारी की ह़ैसियत वह है जो किसी वक़्फ़ के मुतवल्ली की होती है। वक़्फ़ का मुतवल्ली अगर ज़रुरतमंद हो तो इतना वज़ीफ़ा ले सकता है कि आ़म नागरिक की तरह़ ज़िन्दगी गुज़ार सके।

हुकूमत की अहम ज़िम्मेदारियाँ-

शाह साह़ब ने हुज्जतुल्लाहिल्बालिग़ा में आम लोगों के फ़ायदे के लिए बह़स की है जिन का ह़ासिल यह है:-

१४. रोटी, कपड़ा, मकान और ऐसा योग्य बनाना कि वह शादी कर सके और बच्चों की शिक्षा-दीक्षा कर सके चाहे- जिस मज़ह़ब व नस्ल का हो यह हर इन्सान का पैदाईशी ह़क़ है।

१५. इसी तरह मज़ह़ब, नस्ल या रंग के किसी भेद-भाव के बग़ैर आ़म नागरिक मुल्क के मामलात में समानता के साथ अ़द्ल व इन्साफ़, उन के जान व माल की ह़िफ़ाज़त, उन के इ़ज़्ज़त की ह़िफ़ाज़त का ह़क़ आज़ादी का ह़क़ हर नागरिक में समानता का व्यवहार, यह हर नागरिक का बुनियादी ह़क़ है।

१६. इसी तरह ज़बान और तहज़ीब को ज़िन्दा रखना हर फ़िर्क़े (सम्प्रदाय)का बुनियादी ह़क़ है।

ह़ज़रत शाह इस्माईल शहीद (रह़०)

शाह इस्माईल शहीद (रह़०) तो उस वक़्त के मुसलमान बादशाहों की हुकूमत को भी गुमराह हुकूमत फ़रमाते और कहते थे कि इन को जड़ से उखाड़ फेंकना ऐन इस्लाम है और इन को फ़ना के घाट उतार देना ऐन इस्लाम है। शासक की बातें मानना शरीअ़त नहीं है न हर जाबिर व क़ाबिज़ के सामने गर्दन झुका देना दीन का हुक्म है। **(विस्तार के लिए देखिए "मन्सबे इमामत)**

ह़ज़रत शरफ़ुद्दीन यह़या मुनीरी (रह़०)

आ़लिमेदीन ह़ज़रत 'शरफ़ुद्दीन यह़या मुनीरी' ने 'फ़ीरोज़ शाह तुग़लक़' को इन्साफ़ की तल्क़ीन करते हुए लिखा था कि "जो कोई मज़लूम की फ़रियाद नहीं सुनेगा तो उसे क़ब्र के अन्दर आग के सौ कोड़े मारे जायेंगे।"

ह़ज़रत अ़ब्दुल् कुद्दूस गंगोही (रह़०)

ह़ज़रत अ़ब्दुल् कुद्दूस गंगोही ने सिकन्दर लोधी को लिखा था कि "एक सिकेण्ड का इन्साफ़ साठ साल की इ़बादत से बेहतर है और यह ह़दीस लिखी कि-

"क़ियामत के दिन अल्लाह तआ़ला के नज़दीक सब से मह़बूब शख़्स इन्साफ़ पसंद इमाम होगा।" इसलिए कि उस ने अ़द्ल का हुक्म मख़्लूक़ के लिए किया था। **(हिन्दुस्तान के बादशाही उ़ल्मा और मशायख़ के तअ़ल्लुक़ात पर एक नज़र)**

ज़ुल्म के ख़िलाफ़-

यह इन्साफ़ की बातें देश के प्रत्येक नागरिक के लिए होती थीं, किसी भेदभाव के बिना उलमा ग़ैर मुस्लिमों पर कोई ज़ुल्म होते देखते तो उस के ख़िलाफ़ अपनी आवाज़ बुलन्द करना अपना फ़र्ज़ समझते थे और इस्लाम के आ़दिलाना हुक्मों को साफ़-साफ़ बयान कर देते थे।

जबरन मुसलमान न बनाने का फ़त्वा

तारीख़ में यह वाक़िआ मह़फ़ूज़ है कि उ़स्मानी ख़लीफ़ा सुल्तान सलीम अव्वल को एक बार यह ख़याल आया था कि वह अपनी मिल्कियत में मुसलमानों की संख्या बढ़ाने के लिए ईसाइयों पर दबाव डालकर मुसलमान बना लें मगर मज़हबी रहनुमा व मुशीर शेख़ुल् इस्लाम 'मुफ़्ती आफ़्नंदी' ने इस की मुख़ालिफ़त की और उस का फ़त्वा देने से इंकार कर दिया कि किसी को जबरन मुसलमान बनाया जाए।

लोधियों के दौर का यह वाक़िआ भी उ़लमा के विचार पर काफ़ी रौशनी डालता है।

" सिकन्दर लोधी के ज़माने में कुश्तर के एक तालाब में हिन्दू बड़ी संख्या में जमा होते और स्नान करते, सिकन्दर ने चाहा कि इस कुन्ड को तबाह करके इस इज्तिमाअ़ को रोक दे। उस ज़माने के एक आ़लिम मौलाना अ़ब्दुल्लाह से फ़त्वा लिया तो उन्होंने जवाब दिया कि-

" ग़ैर मुस्लिमों की क़दीम रस्म को उनके लिए रोकना और उनके क़दीम बुत ख़ाने को तोड़ना जायज़ नहीं।"

सिकन्दर को यह जवाब पसन्द नहीं आया तो उस ने कहा यह तरफ़दारी का फ़त्वा है और अपनी नाराज़गी का इज़हार किया लेकिन उन्होंने बड़ी ह़िम्मत और सफ़ाई से फ़रमाया कि मैंने शरीअ़त का मसला बयान कर दिया है, अगर शरीअ़त की परवाह नहीं तो फिर पूछने की ज़रुरत ही क्या थी?

(इस्लाम मुसलमान और ग़ैर मुस्लिम)

उलमा मज़लूमों के साथ-

उलमा व सूफ़िया-ए-किराम मज़लूमों और मुसीबत ज़दह लोगों की दिलजोई के लिए हमेशा तैयार रहते थे उन्होंने तअ़स्सुब व तंग नज़री से हमेशा नफ़रत की और रवादारी व मोह़ब्बत का पैग़ाम फैलाते रहे।

अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ संघर्ष में भी उलमा न सिर्फ़ पेश-पेश रहे, बल्कि उन्होंने हमेशा संयुक्त हिन्दुस्तानी नागरिकता का नारा बुलन्द किया और हमेशा उलमा हिन्दू व मुस्लिम एकता के अ़लम्बरदार रहे, उन्होंने तंगदिली व फ़िर्क़ा परस्ती के ख़िलाफ़ भरपूर संघर्ष किया। इसलिए कि वह इस्लामी रौशनी में ऐसा करना अपना फ़र्ज़ समझते थे।

भाग-4

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को युद्ध के आदेश मिलने से पूर्व की दशा

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के युद्ध से पूर्व

आचरण भ्रष्ट-

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के अभ्युद्ध के समय अ़रब अपने मनुष्यत्व को ही भूल चुके थे, मनुष्यों को विभिन्न वर्गो में इस प्रकार बांट दिया गया था कि कोई वर्ग देव तुल्य था तो कोई पशुओं से भी अधिक अशुद्ध, और आचरण इतना भ्रष्ट हो चुका था कि धर्मकारी और धर्म केन्द्र तक आचरण भ्रष्ट और पतित हो चुके थे।

मुह़म्मद (सल्ल०) का विरोध

इस्लाम का विरोध सबसे पहले मक्का निवासी इस्लाम के पैग़म्बर महामान्य ह़ज़रम मुह़म्मद (सल्ल०) की जाति कुरैश ही ने किया। यह जाति ईशदूत ह़ज़रत इब्राहीम (अ़लै०) की सन्तान थी, जिन्होंने अब से लगभग चार-पांच हज़ार वर्ष पहले अ़रब के निर्जन स्थान में अपने पुत्र इस्माईल (अ़लै०) के सहयोग से कअ़बः का निर्माण किया था।

इन्हीं के पुत्र ईशदूत ह़ज़रत इस्ह़ाक़ (अ़लै०) की सन्तान में ह़ज़रत मूसा, ह़ज़रत दाऊद ह़ज़रत ईसा और दूसरे अनेक ईश्वर दूत हुए और ह़ज़रत इब्राहीम ही के पुत्र ईशदूत ह़ज़रत इस्माईल की सन्तान में अन्तिम ईशदूत ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) हुए। यह और दूसरे ईशदूत जिस देश और जाति में हुए सबका सत्य सनातन धर्म मूलरूप में इस्लाम ही था और ईश्वर की ओर से तौरात, ज़बूर, इंजील इत्यादि जितनी पुस्तकें अवतरित हुईं वह सब इस्लाम की ही शिक्षा पर आधारित थीं।

इस्लाम का आदेश है कि केवल एक ईश्वर को ही उपास्य तथा पूज्य मानना, उसी की पूजा भक्ति तथा आज्ञा पालन करना और अपने को पूर्ण रूप

से उसी की अधीनता में दे देना।

धर्म भ्रष्ट-

यही था ईशदूतों का धर्म, विभिन्नता देश और काल के अनुसार कर्मकाण्ड में थी। कुरैश जाति कालान्तर से धर्मभ्रष्ट होकर एकेश्वरवादी से बहुदेववादी हो गई थी और अपने कअ़बः को जो संसार में एकेश्वरवाद अर्थात इस्लाम के केन्द्र के उद्देश्य से निर्माण किया गया था, उसे बहुदेवालय बना डाला था।

यहूदी और ईसाई-

यहूदी और ईसाई भी धर्मभ्रष्ट हो गए थे तथा तौरात और इंजील इत्यादि अपनी धर्म पुस्तकों को भ्रष्ट कर डाला था। यहूदियों की धर्मभ्रष्टता यह थी कि वह ह़ज़रत ईसा को ईशदूत और इंजील को ईश्वरीय पुस्तक ही नहीं मानते थे। ईसाईयों की धर्मभ्रष्टता यह थी कि उन्होंने ह़ज़रत ईसा को ईश्वर का पुत्र बना डाला था। इतना ही नहीं उन्होंने अपने स्वार्थपूर्ण इच्छा के अनुसार ईश्वरीय पुस्तकों को भी भ्रष्ट कर दिया था। मक्का में ईसाई और यहूदी न थे। बहुदेववादी कुरैश ही थे उनमें से जो लोग मुसलमान हो जाते उन पर वे अनेक प्रकार के अत्याचार करते, महाईशदूत भी उनके अत्याचार से सुरक्षित न थे।

मुट्ठी भर मुसलमान अपनी और महाईशदूत की रक्षा करने में भी असमर्थ थे, कुरैश ने निश्चय कर लिया था कि वह इस्लाम को चलने न देंगे इसे समाप्त करके छोड़ेंगे। परन्तु इस्लाम उनके अत्याचार के बीच फैलता ही चला जा रहा था।

आप (सल्ल०) पर और आपके अनुयाइयों पर अत्याचार के पहाड़ तोड़ने शुरू कर दिये। जिसका संक्षेप में विवरण इस प्रकार है।

ज़ुल्म के पहाड़

मक्का के काफ़िरों के अत्याचार को सुनकर एक साधारण मनुष्य के रोंगेटे खड़े हो जाते हैं कि मानवता किस प्रकार नष्ट हो चुकी थी कि इस्लाम स्वीकार करने वालों को इतना कष्ट दिया जाता था जिसे अनुमान भी नहीं लगाया जा

सकता।

ह़ज़रत बिलाल (रज़ि०) पर अत्याचार-

जब ह़ज़रत बिलाल (रज़ि०) ने इस्लाम स्वीकार किया तो काफ़िर उन्हें लोहे की ज़िरह पहना कर गर्मी की धूप में डाल देते और ऊपर से पत्थर की चट्टान रख देते ताकि इस्लाम धर्म छोड़ दें और कभी लड़कों को लगा देते जो मक्का की पहाड़ियों में घसीटते फिरते लेकिन ह़ज़रत बिलाल इस कष्ट को सहते और 'अहद-अहद' अर्थात- अल्लाह एक है अल्लाह एक है कहते।

(सुनन इब्ने माजा, पेज नं० १४)

ह़ज़रत ख़ब्बाब (रज़ि०) पर अत्याचार-

ह़ज़रत ख़ब्बाब (रज़ि०) ने जब इस्लाम स्वीकार किया तो उन्हें गर्म रेत पर लिटा दिया जाता जिस की वजह से कमर का गोश्त तक गल कर गिर गया था, एक दिन ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने उनकी पीठ देखी तो कहा आज तक ऐसी पीठ मेरी नज़र से नहीं गुज़री, ह़ज़रत ख़ब्बाब (रज़ि०) ने उत्तर दिया काफ़िर मुझे अंगारों पर लिटा कर घसीटा करते, जिस से मेरी कमर की चर्बी और ख़ून से वह आग बुझती। **(असदुल्ग़ाबा, तज़्किरः ख़ब्बाब बिन अरत)**

ह़ज़रत सुह़ैब व ह़ज़रत अ़म्मार (रज़ि०) पर अत्याचार-

ह़ज़रत सुहैब (रज़ि०) और ह़ज़रत अ़म्मार (रज़ि०) को काफ़िर लोहे की ज़िरहें पहना कर धूप में छोड़ देते लेकिन इससे उनके इस्लाम में कोई अन्तर न आता। **(असदुल्ग़ाबा, तज़्किरः सुहैब रज़ि०)**

ह़ज़रत अबू फ़कीह (रज़ि०) पर अत्याचार-

इसी प्रकार जब ह़ज़रत अबू फ़ाकीह (रज़ि०) ने इस्लाम क़ुबूल किया तो उनके पैर में बेड़ी डाल कर धूप में लिटा दिया जाता फिर पीठ पर पत्थर की चट्टान रख दी जाती यहां तक कि उनके हवास उड़ जाते, एक दिन असिया ने उनके पैर में रस्सी बांधी और लोगों को उनके घसीटने का आदेश दिया, उसके बाद उनको

तपती हुई ज़मीन पर लिटा दिया, अचानक एक व्यक्ति उधर से गुज़रा तो उमय्या ने मज़ाक़ उड़ाने के लिए कहा तेरा पालनहार यही तो नहीं? उस पर बोले "मेरा और तेरा परवरदिगार अल्लाह तआ़ला है।" इस पर उसने ज़ोर से उनका गला घूँटा लेकिन उसके बेदर्द भाई को जो उस समय उस के साथ था उस पर भी तसल्ली नहीं हुई और उसने कहा कि इसको और तकलीफ़ दो।

(असदुल्ग़ाबा, तज़्किरः अबू फ़कीह)

ह़ज़रत सुमइया (रज़ि०) पर अत्याचार-

जब ह़ज़रत सुमइया (रज़ि०) जो ह़ज़रत अम्मार (रज़ि०) की माँ थीं इस्लाम क़ुबूल किया तो काफ़िरों ने उनको धूप में लिटा दिया उसी ह़ालत में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का गुज़र हुआ तो फ़रमाया सब्र करो तुम्हारा ठिकाना जन्नत में है।"

लेकिन अबूजेह्ल को इस पर भी तसल्ली नहीं हुई और उसने बरछा मार कर उनको शहीद कर दिया यही वह पहली औ़रत हैं जिनकी शहादत सबसे पहले हुई। **(असदुल्ग़ाबा, तज़्किरः सुमइया रज़ि०)**

ह़ज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी (रज़ि०) पर अत्याचार-

ह़ज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी (रज़ि०) ने जब कअ़बः शरीफ़ में अपने इस्लाम स्वीकार करने का एलान (घोषणा) किया तो उन पर काफ़िर टूट पड़े और मारते-मारते ज़मीन पर लिटा दिया।

(मुस्लिम शरीफ़, मनाकिब फ़ज़ायल, ह़ज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी रज़ि०)

ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) पर अत्याचार-

ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) ने जब पहले पहल कअ़बः में क़ुर्आन मजीद की कुछ आयतें बुलन्द आवाज़ से पढ़ीं तो काफ़िरों ने उनको इतना मारा कि चेहरे पर निशान पड़ गये लेकिन उन्होंने सह़ाबा से कहा कि "यदि कहो तो कल फिर इसी प्रकार बुलन्द आवाज़ में क़ुर्आन की तिलावत करूँ।

(असदुल्ग़ाबा तज़्किरः अ़ब्दुल्लाह बिन मस्ऊद रज़ि०)

ह़ज़रत उ़स्माने ग़नी (रज़ि०) पर अत्याचार-

ह़ज़रत उ़स्माने ग़नी (रज़ि०) सम्मानित लोगों में से थे परन्तु जब उन्होंने इस्लाम स्वीकार किया तो स्वयं उनके चचा ने उन्हें रस्सी में बांध दिया।

(तबक़ात इब्ने सअ़द, तर्जुमः उ़स्मान बिन अ़फ़्फ़ान रज़ि०)

ह़ज़रत ज़ुबैर बिन अव्वाम (रज़ि०) पर अत्याचार-

ह़ज़रत ज़ुबैर बिन अव्वाम (रज़ि०) ने जब इस्लाम स्वीकार किया तो उनके चचा उनको चटाई में लपेट कर लटका दिया करते और नीचे से उनकी नाक में धुआं दिया करते थे। **(अत्तबरी, तज़्किरः ज़ुबैर बिन अव्वाम रज़ि०)**

ह़ज़रत सई़द बिन ज़ैद (रज़ि०) पर अत्याचार-

ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) के चचा ज़ाद भाई सईद बिन ज़ैद (रज़ि०) ने इस्लाम स्वीकार किया तो ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने उनको रस्सियों में बांध दिया था।

(बुख़ारी, किताबुल् इकराह)

ह़ज़रत आ़इशा बिन अबी रबीअ़ः व ह़ज़रत सल्मः बिन हिशाम (रज़ि०) पर अत्याचार-

इसी प्रकार ह़ज़रत आ़इशा बिन अबी रबीअ़ः (रज़ि०) और ह़ज़रत सल्मः बिन हिशाम (रज़ि०) जब इस्लाम लाए तो काफ़िरों ने दोनों के पैरों को एक साथ बांध दिया था। **(तबक़ात इब्ने सअ़द, तज़्किरः वलीद बिन वलीद)**

ह़ज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) पर अत्याचार-

ह़ज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) ने इस्लाम स्वीकार किया तो एक भाषण में लोगों को इस्लाम की ओर बुलाया तो काफ़िर सुनते ही उन पर टूट पड़े और इतना मारा कि ह़ज़रत अबूबक्र (रज़ि०) के क़बीले बनू तैम को उनकी मौत का विश्वास हो गया, और वह उनको एक कपड़े में लपेट कर घर ले गये, शाम के

समय उनकी आँख खुली तो तुरन्त ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का हाल पूछा, अब परिवार वाले भी अलग हो गये थे लेकिन उन्हें बस उस मह़बूब नबी की रट थी, फिर आप को ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) तक पहुंचाया गया। इस पर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने यह ह़ालत देखी तो उनकी तरफ़ बढ़े और उनका बोसा दिया और आँखें भर आईं। **(असदुल्ग़ाबा, तज़्किरः उम्मुल ख़ैर)**

मुसलमानों का बहिष्कार-

हिजरत (अर्थात धर्म हेतु देश त्याग) इस घोर अत्याचार के बाद ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने मुसलमानों को अनुमति दे दी कि वे हब्शा चले जाएँ। इस तरह कुछ लोग हब्शा चले गये परन्तु मक्का में बराबर अत्याचार होता रहा, कुरैश ने क्रुद्ध होकर महाईशदूत और मुसलमानों का बहिष्कार कर दिया, बहिष्कार भी ऐसा घोर कि मुसलमानों को जीवन सामग्री तक न मिलती थी, वृक्षों के पत्ते खा-खा कर जीवन व्यतीत करना पड़ा। कुरैश बहिष्कार करके भी इस्लाम के आन्दोलन को रोकने में सफ़ल नहीं हुए तो महाईशदूत की हत्या पर कटिबद्ध हो गए। यहाँ तक कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और मुसलमानों को भी अपनी जन्म भूमि में रहना असम्भव हो गया, इस प्रकार मक्का में तो यह दशा थी, परन्तु मदीना में तेज़ी से इस्लाम फैल रहा था।

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ह़त्या का षडयंत्र-

मक्के में १३ साल तक महाईशदूत और मुसलमान भयंकर अत्याचार की चक्की में पिसते रहे। परमेश्वर ने जिस उद्देश्य से महामान्य मुह़म्मद (सल्ल०) को ईशदूत के पद पर नियुक्त किया था उसको पूरा होना था। अतः मक्के से दो सौ मील दूर मदीने में इस्लाम फैलना आरम्भ हो गया और १३ वर्ष पूरा होते-होते मदीना निवासी बड़ी संख्या में मुसलमान हो गए। उनके निमन्त्रण पर मक्के के मुसलमान देश त्याग करके मदीना चले गये। अन्त में जिस रात कुरैश महाईशदूत की हत्या के उद्देश्य से उनका घर घेरे खड़े थे। परमेश्वर की रक्षा में वह उसी घर से निकले और मदीने की ओर प्रस्थान कर गये।

इस्लाम का प्रकाश मदीने में-

ह़ज के मौसम में मदीने का एक समूह मक्का आया ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने उनको इस्लाम की शिक्षा दी तो उन्होंने इस्लाम को स्वीकार कर लिया फिर वह लोग अगले वर्ष और लोगों को मक्का लेकर आये जिन्हें ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने कुछ उपदेश दिये जिससे उन लोगों ने भी इस्लाम स्वीकार कर लिया तो ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने उनकी शिक्षा के लिए एक साथी को मदीना भेजा जिनके द्वारा वहाँ घर-घर इस्लाम फैल गया।

मदीना वालों का आग्रह-

तीसरे वर्ष मदीने के मुसलमानों का एक बड़ा समूह ह़ज करने मक्का आया और उसने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से आग्रह किया कि आप और आप के साथियों पर अत्याचार हो रहा है इसलिए आप हमारे यहां चले आएं और हम आप के जान माल और हर प्रकार से आपकी रक्षा करेंगे आपने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और मुसलमानों को मदीना जाने की आज्ञा दे दी। अतः हब्शा की ह़िजरत के बाद यह दूसरी ऐतिहासिक हिजरत थी।

मक्कावासियों की शत्रुता-

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के देश त्याग के बाद भी मक्का निवासियों के शत्रुता की आग शान्त न हुई और मदीना वालों को धमकियाँ देनी शुरु कर दीं और काफ़िरों ने मदीने पर आक्रमण करने की योजना बनाई। इस परिस्थित में अब धर्म रक्षा का ही प्रश्न न था बल्कि प्राण रक्षा का भी प्रश्न आ गया था। क़ुरैश तो इस्लाम का उन्मूलन करने का प्रण किए हुए थे, उन्होंने मदीने पर आक्रमण आरम्भ कर दिया। अब तक ईश्वर की ओर से मुसलमानों को युद्ध की अनुमति न थी, परन्तु अब मुसलमानों को युद्ध की अनुमति मिल गई। मुसलमानों और मक्का निवासियों में कई युद्ध हुए।

मदीने और इसके निकट यहूदियों की भी बस्तियाँ थीं, वह भी मक्का निवासियों के सहायक बन गए, उनसे भी युद्ध हुआ और वह समाप्त हो गए।

उसी बीच रूमी साम्राज्य से भी युद्ध हुआ, ईरान का शासक भी विरोधी बन गया, उसका बस चलता तो वह इस्लाम और मुसलमानों को समाप्त कर देता। महाईशदूत के देश त्याग के आठवें वर्ष के पूर्ण होते-होते मक्का निवासियों की शक्ति समाप्त हो गई और मक्का नगर पर महाईशदूत का अधिकार हो गया। अब मक्का निवासियों को विश्वास हो गया था कि महामान्य ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) सच्चे ईशदूत हैं, अतः वह मुसलमान हो गए। उनके मुसलमान होते ही अ़रब निवासी मदीने आ-आकर मुसलमान होने लगे, इस प्रकार अ़रब में इस्लाम तथा इस्लामी शासन स्थापित हो गया। यह हैं इस्लामी जिहाद का इतिह़ास।

हिजरत के बाद पहला काम-

ह़ुज़ूर (सल्ल०) ने हिजरत के बाद पहला काम यह किया कि मदीना की सीमाएँ क़ायम करके उस को ह़रम क़रार दे दिया, जिस को मौजूदा दौर की मुक़द्दस और ममनूआ इलाक़े (Open City) कहते हैं।

इस का मतलब यह होता है कि उस शहर के अन्दर और उस शहर के आसपास अहले शहर मुख़ालिफ़ीन से जंग करना नहीं चाहते। अगर अहले मक्का ने ह़रम मदीना के तक़द्दुस के ख़िलाफ़वर्ज़ी की तो मदीना पर भी मक्का की तक़्दीस की ज़िम्मेदारी न रहेगी।

मदीना के यहूदी क़बायल से सुलह़-

आप (सल्ल०) ने मदीना के यहूदी क़बायल से सुलह़ का मुआ़हिदा फ़रमाया।

मुआ़हिदा के अहम शब्द इस प्रकार हैं-

"कोई गिरोह दूसरे पर ह़मला नहीं करेगा। दोनों लोगों को मज़हबी आज़ादी ह़ासिल होगी, उन के मज़हबी काम में कोई रुकावट नहीं करेगा। यहूद मुसलमानों के दुश्मनों से साज़ बाज़ नहीं करेंगे। अगर कोई दुश्मन ह़मला करेगा तो दोनों गिरोह मिलकर उस का मुक़ाबला करेंगे और जंग के ख़र्चे दोनों गिरोह बर्दाशत करेंगे।

इसी के साथ आप ने मदीना के आस-पास क़बायल की ओर तवज्जोह

फ़रमाई, उन को अपना दोस्त बताया। उन से मुआ़हिदे किये। मुसलमान और मुआ़हिदीन की फ़ौजी तर्बियत शुरु कर दी।

मुसलमानों का तो मरना जीना सब अल्लाह ही के लिए हो चुका था, ख़ानदानी, नस्ली और निस्बती गुरुर व फ़ख़्र ख़त्म कर दिया गया था, साथ ही साथ आर्थिक ऊँच-नीच भी दूर कर दी गईं। हमदर्दी, ग़मगुसारी ईसार व एह़सान एक दूसरे के लिए रह़मत बन गये थे और ऐसी मुह़ब्बत और दिलदारी पैदा हो गई थी कि आसमान ने कभी इस की मिसाल नहीं देखी थी।

जहां आप ने मदीना का सियासी ढाँचा तैयार किया, वहीं अल्लाह तआ़ला के दिये हुए संविधान को इस्लामी रूप बना दिया और उस के अ़मल का ए़लान कर दिया। मुहाजिरीन व अन्सार में भाई-चारगी कराई जिस का ज़िक्र कुर्आन में इस तरह है:

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

إِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَهَاجَرُوْا وَجٰهَدُوْا بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَ
الَّذِيْنَ اٰوَوْا وَّ نَصَرُوْٓا اُولٰٓئِكَ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ؕ

अनुवाद-

"जो लोग ईमान लाए और उन्होंने हिजरत की, और अल्लाह की राह में अपने मालों और अपनी जानों के साथ जिहाद किया, वे और जिन लोगों ने उन्हें पनाह दी, और मदद की, वही लोग आपस में एक-दूसरे के वली (संरक्षक) हो रहे हैं;" (सूरः अन्फ़ाल-७२)

कुरैश-ए-मक्का जब हिजरत रोकने में नाकाम रहे, तो उन्होंने मदीना के सरदार अ़ब्दुल्लाह बिन उबई को जिसे हिजरत से पहले अहले मदीना अपना बादशाह बनाने की तैयारी कर चुके थे और जिस की तमन्नाओं का हुज़ूर (सल्ल०) के मदीना पहुँच जाने से ख़ात्मा हो गया था। उसको मक्का वालों ने ख़त लिखा कि-

मक्का वालों को ख़त मदीना वालों के नाम

"तुम लोगों ने हमारे दुश्मनों को पनाह दी है हम ख़ुदा की क़सम खाते हैं

कि उन को मदीना से निकाल बाहर कर दो, वरना हम सब तुम पर ह़मलाआवर होकर तुम्हारे मर्दों को क़त्ल कर देंगे और औ़रतों को बेइ़ज़्ज़त कर देंगे। लड़के लड़कियों को ग़ुलाम और लौंडियां बनायेंगे। रईसे मदीना सअ़द बिन मुआ़ज़ ने अबू जेहल की तहरीर (लेख) पढ़ीं[1]"।

कुरैश-ए-मक्का का खुल्लम खुल्ला एलाने जंग

यह वाक़िआ़त इस का सुबूत हैं कि कुरैशे मक्का ने न सिर्फ़ मुसलमानों से जंग की ठानी, बल्कि खुल्लम खुल्ला ए़लाने जंग भी कर दिया। अब हुज़ूर (सल्ल०) ने भी ज़रुरी समझा कि कुरैशे मक्का पर यह बात साफ़ कर दी जाए कि मदीना के मुसलमानों पर अब उस के रक्षा की ज़िम्मेदारी आती है। उन का फ़र्ज़ है कि वह अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरा करें।

यूं तो हुज़ूर (सल्ल०) ने हमेशा अहले मक्का से हमदर्दी व एह़सान का बर्ताव किया और यह बर्ताव हिजरत के बाद भी जारी रहा। मक्का में क़ह़त पड़ा तो आप मदीना में थे और अभी-अभी हिजरत करके आए थे और अहले मक्का के मज़ालिम के ज़ख़्म भरे भी नहीं थे, लेकिन हुज़ूर (सल्ल०) ने मदीना में बैठ कर दुआ़ फ़रमाई कि अल्लाह तआ़ला मक्का से अनाज का क़ह़त दूर फ़रमा दे, फिर इस का नज़्म किया।

इस से पहले आप ने कभी यह पसन्द नहीं किया कि मक्का वाले और उन के तिजारती क़ाफ़िले लूट लिए जायें। ह़ज़रत मुग़ीरा बिन शोअ़बा मुसलमान होने से पहले एक ग़ैर इस्लामी क़ाफ़िले के साथ हो गये। फिर मौक़ा पाकर तमाम क़ाफ़िले को मौत के घाट उतार दिया और तमाम माल जमा करके मदीना पहुँचे और इस्लाम क़ुबूल किया। **हुज़ूर (सल्ल०) ने उन से फ़रमाया-**

"मैं इस्लाम तो तुम्हारा क़ुबूल करता हूँ, लेकिन उस माल से बेज़ार और बेतअ़ल्लुक़ हूँ जो तुम लूट कर लाए हो और फ़रमाया कि जो कोई किसी को लूटे, वह हम में से नहीं है।"

ह़ज़रत सअ़ल्बा बिन ह़कम का बयान है कि एक ग़ज़वे में लश्कर-ए-इस्लाम

१- अल् बिदाया वन्निहाया- २५८: ३

के कुछ मुजाहिदीन ने दुश्मन क़बीले की चन्द बकरियाँ लूट लीं और उनको ज़ब्ह करके हांडियां चढ़ा दीं। आप (सल्ल०) को जब इस वाक़िये का इ़ल्म हुआ तो फ़रमाया हांडियाँ उलट दी जाएँ। **(सीरतुन्नबी भाग-२)**

मुसलमानों की कुव्वत

क़ुरैश ने जब एलाने जंग कर दिया तो ज़रुरी था कि उन को इस पर मजबूर किया जाता कि वह सुलह़ और अम्न का रास्ता अपना लें और जंग से रुक जाएँ, ताकि क़ुरैश महसूस कर लें कि अगर वह मुसलमानों के ख़िलाफ़ जारिह़ाना क़दम उठाएँगे और मुसलमानों को ज़ियारत बैतुल्लाह से महरूम करने का इरादा करेंगे, तो मुसलमान भी इतनी क़ुव्वत रखते हैं कि उन के तिजारती रास्ते को बन्द कर दें, जिस से उन के यहाँ ज़रुरियाते ज़िन्दगी की आमद बन्द हो जाएगी। उन की तिजारत को नुक़सान पहुँचेगा और वह आर्थिक मुश्किलात में मुब्तिला हो जायेंगे। इस उद्देश्य के लिए आप ने मुख़्तलिफ़ सराया भेजे। (सरया उस वफ़्द को कहते हैं जिस में हुज़ूर ख़ुद शरीक न हुए हों) इन तमाम सरयों की दो ख़ुसूसियतें क़ाबिले लिह़ाज़ हैं।

सरयों की विशेषता

१- तमाम सरयों में से किसी में न तो कोई ख़ूँरेज़ी हुई और न कोई क़ाफ़िला लूटा गया। जिस से साफ़ ज़ाहिर होता है कि इन सरयों का उद्देश्य क़ुरैश को तंबीह करना था।

२- तमाम सरयों में किसी अन्सारी को शरीक नहीं किया गया, बल्कि तमाम दस्ते आप ने मक्की मुहाजिरीन ही से मुरत्तब फ़रमाए, ताकि जहाँ तक मुम्किन हो, यह कशमकश क़ुरैश के अपने घरवालों तक ही सीमित रहे और दूसरे क़बीले इस में न उलझें। उधर से अहले मक्का मदीना की ओर दस्ते भेजते रहे, ताकि मुसलमानों को तंग किया जाए और अहले मक्का की धाक उन पर क़ायम रहे और साथ ही मुसलमानों की ताक़त का अन्दाज़ा भी किया जाए। इस के सुबूत में करज़ीन जाबिर फ़ेहरी का वाक़िया हमारे सामने है जिस की जवाबी कार्रवाई

के बाद ही से जंग के इमकानात अहले मक्का की तरफ़ से बढ़ गये थे और जंग ज़रुरी होती जा रही थी।

इस सिलूसिले में आप को सख़्त से सख़्त तकलीफ़ें पेश आईं लेकिन अम्न और अ़द्ल को आप ने हर मोड़ पर बाक़ी रखा, जिस की शहादत तारीख़े इस्लाम के बहुत से वाक़िआ़त से मिलती है।

किसी को बर्बाद नहीं किया

सबसे ज़्यादा अहम बात यह है कि आप के ग़ज़वात व सराया में जो जंग के मुक़ाबले पर आये उन को अम्न व राह़त की दौलत मिली, वह बर्बाद और तबाह नहीं हुए। ज़्यादा दिन नहीं गुज़रे थे कि मफ़तूह़, फ़ातिह़ीन के दोस्त और शुक्रगुज़ार बन गए।

जब कि दूसरी तरफ़ हम देखते हैं कि दुनिया में जितनी भी जंगे हुईं उन का नतीजा हमेशा मफ़तूह़ की तबाही व हलाकत होता है और फ़ातेह़ क़ौम से नफ़रत और दुश्मनी में ज़्यादती होती है।

ह़क़ीक़त में सात ऐसे ग़ज़वात हैं, जिन को जंग कहा जा सकता है। जिन का संक्षेप हम पेश करते हैं, जिस से आप देख लेंगे कि उन ग़ज़वात को भी यह नहीं कहा जा सकता कि मुसलमानों ने क़ुरैश या अपने दूसरे दुश्मनों से ज़ालिमाना जंग की हो।

ग़ज़वात व सराया की जो लम्बी फ़ेहरिस्त सीरत में सामने आती है। उन सब में ज़रुरी नहीं है कि लड़ाई ही हुई हो, बल्कि तारीख़ की आ़म भाषा में उन को ग़ज़वात या सराया कह दिया गया है। उन सब को जंग या लड़ाई कहना ग़लत है।

सरया का मक़सद अक्सर दुश्मनों की नक़्ल व ह़रकत का पता चलाना होता था ताकि दुश्मन मुसलमानों को बेख़बर पाकर अचानक कहीं ह़मला न कर बैठें, इस के अ़लावह उस का मक़सद दअ़वते इस्लाम और कभी मुजरिमों की सरज़निश भी होती थी। इस प्रकार मुख़्तलिफ़ ज़रुरतों के लिए ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने जब भी कोई जमाअ़त, चाहे वह दो ही आदमियों की क्यों न हो, कहीं रवाना फ़रमाई, उस को रायज भाषा में सरया कह दिया गया और जिस में हुज़ूर (सल्ल०) ख़ुद

शरीक हुए, उस को ग़ज़वा कह दिया गया, वरना अस्ल लड़ाईयाँ केवल सात हैं।

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की जंगों का संक्षिप्त परिचय

१- बद्र-

इस ग़ज़वा में ख़ुद क़ुरैश मुसलमानों पर चढ़ कर मदीना आए थे। क़ुरैश की संख्या एक हज़ार और मुस्लिम मुजाहिदीन केवल तीन सौ तेरह थे।

२- उहद-

इस में भी क़ुरैश-ए-मक्का ख़ुद चढ़कर मदीना आए थे इस में लश्कर-ए-क़ुरैश की संख्या तीन हज़ार और मुस्लिम मुजाहिदीन की संख्या सात सौ थी।

३- अह़ज़ाब-

क़ुरैश-ए-मक्का न केवल ख़ुद चढ़ कर आए थे बल्कि दूसरे अ़रब क़बायल को भी चढ़ा कर लाए थे। इस में उन की संख्या दस हज़ार से कम न थी और मुसलमान तीन हज़ार।

५- मुवत्ता-

इस में भी इब्तिदा रईसुल बक़ा शरजबील बिन अ़म्र ने की आप (सल्ल०) के क़ासिद को क़त्ल कर दिया, अपने क़ासिद के ख़ूँ बहा के लिए आप (सल्ल०) ने यह सरया रवाना फ़रमाया। जिससे यह जंग पेश आई। इस में मुस्लिम तीन हज़ार और ग़ैर मुस्लिम तीन लाख थे।

६- ख़ैबर-

जंग की इब्तिदाई तैयारियाँ यहूदियों की ओर से हुईं। हुज़ूर (सल्ल०) उन तैयारियों से बज़रिये वह्य बाख़बर हो गये, इस में उन की संख्या दस हज़ार थी और मुस्लिम मुजाहिदीन सवा सौ।

७- फ़तेह़ मक्का-

इस में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) जंग के इरादे से नहीं निकले थे, बल्कि जंग

को रोकने की शुरु से तद्बीर अख़्तियार की और उस की बड़ी निगरानी रखी कि मुसलमानों की ओर से पहल न हो। इसमें आस-पास के तमाम मुश्रिक मुक़ाबले पर थे और मुसलमान दस हज़ार थे।

८- हुनैन-

इस में भी आप जंग के इरादे से तशरीफ़ नहीं ले गये, बल्कि मुश्रिकीन ने ख़्वाह-मख़्वाह उस को मैदाने जंग बना दिया था। इसमें मुश्रिकों की संख्या चार हज़ार और मुसलमानों की बारह हज़ार थी।

९- तबूक़-

कोई मुक़ाबला नहीं हुआ, इसमें मुसलमानों की संख्या तीस हज़ार थी।

१०-अलबद्र-

कोई मुक़ाबला नहीं हुआ।

इन तमाम ग़ज़वात व सराया में मरने वालों व शोहदा, की कुल तअ़दाद दो हज़ार बताई जाती है। जिन में बनू क़ुरैज़ा भी शामिल हैं। जो कि तौरात के फ़ैसले के मुताबिक़ बद्अ़हदी और सरकशी के जुर्म में क़त्ल किये गये। और वह मुसलमान भी जिन को कुफ़्फ़ार ने धोके से क़त्ल कर दिया था, उन सब को मिलाकर कुल संख्या अट्ठारह सौ होती हैं।

इसी से अन्दाज़ा किया जा सकता है कि एक मुस्तक़िल निज़ाम के क़याम व बक़ा के लिए जिस में हर वक़्त मुसलमान ख़त्रात से घिरे हुए थे, दस साल के अ़र्से में अगर कुछ जंगें करनी पड़ीं तो क्या यह तअ़दाद इतनी ज़्यादा है कि जिस पर ज़ुल्म का इल्ज़ाम लगाया जा सके।

इन जंगों में क़ुरैश और दुश्मने इस्लाम का बर्ताव और जंगी तैयारियों को ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के बर्ताव से कीजिए तो पता चल जाएगा कि किस का अ़मल ज़ुल्मन और मज़हबी जुनून का था, और किस का अ़मल अम्न के क़ायम के लिए है।

इस्लाम के प्रचार का राज़-

इस्लाम के प्रचार का सब से बड़ा राज़ खुद पैग़म्बरे इस्लाम का मिसाली अख़्लाक़ और इन्सान से बेलौस मुहब्बत है। आप की पूरी ज़िन्दगी में कोई वाक़िआ ऐसा नज़र नहीं आता जहाँ आप ने जज़्बात में आकर और इस्लामी सत्ता के दायरे को बढ़ाने के लिए जंग किया हो। चूँकि इस का मक़सद सत्ता हथियाने या दुनिया की माल व दौलत हासिल करना न था, बल्कि इस्लाम की शिक्षाओं से दुनिया को अवगत कराना था[1]।

१- (सय्यद सुलेमान नदवी की 'अर्जुलुक़ुर्आन', मौलाना अब्दुल क़य्यूम नदवी की "तारीख़ें इस्लाम" डाक्टर हमीद उल्लाह की किताब "नबी करीम (सल्ल०) की सियासी ज़िन्दगी और अहदे नबवी के मैदान-ए-जंग" सर सय्यद अहमद ख़ान की "सीरत व ग़ज़वात" से सम्बन्धित किताबें, मौदूदी की किताब "अलजिहाद फ़िल् इस्लाम" और उन की दीगर तसानीफ़ जिन में मौलाना मौसूफ़ ने रौशनी डाली है से लिया गया है।)

भाग-5

इस्लामी जिहाद का तुलनात्मक वर्णन और आतंकवाद

जिहाद का अर्थ

जिहाद का अर्थ वस्तुतः युद्ध व लड़ाई नहीं, बल्कि इसका अर्थ है "जद्दोजहद करना, संघर्ष करना, जीतोड़ कोशिश करना, और कठिनाइयाँ व कष्ट उठाना।

जिहाद का पारिभाषिक अर्थ

जिहाद का पारिभाषिक अर्थ 'सय्यद सुलेमान नदवी (रह०)' ने लिखा है- "हक़ को (इस्लाम को) उन्नति और उसके प्रचार व प्रसार तथा उसकी सुरक्षा के लिए हर प्रकार की कोशिश और क़ुर्बानी को बर्दाशत करना और शारिरिक या माली व दिमाग़ी हर प्रकार की क़ुव्वतों (क्षमताओं) को जो अल्लाह की ओर से बन्दों को मिली है इस राह में ख़र्च करना, यहाँ तक कि इसके लिए अपनी और अपने क़रीबी रिश्तेदारों की, या बीवी बच्चों की, परिवार व क़ौम की, जान तक को क़ुर्बान कर देना, और हक़ का विरोध करने वालों और दुश्मनों की तमाम कोशिशों को तोड़ना और उनकी ओर से किये गये हमलों को रोकना, और उस के लिए युद्ध के मैदान में, यदि उनसे लड़ना पड़े तो, उसके लिए भी पूरी तरह तैयार रहना।"

(सीरतुन्नबी भाग ५ पेज २९९)

जिहाद और युद्ध में अन्तर

इस प्रकार जो लोग जिहाद का अर्थ केवल क़िताल या युद्ध ही समझते हैं, उन्हें पवित्र क़ुर्आन में जिहाद और क़िताल (युद्ध) सम्बन्धी आयतों पर ध्यान देना चाहिए कि-

"जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह" कहते हैं- "अल्लाह की राह में जिहाद करना और "क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह" कहते है- अल्लाह की राह में लड़ना। इन दोनों शब्दों का अर्थ अलग-अलग है, अर्थात हर जिहाद क़िताल नहीं बल्कि जिहाद

विभिन्न प्रकार-से होता है जिसमें से एक प्रकार क़िताल और शत्रुओं से लड़ना- भी है। जैसा कि सूरः निसा आयत ९५ में है:

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

لَا يَسْتَوِي الْقٰعِدُوْنَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ غَيْرُ أُولِي الضَّرَرِ وَالْمُجٰهِدُوْنَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ بِأَمْوَالِهِمْ وَأَنْفُسِهِمْ

फिर इसी आयत में आगे وَفَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجٰهِدِيْنَ عَلَى الْقٰعِدِيْنَ أَجْرًا عَظِيْمًا इस का मतलब यह है कि अल्लाह के लिए कलिमे को बुलन्द करने के लिए जो कोशिश की जाए, वह जिहाद है, हक़ की हिमायत और इशाअ़त के लिए जद्दोजहद करना, उस में जान व माल की क़ुर्बानी देना, बेख़ौफ़ होकर तकलीफ़ बर्दाश्त करना जिहाद है।

जैसा कि क़ुर्आन में है: إِنَّ اللّٰهَ اشْتَرٰى مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ أَنْفُسَهُمْ وَأَمْوَالَهُمْ بِأَنَّ لَهُمُ الْجَنَّةَ -

अनुवाद-

बेशक अल्लाह तआ़ला ने अहले ईमान से उन की जानों और मालों को ख़रीद लिया है इसलिए कि उन के लिए जन्नत है। **(सूरः तौबः -१११)**

मोमिन की जान उस का माल, उस की तमाम क़ुव्वतें केवल हक़ की हिमायत के लिए हैं। इस हक़ की कामियाबी और सरबुलन्दी के लिए मुसलमान तैयार रहे है, तो यह भी जिहाद है। ज़िन्दगी के इसी तसव्वुर ने इस ज़िन्दा क़ौम को पैदा किया था, जिस की तरक़्क़ी को किसी भी क़िस्म की जिस्मानी आज़माईश और तकलीफ़ें नहीं रोक सकीं।

चूंकि उन के दिल में जान व माल की मुहब्बत न थी। मुहम्मद (सल्ल०) ने यह नुक्ता उन को समझा दिया था कि उन के लिए हर काम जो दीने हक़ की हिमायत में होगा, वह जिहाद है, और उन के लिए आख़िरत में बड़े बदले की बशारत है।

मक्का में-

इस यक़ीन ने सह़ाब-ए-किराम में वह ज़ब्ब-ए-ईमानी पैदा कर दिया था कि मक्का में तेरह साल तक हर क़िस्म की तकलीफ़ों का मुक़ाबला किया और इस सब्र और बहादुरी के साथ किया कि ज़ालिम इस्लाम स्वीकार करने वालो को न रोक सके। रेगिस्तान की तपती धूप, पत्थर की सिलें, तौक़ व ज़न्जीरें, भूक की तकलीफ़, बाल बच्चों से जुदाई, माल व दौलत से दूरी और घरबार को छोड़ना, कोई चीज़ भी उन को न डगमगा सकी। फिर दस साल जिस तरह मदीना में तलवार की छांव में गुज़ारे, वह दुनिया को मालूम है। उनके सब्र व इस्तिक़लाल ने दुश्मन को ज़लील कर दिया था, मोमिनीन का यह पूरा दौर जिहादी है।

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया-

" जिहाद तो क़ियामत तक जारी रहेगा, न किसी ज़ालिम का जुल्म उस को रोक सकता है, न किसी आ़दिल का अ़द्ल उस की ज़रुरत को ख़त्म कर सकता है।" जिहाद के माने केवल जंग समझना इस के पूरे माने से नवाक़फ़ियत है।

(सीरतुन्नबी भाग-२)

बेहतरीन जिहाद-

ह़दीस शरीफ़ में है कि बेहतरीन जिहाद वह है जो अपने नफ़्स के साथ किया जाए। ह़क़ीक़त यह है कि दुनिया से शर व फ़साद, जुल्म,ह़क़तल्फ़ी और बुराईयों को मिटाने के लिए संघर्ष करना जिहाद है, चाहे वह तलवार से हो, या क़लम से, या ज़बान से, या अ़मल व अख़्लाक़ से, और दलील की क़ुव्वत से। सूरः फ़ुरक़ान की आयत ५२ में है:

فَلَا تُطِعِ الْكٰفِرِيْنَ وَجَاهِدْهُمْ بِهٖ جِهَادًا كَبِيْرًا

अनुवाद-

"तो आप काफ़िरों की बात न मानिए और इस (क़ुर्आन) के ज़रिए उनसे जिहाद कीजिए, बड़ा जिहाद"।

इस्लाम ने मुसलमानों को ह़क़ के लिए हर मुसीबत और तकलीफ़ पर साबित

क़दम रहने और ज़रुरत पड़ने पर जान की बाज़ी लगाने की तअ़लीम दी है। इसलिए उन तमाम लड़ाईयों का नाम जिहाद हुआ, जो दीने ह़क़ की ह़िमायत के लिए दुश्मनों से लड़ी गई।

जिहाद ज़ाती फ़ायदे के लिए नहीं-

इस्लाम का नज़रिया जिहाद, दूसरी तमाम लड़ाईयों से भिन्न है। मक़सद और नतायज की ह़ैसियत से इस्लामी जिहाद किसी क़िस्म के ज़ाती मफ़ाद या हठधर्मी या क़ौमी, या मुल्की इख़्तिलाफ़ात की बुनियाद पर नहीं होता, बल्कि उस का एक मक़्सद मख़्लूक़े ख़ुदा को शैतानी ताक़तों से आज़ाद करा के सामूहिक अ़द्ल और अम्न क़ायम करना होता है, ह़ुज़ूर (सल्ल०) और सह़ाब-ए-किराम की तमाम कोशिशें केवल इसी एक मुक़द्दस मक़्सद के लिए थीं।

जिहाद का उद्देश्य

इस्लामी जिहाद का मक़्सद "पैग़ामे अम्न" है। यह इन्सानों को ज़ुल्म व जब्र, मआ़शी ख़स्ताह़ाली और अख़्लाक़ी पस्ती से निकालने की एक साफ़ सुथरी कोशिश है।

तारीख़े इस्लाम ऐसे हज़ारों वाक़िआ़त से भरी पड़ी है कि ख़ुद ह़ुज़ूर (सल्ल०) ने और सह़ाब-ए-किराम ने अपने दुश्मनों को न सिर्फ़ माफ़ किया, बल्कि उन के साथ वह अच्छा सुलूक भी किया, जिस का नक़्श उन के दिल पर बैठ गया। आप का बर्ताव और अ़मल, जंग के बाद भी ऐसा होता कि दुश्मन का ख़ून बहाने के बजाए उन के सामने इन्सानी अख़्लाक़ और शराफ़त का ऐसा नमूना पेश किया जाता कि वह हमारे जिहाद के मक़्सद को आसानी से समझ लेते।

ह़ुज़ूर (सल्ल०) का मक़्सद सिर्फ़ यही न था कि लोगों की अख़्लाक़ी इस्लाह़ कर दी जाए, बल्कि आप वास्तव में इन्सानों की इज्तिमाअ़ी ज़िन्दगी में बुनियादी इन्क़िलाब लाना चाहते थे और क़ौमी व नस्ली फ़लाह़ के तरीक़े को बदल कर उस की जगह ख़ालिस अल्लाह की फ़रमाबरदारी का एह़सास व शुऊर पैदा करना

चाहते थे। कुर्आन के अह़कामे जिहाद से इस पर पूरी तरह रौशनी पड़ती है।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

"كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ"

"तुम पर जिहाद (क़िताल) फ़र्ज़ किया गया है।"

यह हुक्म मिल्लत के हर व्यक्ति को दिया जा रहा है जिस का उद्देश्य ह़क़ की राह में हमेशा जिहाद है।

यह वह जिहाद है, जो हर मुसलमान को हर वक़्त पेश आता रहता है।

हर मुसलमान के लिए जिहाद-

हुज़ूर (सल्ल०) के हर उम्मती पर यह फ़र्ज़ है कि दीन की ह़िमायत, दीनी इ़ल्म का प्रसार, दीन की इशाअ़त, ह़क़ की मदद, अच्छाई का हुक्म और बुराई की रोकथाम, इन्साफ़ का प्रबन्ध, ज़ुल्म का मुक़ाबला करें और अल्लाह के हुक्मों को पूरा करने में हर वक़्त लगा रहे, यहाँ तक कि उस के ज़िन्दगी की हर ह़रकत व सुकून एक जिहाद बन जाए। यही वह इस्लामी जिहाद है, जो मुसलमानों के कामियाबी की कुन्जी है।

जिहाद का शरअ़ी हुक्म

जिहाद की शरई़ ह़ैसियत को बयान करते हुए साह़िबे दुर्रे मुख़्तार लिखते हैं।

هو فرض كفاية ابتداء
ان قام به البعض سقط
عن الكل الخ
(تنوير الابصار ص٣٤٥ ج٣)

जिहाद सबसे पहले 'फ़र्ज़ किफ़ाया' है। अगर कुछ लोग जिहाद के फ़रीज़े को पूरा करने वाले हों तो सब की ओर से फ़र्ज़ियत अदा हो जाएगी वरना सब के सब जिहाद को छोड़ने से गुनाहगार होंगे और (उस समय) जिहाद 'फ़र्ज़े ऐन' बन जाएगा।

अगर कभी ऐसे ह़ालात मुसलमानों पर आ जाएँ जिसमें अमीर मुसलमानों

को अल्लाह के रास्ते में जिहाद के लिए आवाज़ दे तो सारे लोगों पर जिहाद फ़र्ज़ हो जाता है। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़तेह़ मक्का के मौक़े पर फ़रमाया-

عن ابن عباسؓ قال قال رسول
الله صلى الله عليه وسلم
يوم الفتح فتح مكة لا هجرة
ولكن جهاد ونية واذا
استنفرتم فانفروا
(مسلم ص٤٤٢ ج٢)

ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़तेह़ मक्का के दिन फ़रमाया, "अब कोई हिजरत (मक्का से मदीना की तरफ़) वाजिब नहीं क्योंकि वह हिजरत जो मुसलमानों के एज़ाज़ व तक़वियत के लिए फ़र्ज़ हुई थी फ़तेह़ मक्का के बाद ह़ालात बदल जाने की वजह से ख़त्म हो गई, लेकिन जिहाद और नियत भी इस फ़ज़ीलत के हुसूल के लिए ता क़ियामत बाक़ी हैं। और जब इमामुल मुस्लिमीन कुफ़्फ़ार के मुक़ाबले में जिहाद के लिए तलब करे तो ज़रुर जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह के लिए निकल पड़ो।"

(मुस्लिम भाग-२)

कुर्आन में अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَقَاتِلُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ الَّذِيْنَ
يُقَاتِلُوْنَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا
يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ ۝

और तुम लड़ो अल्लाह की राह में उन लोगों के साथ जो तुम्हारे साथ लड़ने लगें और ह़द से मत निकलो, वाक़ई अल्लाह तआ़ला ह़द से निकलने वालों को पसन्द नहीं करता।

(सूरः बकरः १९०)

व्याख्या- ज़ीकअ़दः ६ हि० में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) उ़मरह के लिए मदीना से मक्का निकले, उस वक़्त मक्का मुश्रिकीन के क़ब्ज़े और हुकूमत में था, उन लोगों ने ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और आप के साथियों को मक्का के अन्दर न जाने दिया और उ़मरह न कर सके। आख़िर बड़े गुफ़्तगू के बाद यह मुआ़हिदा

हुआ कि आइन्दा साल उ़मरह अदा फ़रमाएँ।

अतः ज़ीक़अ़दः ७ हि० में फिर आप इसी मक़सद से तशरीफ़ ले चले। लेकिन उस के साथ ही मुसलमानों को यह अन्देशा हुआ कि शायद मुश्रिकीन अपना मुआ़हिदा पूरा न करें, और कहीं लड़ाई झगड़ा न हो जावे तो ऐसी ह़ालत में ख़ामोशी बेहतर नहीं है और अगर मुक़ाबला किया जावे तो ज़ीक़अ़दह में, कि उस वक़्त तक इस महीने में और ज़िल्ह़िज्ज, मुह़र्रम और रजब में क़त्ल व क़िताल मना था। इसलिए कि यह चार महीने हुर्मत वाले कहलाते थे, मुसलमान इस की वजह से परेशान थे। अल्लाह तआ़ला ने यह आयतें नाज़िल फ़रमाईं और कुफ़्फ़ार की तरह़ उन ख़ास मुआ़हिदा करने वालों के साथ बेवजह आपसी मुआ़हिदा के तुम को अपनी ओर से क़िताल शुरु करने की इजाज़त नहीं। लेकिन अगर वह लोग ख़ुद अहद तोड़ें और तुम से लड़ने पर आमादा हो जावें तो उस वक़्त तुम किसी तरह़ का अन्देशा दिल में मत लाओ और बेतकल्लुफ़ तुम भी लड़ो। अल्लाह की राह में उन लोगों के साथ जो अ़हद को तोड़कर तुम्हारे साथ लड़ने लगें और ख़ुद से मुआ़हिदा मत तोड़ो कि अ़हद (प्रतिज्ञा) तोड़ कर लड़ने लगो। अल्लाह तआ़ला शरअ़ी क़ानून से निकलने वालों को पसन्द नहीं करता।

दो सूरतें-

इस्लाम के ख़िलाफ़ जिहाद व क़िताल के नतीजे में दो सूरतें पैदा हो सकती थीं एक यह कि वह मुसलमानों पर ज़ुल्म व ज़ोर से बाज़ आ जाएँ। चाहे इस तरह़ कि इस्लामी बिरादरी में दाख़िल होकर या इस तरह़ कि अपने मज़हब पर रहते हुए मुसलमानों पर ज़ुल्म व सितम को बन्द कर दें और मुआ़हिदा कर लें।

(मुआ़रिफ़ुल क़ुर्आन २३२)

وقاتلوا في سبيل الله الذين يقاتلونكم ولا تعتدوا ۔ الآية

और लड़ो अल्लाह की राह में उन लोगों से जो लड़ते हैं तुम से और किसी पर ज़्यादती न करो।

व्याख्या-

इस पर सारी उम्मत का इत्तिफ़ाक़ है कि हिजरत मदीना से पहले कुफ़्फ़ार के साथ जिहाद व क़िताल मना था, उस वक़्त की तमाम आयात क़ुर्आनी में

मुसलमानों को कुफ़्फ़ार की तकलीफ़ों पर सब्र और दर गुज़र से काम लेना बताया गया था, हिजरत मदीना के बाद सब से पहले इस आयत में क़िताल कुफ़्फ़ार का हुक्म आया, सिद्दीक़े अकबर से एक रिवायत यह भी है कि क़िताल कुफ़्फ़ार के सम्बन्ध की पहली आयत यह है:-

मुजाहिदीन को हिदायतें-

मुह़म्मद (सल्ल०) की हिदायात जो मुजाहिदीने इस्लाम को जिहाद के समय दी जाती थीं, वह सह़ीह़ बुख़ारी व मुस्लिम में ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर (रज़ि०) की एक ह़दीस में है-

نهى رسول الله صلى الله عليه وسلم عن قتل النساء والصبيان

रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने औ़रतों और बच्चों के क़त्ल से मना फ़रमाया है।

(बुख़ारी, मुस्लिम)

और अबूदाऊद शरीफ़ में ह़ज़रत अनस (रज़ि०) से रिवायत है कि जिहाद पर जाने वाले सह़ाबा को रसूल करीम (सल्ल०) की यह हिदायतें हैं-

तुम अल्लाह के नाम पर, रसूलुल्लाह की मिल्लत पर जिहाद के लिए जाओ, किसी बूढ़े ज़ईफ़ कमज़ोर को और छोटे बच्चे को या किसी औ़रत को क़त्ल न करना। **(मज़हरी)**

ह़ज़रत सिद्दीक़े अकबर (रज़ि०)ने जब यज़ीद बिन अबी सुफ़्यान को मुल्क शाम भेजा तो उन को यही हिदायत दी, इस में यह भी है कि इ़बादत गुज़ारो राहिबों, काफ़िरों, मज़दूरी करने वालों को भी क़त्ल न करना, जबकि वह क़िताल में ह़िस्सा न लें। **(क़ुर्तुबी)**

आयत के आख़िर में 'वला तअ़तदू' का भी तमाम मुफ़स्सिरीन के नज़दीक यही मतलब है कि क़िताल में ह़द से आगे न बढ़ो, कि औ़रतों बच्चों को क़त्ल करने लगो। **(मआ़रफ़ुल क़ुर्आन-४६६)**

जिहाद और उस का सन्दर्भ

अधिकतर लोग जिहाद का अर्थ जंग, युद्ध, क़िताल और मारकाट समझते

हैं। परन्तु ऐसा नहीं है बल्कि जिहाद का शाब्दिक अर्थ, मेहनत और कोशिश, के हैं।

परन्तु इस प्रकार की आयतों को उनकी पृष्ठभूमि, परिस्थितियों और संदर्भ से विलग करके पेश किया जाता है। इस नीति को कभी भी बुद्धिसंगत और न्यायसंगत नहीं ठहराया जा सकता है कि किसी धर्म के किसी ग्रन्थ से कोई वाक्य नक़ल करके उसके केवल बाह्य एवं शाब्दिक अर्थ को आधार बनाकर आक्षेप कर दिया जाए या उससे ऐसा निष्कर्ष निकाला जाए जो वास्तव में कहने या लिखनेवाले का आशय या उद्देश्य न हो। न तो सन्दर्भ को देखा जाए और न उन परिस्थितयों को जिनमें वह बात कही गई है। कुछ संस्थाओं और लोगों की ओर से कुर्आन और इस्लाम को बद्नाम करने का योजनाबद्ध अभियान चलाया जा रहा है ताकि लोग कुर्आन और इस्लाम से संदिग्ध हो जाएँ।

धार्मिक ग्रन्थों की टीकाएँ

किसी सही निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए केवल शब्दों और वाक्यों के बाह्य अर्थो ही को नहीं देखा जाता, बल्कि उसका सही अर्थ निर्धारित करने के लिए पूरी बात और पूरी पृष्ठभूमि को सामने रखा जाता है तथा आवश्यकतानुसार विद्वानों और विशेषज्ञों से सम्पर्क भी किया जाता है।

यही वजह है कि धार्मिक ग्रन्थों की मोटी-मोटी टीकाएँ उनके विद्वानों ने लिखी हैं। अगर यह मामला इतना आसान होता तो फिर टीकाएँ लिखने की आवश्यकता ही न होती।

एक शब्द के विभिन्न अर्थ-

यह बात भी देखने में आती है कि एक ही शब्द या वाक्य के विभिन्न अर्थ अपने-अपने शोध और ज्ञान के अनुसार विद्वानों ने लिखे हैं। इसी लिए एक-एक ग्रन्थ की कई-कई टीकाएँ और उनके अनेक अनुवाद मौजूद हैं कुर्आन हो या अन्य ग्रन्थ।

इस सम्बन्ध में उचित और न्यायसंगत नीति यह है कि किसी बात का कोई निष्कर्ष निकालने से पहले उसकी 'पृष्ठभूमि और सन्दर्भ' को सामने रखा जाए

तथा आवश्यकतानुसार टीकाओं से मदद ली जाए और देखा जाए कि टीकाकारों ने क्या व्याख्या की है। इसके बाद ही कोई निष्कर्ष निकालना उचित होगा। हम अपनी इस बात को और अधिक स्पष्ट करने के लिए यहाँ केवल एक उदाहरण ही प्रस्तुत करते हैं।

वेदों पर आस्था न रखने वालों का क़त्ल

हिन्दू धर्म के महान विद्वान और वेदों के भाष्यकार व टीकाकार पंडित क्षेमकरण दास त्रिवेदी जी ने अथर्ववेद के श्लोक २०/६३/१ का यह अनुवाद किया कि "वेद-द्वेषियों को नष्ट कर दे।"

अगर कोई व्यक्ति या संस्था उक्त श्लोक के बाह्य शब्दों तथा अर्थो के आधार पर यह निष्कर्ष निकाल ले कि-

"वेद अपने माननेवालों को आदेश देता है कि बौद्धों, जैनियों, सिखो, ईसाइयों, यहूदियों, मुसलमानों और उन असंख्य व्यक्तियों को हलाक व नष्ट कर दिया जाए जो वेदों में आस्था नहीं रखते, तो क्या इस नीति को उचित ठहराया जाएगा?"

यह तो उन धार्मिक ग्रन्थों की बात है जिनके बारे में यह समझा और कहा जाता है कि वे परमेश्वर की ओर से आए हुए हैं और जिनके साथ उनके मानने वालों की आस्थाएँ जुड़ी होती हैं।

संविधान में संशोधन

क्या किसी व्यक्ति या संस्था को इस बात की अनुमति दी जा सकती है कि वह इस देश के संविधान और नियम एवं दण्ड संहिताओं की पुस्तकों के किसी शब्द या वाक्य के ज़ाहिरी अर्थ के आधार पर कोई मनमाना निष्कर्ष ग्रहण कर लें और उसकी पृष्ठभूमि, मार्गदर्शक सिद्धान्तों और उससे सम्बन्धित अन्य धाराओं को सामने न रखे। अगर यह नीति उचित होती तो फिर संविधान एवं नियमों से सम्बन्धित बातों के स्पष्टीकरण, व्याख्या और उनके अर्थ निर्धारित करने के लिए संविधान एवं नियमों के विशेषज्ञों से राय लेने की आवश्यकता ही न पड़ती।

अगर धार्मिक या क़ानूनी मामलों के साथ यह सजगता न बरती गई तो गम्भीर

और भयावह परिस्थिति पैदा हो सकती है तथा यह नीति आग और पानी से खेलने जैसी हो सकती है। (क़ुर्आन पर अनुचित आक्षेप)

शरीअ़त में जिहाद कई अर्थों में

शरीअ़त में जिहाद कई तरह़ के आ़माल पर होता है। जैसे-

माँ-बाप के हुक़ूक़ जिहाद है

माँ बाप के हुक़ूक़ अदा करने को ह़दीस में जिहाद कहा गया है। एक सह़ाबी यमन से आप के पास इस ग़र्ज़ से पहुँचते हैं कि किसी लड़ाई में उन को शिरकत का मौक़ा दिया जाए। आप ने उन से दर्याफ़्त कियाः

"क्या तुम्हारे वालिदैन ज़िन्दा हैं?" जवाब दिया ज़िन्दा हैं! तो आप ने फ़रमाया-

"ففيهما فجاهد" "तुम जाओ और उन ही की ख़िदमत में लग जाओ!"

ह़ज भी एक जिहाद है

एक मर्तबा सह़ाबियात ने अ़र्ज़ किया कि हम को भी जिहाद में शिरकत की इजाज़त दीजिए-आप ने फ़रमाया, "तुम्हारा जिहाद वह ह़ज है जिस में कोई बुराई न हो।"

इन्साफ़ की बात कहना जिहाद

ख़तरनाक से ख़तरनाक मौक़ों पर बेबाकी से इज़हारे ह़क़ भी बहुत बड़ा जिहाद है।

चुनांचे आप इर्शाद फ़रमाते हैं- ان من اعظم الجهاد كلمة عدل عند سلطان جائر

"सब से बड़ा जिहाद, सुल्तान के मुक़ाबले में कलिम-ए-अ़द्ल का जारी करना है।"

ह़क़ की ह़िमायत में अपने मफ़ाद को क़ुर्बान कर देना और मातह़तों की

ह़िमायत करना 'जिहाद-ए-नफ़्स' है।

इस के विपरीत दूसरी क़ौमों की जंग में हम देखते हैं कि वह भारी तबाही का ज़रिया बनती है।

नफ़्स पर क़ाबू पाना जिहाद है

नफ़्स को फ़रमाबरदारी पर रोके रहना और हमेशगी के साथ सुस्ती और काहिली को दूर रखना और इच्छा शक्ति पर क़ाबू पाना यही वजह है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने एक जंगी सफ़र से वापसी के मौक़े पर अपने मह़बूब और जान की बाज़ी लगा देने वाले सह़ाबा से फ़रमाया-

"رجعنا من الجهاد الاصغر الى الجهاد الاكبر" यानी हम छोटे जिहाद से बड़े जिहाद की ओर लौट रहे हैं।

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के इस बात की दलील ख़ुद ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की बात में मौजूद है। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने एक ह़दीस में जिहाद की फ़ज़ीलत में पाबन्दी के साथ वक़्त पर नमाज़ पढ़ना बयान किया है।

वक़्त पर नमाज़ पढ़ना जिहाद है

عن عبد الله بن مسعود قلت يارسول الله اى الاعمال افضل قال الصلوٰة على ميقاتها قلت ثم اى قال برالوالدين قلت ثم اى قال الجهاد فى سبيل الله فسكت عن رسول

अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) से रिवायत है कि मैंने कहा, "या रसूलल्लाह (सल्ल०) सब से अच्छा अ़मल कौन सा है"? आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "वक़्त पर नमाज़ अदा करना"। मैंने कहा फिर आप (सल्ल०) ने फ़रमाया वालिदैन के साथ नेकी करना मैंने कहा फिर आप (सल्ल०) ने फ़रमाया अल्लाह के रास्ते में जिहाद करना, फिर मैं चुप हो गया और अगर मैं और ज़्यादह तलब करता तो हुज़ूर और ज़्यादह बताते।

(बुख़ारी भाग-१)

ईमान और ह़ज भी जिहाद है

ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) की ह़दीस में जिहाद को ईमान के बाद सब से अफ़ज़ल अ़मल क़रार दिया गया है। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से सवाल किया गया कि ऐ अल्लाह के रसूल सब से अफ़ज़ल अ़मल क्या है। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल०) पर ईमान रखना। पूछा गया फिर क्या? फ़रमाया मक़बूल ह़ज। **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

दोनों ह़दीसों में एक तरह़ का टकराव नज़र आता है लेकिन ह़क़ीक़त में टकराव नहीं है क्योंकि दोनों बातें पूछने वाले के ह़ालात के अनुसार हैं। अगर एक शख़्स बहादुरी में बहुत बढ़-चढ़ कर हो तो उस के लिए यक़ीनन ईमान के बाद नमाज़ अफ़ज़ल होगी। क्योंकि नमाज़ फ़र्ज़ है जो दिन रात में पाँच मर्तबा अदा की जाती है और जिहाद ऐसा नहीं बल्कि फ़र्ज़ किफ़ाया है।

और यह भी याद रखना चाहिए कि जिहाद "ईमान और इक़ामते सलाह के लिए ही है। इसलिए नमाज़ असल हुई और जिहाद उस के लिए ज़रिया हुआ। इस की ताईद एक ह़दीस से भी होती है।

नमाज़ के बाद जिहाद

معاذ (رض طول الی ان قال)
والذی نفس محمد بیدہ ما
من جرح وجد ولا اغبرت
قدم فی عمل یبتغی درجات
الآخرۃ بعد الصلوٰۃ المکتوبۃ

ह़ज़रत मुआ़ज़ (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि हुज़ूर (सल्ल०) ने फ़रमाया कि क़सम है उस ज़ात की जिसके क़ब्ज़े में मुह़म्मद की जान है कोई अ़मल जिस में कोई चेहरा ज़ख़्मी हुआ हो और कोई क़दम ग़ुबार आलूद हुआ हो।

کجہاد فی سبیل اللہ صححہ
الترمذی
(زکوٰۃ الفرقان ص ۱۳۶ ج ۳)

जिस अ़मल के ज़रिए से आख़िरत के दरजात तलब किये जाते हों, नमाज़ के बाद मिस्ल जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह के नहीं है। **(मिश्कात भाग-४)**

ज़बान से जिहाद

ह़दीस पाक में है ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) फ़रमाते हैं-

عن انس عن النبی صلی اللہ
علیہ وسلم قال جاھدوا
المشرکین باموالکم وانفسکم
والسنتکم۔ رواہ ابوداؤد
والنسائی والدارمی

ह़ज़रत अनस (रज़ि०) ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से रिवायत करते हैं कि तुम लोग मुश्रिकीन से अपने मालों जानों और ज़बानों से जिहाद करो। **(अबूदाऊद, नसई)**

एक ह़दीस में है कि अगर तुम लोग कोई ग़लत चीज़ को देखो तो उस को क़ुव्वत से दूर करो, और अगर इस पर क़ुदरत न हो तो ज़बान से उसे रोको, और अगर इस पर क़ुदरत न हो तो कम से कम दिल से ही उस को बुरा समझो। लेकिन यह सब से कमतर दर्जे का ईमान है। **(मुस्लिम)**

क़लम से जिहाद

इस ह़दीस में रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने मुसलमानों को बुराई और बेह़याईयों से दूर रहने का हुक्म फ़रमाया है कोई दर्जा ईमान का ऐसा नहीं है जिस में बुराईयों और बेह़याईयों को दूर करने का हुक्म साह़िबे शरीअ़त (सल्ल०) की ओर से न हुआ हो। अगर एक तरफ़ जिहाद में तलवार हैं तो दूसरी तरफ़ ज़बान और क़लम

से भी जिहाद उ़म्दह और अच्छे तरीक़े पर बड़ी कामियाबी के साथ किया जा सकता है। बल्कि दौरे ह़ाज़िर में तो क़लम व ज़बान का दाम और बढ़ गया है कि उन से जिहाद करने के मवाक़े बहुत हैं ।

कुर्आन में "जिहाद बिल्माल" अर्थात माल के ज़रिए जिहाद का हुक्म दिया गया है जैसे-

माल के ज़रिए जिहाद

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

اِنَّمَا الْمُؤْمِنُوْنَ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَ رَسُوْلِهٖ ثُمَّ لَمْ يَرْتَابُوْا وَ جٰهَدُوْا بِاَمْوَالِهِمْ وَ اَنْفُسِهِمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ اُولٰٓئِكَ هُمُ الصّٰدِقُوْنَ ۝

अनुवादः-

"मोमिन तो बस वही हैं जो अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाए, फिर शक में न पड़े, और अपने मालों और जानों से अल्लाह की राह में जिहाद किया, यही लोग सच्चे हैं।" (सूरः हुजरात, आयत नं० १५)

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَ هَاجَرُوْا وَ جٰهَدُوْا بِاَمْوَالِهِمْ وَ اَنْفُسِهِمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ

अनुवादः-

"जो लोग ईमान लाए और उन्होंने हिजरत की, और अल्लाह की राह में अपने मालों और अपनी जानों के साथ जिहाद किया।" (अन्फ़ाल- ७२)

शिक्षा के ज़रिए जिहाद

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

اُدْعُ اِلٰى سَبِيْلِ رَبِّكَ بِالْحِكْمَةِ وَ الْمَوْعِظَةِ الْحَسَنَةِ وَ جَادِلْهُمْ بِالَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ ؕ اِنَّ

رَبَّكَ هُوَ اَعْلَمُ بِمَنْ ضَلَّ عَنْ سَبِيْلِهٖ وَ هُوَ اَعْلَمُ بِالْمُهْتَدِيْنَ ۝

अनुवादः-

"लोगों को अपने 'रब' की राह की ओर बुलाइए, हिकमत से और अच्छी नसीह़त से, और उनको नसीह़त कीजिए तो अच्छे तरीक़े से, और आप का 'रब' उसे भली भाँति जानता है जो 'उसकी' राह से भटक गया, और 'वह' उन्हें भी भली भाँति जानता है जो राह पर हैं।" (सूरः नह़्ल १२५)

कुर्आन के ज़रिए जिहाद

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

فَلَا تُطِعِ الْكٰفِرِيْنَ وَ جَاهِدْهُمْ بِهٖ جِهَادًا كَبِيْرًا ۝

अनुवाद-

"तो आप काफ़िरों की बात न मानिए और इस (कुर्आन) के ज़रिये उनसे जिहाद कीजिए- बड़ा जिहाद।" (सूरः फ़ुरक़ान- ५२)

कुर्आ़न की इस आयत में जिहाद से अभिप्राय युद्ध और लड़ाई नहीं बल्कि प्रयत्न और जीतोड़ कोशिश करना है।

कठिनाई झेलने के ज़रिए जिहाद

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

ثُمَّ اِنَّ رَبَّكَ لِلَّذِيْنَ هَاجَرُوْا مِنْۢ بَعْدِ مَا فُتِنُوْا ثُمَّ جٰهَدُوْا وَ صَبَرُوْٓا ۙ اِنَّ رَبَّكَ مِنْۢ بَعْدِهَا لَغَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝

अनुवाद-

"फिर आप का रब उन लोगों के लिए जिन्होंने इसके बाद कि वे

आज़माइश में पड़ चुके थे घर बार छोड़ा, फिर जिहाद किया और सब्र से काम लिया तो इसके बाद बेशक आप का रब उन को माफ़ करने वाला, बड़ा रहम वाला है।" (सूरः नहल-११०)

कुर्आन की इस आयत में भी जिहाद का तात्पर्य कष्ट उठाना और कठिनाइयाँ झेलना है, न कि युद्ध और लड़ाई, जैसा कि सन्दर्भ से स्पष्ट है।

दबाव डालने के ज़रिए जिहाद

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَإِنْ جَاهَدٰكَ عَلٰٓى اَنْ تُشْرِكَ بِىْ مَا لَيْسَ لَكَ بِهٖ عِلْمٌ فَلَا تُطِعْهُمَا وَصَاحِبْهُمَا فِى الدُّنْيَا مَعْرُوْفًا ۖ

अनुवाद-

और अगर वे (अर्थात माँ-बाप) तुझ पर दबाव डालें कि तू किसी को मेरा साझीदार ठहरा, कि जिसका तुझे इल्म नहीं है, तो उनकी बात न मानना और दुनिया में उनके साथ अच्छा व्यवहार रखना। (सूरः लुक़मान-१५)

कुर्आन की इस आयत के मूल पाठ में अ़रबी शब्द 'जाहदा' प्रयुक्त हुआ है, जो जिहाद ही है, लेकिन यहाँ इसका अर्थ दबाव डालना है न कि युद्ध करना जैसा कि सन्दर्भ से साफ़ मालूम होता है।

जिहाद अपने लिए

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَمَنْ جَاهَدَ فَاِنَّمَا يُجَاهِدُ لِنَفْسِهٖ ۚ اِنَّ اللّٰهَ لَغَنِىٌّ عَنِ الْعٰلَمِيْنَ ۝

अनुवाद-

"और जो व्यक्ति जिहाद (संघर्ष) करता है वह अपने ही (फ़ायदे के) लिए जिहाद करता है, अल्लाह सारी दुनिया वालों से बेपरवाह (निस्पृह) है।"

(सूरः अन्कबूत-६)

कोशिश के ज़रिये जिहाद

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَالَّذِيْنَ جَاهَدُوْا فِيْنَا لَنَهْدِيَنَّهُمْ سُبُلَنَا ۚ وَاِنَّ اللّٰهَ لَمَعَ الْمُحْسِنِيْنَ ۝

अनुवाद-

और जो लोग 'हमारी' राह में जिहाद (कोशिश) करेंगे 'हम' ज़रूर उन पर अपनी राहें खोल देंगे, और अल्लाह भले काम करने वालों के साथ है।

(सूरः अन्कबूत- ६९)

ऊपर की आयतों से मालूम हुआ कि जिहाद माल से, इल्म से, या मेहनत से यहां तक कि जान तक दे देने के ज़रिए हो उसे जिहाद कहते हैं।

अल्लाह ने अत्याचारियों या धर्म में बाधा डालने और निरन्तर विरोध करने वालों से क़िताल (युद्ध) का आदेश दिया है उनके विषय में अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है।

क़िताल के ज़रिए जिहाद

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

فَاِنْ لَّمْ يَعْتَزِلُوْكُمْ وَيُلْقُوْٓا اِلَيْكُمُ السَّلَمَ وَيَكُفُّوْٓا اَيْدِيَهُمْ فَخُذُوْهُمْ وَاقْتُلُوْهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوْهُمْ ۚ وَاُولٰٓئِكُمْ جَعَلْنَا لَكُمْ عَلَيْهِمْ سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ۝

अनुवाद-

"तो ऐसे लोग अगर तुमसे (लड़ने से) न किनारा पकड़ें और न तुम्हारी ओर सुलह़ (का पैग़ाम) भेजें, और न अपने हाथों को रोकें, तो उनको पकड़ लो, और जहां पाओ क़त्ल कर दो, उन लोगों के ख़िलाफ़ 'हमने' तुम्हें खुला अधिकार दे रखा है। (सूरः निसा-९१)

उपर्युक्त आयतों के मूल पाठ में अ़रबी शब्द 'जिहाद' प्रयुक्त हुआ है लेकिन सभी आयतों का अभिप्राय युद्ध नहीं है जैसा कि सन्दर्भ से स्पष्ट हुआ है।

लड़ाई के ज़रिए जिहाद

इसी जद्दोजहद और जीतोड़ कोशिश का एक रूप शक्ति का प्रयोग अर्थात युद्ध भी है और कुर्आन में जिहाद शब्द विभिन्न स्थानों पर युद्ध के लिए आया है। वैसे आ़मतौर पर युद्ध और लड़ाई के लिए कुर्आन में 'क़िताल' शब्द प्रयुक्त हुआ है।

मुजाहिद की मिसाल रोज़ेदार नमाज़ी की है

عن ابی هریرة رض قال قال
رسول الله صلی الله علیه وسلم
مثل المجاهد فی سبیل الله
کمثل الصائم القائم القانت
بآیات الله لا یفتر من صیام
ولا صلوة حتی یرجع المجاهد
فی سبیل الله متفق علیه
(مشکوٰة علی المرقاة ج۳ ص۱۷۶)

ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मुजाहिद फ़ी सबीलिल्लाह की मिसाल ऐसे रोज़ेदार जैसी है जो नमाज़ पढ़ने वाला, शरीअ़त की पाबन्दी करने वाला और ख़ूब इ़बादत में लगा हुआ हो (नमाज़ में खड़ा है बैठा नहीं है) और अल्लाह तआ़ला की आयात पढ़ रहा है (और उसके समझने में पूरी ताक़त ख़र्च कर रहा है) न रोज़े से थकता है और न नमाज़ से घबराता है और न बद्दिल होता है। यहाँ तक कि मुजाहिद फ़ी सबीलिल्लाह अपने घर वापस आ जाता है।" **(जिहाद से मिश्कात भाग-४)**

यहाँ मुजाहिद को सायम व क़ायम से इसलिए तशबीह दी गई है कि ज़बरदस्त सवाब और अज्रे अ़ज़ीम जिस तरह़ सायम व क़ायम को हर-हर सुकून व ह़रकत पर हर-हर वक़्त मिलता रहता है उसी तरह़ मुजाहिद फ़ी सबीलिल्लाह को भी अल्लाह की ओर से बहुत बड़ा सवाब और अ़ज़ीम बदला मिलता रहता

है चाहे मुजाहिद दुश्मन के मुक़ाबिले में लड़ रहा हो या अपने ख़ेमे में सो रहा हो।

ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) की एक रिवायत यह भी है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह तआ़ला ज़िम्मेदार है उस शख़्स के लिए जो अल्लाह के रास्ते में जिहाद के लिए निकला और उस को अल्लाह के ऊपर ईमान और अल्लाह के रसूलों की तस्दीक़ के अ़लावह किसी चीज़ ने घर से नहीं निकाला तो उसको वापस करेंगे ग़नीमत के साथ और उसे जन्नत में दाख़िल फ़रमाएँगे।"

(मिश्कात)

एक दूसरी ह़दीस में फ़रमाते हैं, "अल्लाह के रास्ते में एक शाम या एक सुबह़ दुनिया और दुनिया में जो कुछ है सब से बेहतर है।"

एक और ह़दीस में है कि चौबीस घंटे सरह़द की निगरानी जो अल्लाह के रास्ते में हो, एक माह के रोज़े और नमाज़ से बेहतर है। अगर दौराने निगरानी मुजाहिद का इन्तिक़ाल हो जाए तो उस के इस अ़मल को अल्लाह तआ़ला जारी रखेंगे और उस को उसके इस अ़मल का सवाब क़ियामत तक मिलता रहेगा। और उसकी रोज़ी उस वक़्त तक जन्नत से बराबर पहुँचती रहेगी। और वह अ़ज़ाब के फ़रिश्तों से मह़फ़ूज़ रहेगा। **(मुस्लिम)**

जिहाद का हुक्म क़ियामत तक रहेगा

عن جابر بن سمرة قال قال
رسول الله صلی الله علیه وسلم
لن یبرح هذا الدین قائما
یقاتل علیه عصابة من
المسلمین حتی تقوم الساعة
رواه مسلم (المشکاة علی المرقاة ج۲ ص۱۴۲)

ह़ज़रत जाबिर बिन समुरा (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "यह दीन हमेशा क़ायम रहेगा और एक जमाअ़त मुसलमानों की क़ियामत तक अल्लाह के रास्ते में जिहाद करती रहेगी।"

(मुस्लिम भाग-४)

एक ह़दीस में है कि जो मुजाहिद अल्लाह के रास्ते में ज़ख़्मी होता है तो उस का ज़ख़्म क़ियामत के दिन भी उसी तरह़ हरा रहेगा जिस तरह़ जंग के दिन था। उस का रंग ख़ून का रंग रहेगा और उसकी ख़ुशबू मुश्क की ख़ुशबू जैसी होगी।

एक दूसरी ह़दीस में है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जो शख़्स भी जन्नत में दाख़िल होगा वह उस से निकलना न चाहेगा अगरचे उसे पूरी ज़मीन दे दी जाए सिवाए शहीद के कि वह तमन्ना करेगा कि उसे दुनिया की तरफ़ लौटा दिया जाए और अल्लाह के रास्ते में दस मर्तबा क़त्ल किया जाए ऐसा वह इसलिए करेगा कि उस ने शहादत की क़ीमत को पहचान लिया है।"

अ़म्र बिन आ़स (रज़ि०) से रिवायत है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अल्लाह के रास्ते में क़त्ल होना हर-हर गुनाह को माफ़ कर देता है अल्बत्ता क़र्ज़ माफ़ नहीं होगा।" **(मुस्लिम)**

ह़क़ीक़ी जिहाद

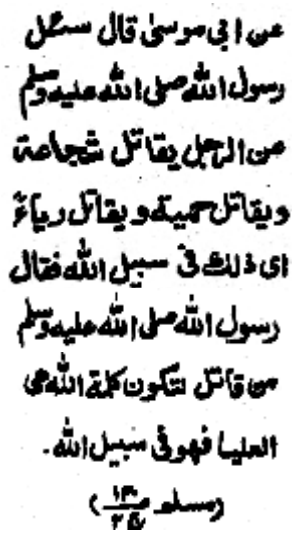
عن ابی موسیٰ قال سئل
رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم
من الرجل یقاتل شجاعۃ
ویقاتل حمیۃ ویقاتل ریاءً
ای ذلک فی سبیل اللہ فقال
رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم
من قاتل لتکون کلمۃ اللہ ھی
العلیا فھو فی سبیل اللہ۔
(مسلم ص ۱۳۵ ج ۲)

ह़ज़रत अबू मूसा (रज़ि०) से रिवायत है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से दर्याफ़्त किया गया कि एक आदमी जंग करता है बहादुरी दिखाने के लिए। दूसरा जंग करता है बड़ापन के लिए। तीसरा जंग करता है दिखावे की वजह से इन में से कौन अल्लाह के रास्ते में है? इस पर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया जिस ने अल्लाह के कलिमे को बुलन्द करने के लिए जिहाद किया वह फ़ी सबीलिल्लाह जिहाद करने वाला है।

इस ह़दीस में जिहाद का एक मख़्सूस इस्तिलाही माने बयान किया गया है

जो कभी-कभी नापसंदीदह चीज़ों की वजह से बद्नुमा दाग़दार और कम क़ीमत हो जाता है। ह़ुज़ूर (सल्ल०) से ऐसे जिहाद के सिल्सिले में सवाल किया गया जो हर तरह़ की ख़्वाहिशात और गन्दे जज़्बात से खाली और केवल अल्लाह की रज़ा जोई और ख़ुशनूदी के लिए किया गया हो। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने खुले शब्दों में बड़ी सादगी के साथ वाज़ेह़ फ़रमा दिया कि ह़क़ीक़ी बहादुरी वही है जो अल्लाह के रास्ते में किया गया हो।

बड़े जिहाद को जहन्नम नहीं छू सकती

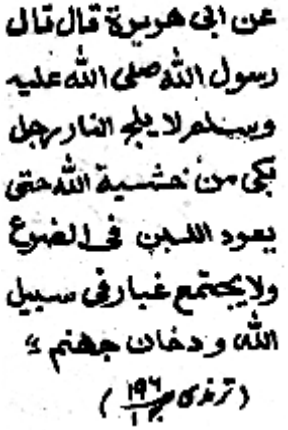
عن ابی ھریرۃ قال قال
رسول اللہ صلی اللہ علیہ
وسلم لا یلج النار رجل
بکی من خشیۃ اللہ حتی
یعود اللبن فی الضرع
ولا یجتمع غبار فی سبیل
اللہ ودخان جھنم۔
(ترمذی ص ۱۹۶ ج ۱)

ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) ने कहा कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया जो शख़्स अल्लाह के ख़ौफ़ से रोया वह जहन्नम में नहीं जाएगा यहाँ तक कि दूध थन में वापस चला जाए और अल्लाह के रास्ते में लगा हुआ गर्द और जहन्नम का धुवां भी जमा नहीं होंगे। **(तिर्मिज़ी- भाग १)**

दुश्मन का मुक़ाबला

अल्लाह तआ़ला तैयारी के सिल्सिले में फ़रमाते थे-

وَاَعِدُّوْا لَهُمْ مَا اسْتَطَعْتُمْ مِّنْ
قُوَّةٍ وَّ مِنْ رِّبَاطِ الْخَيْلِ تُرْهِبُوْنَ بِهٖ
عَدُوَّ اللّٰهِ وَعَدُوَّكُمْ وَاٰخَرِيْنَ مِنْ
دُوْنِهِمْ ۚ لَا تَعْلَمُوْنَهُمْ ۚ اَللّٰهُ يَعْلَمُهُمْ ۚ

और जहाँ तक हो सके उनके लिए क़ूव्वत (बल) और बँधे घोड़े (लड़ाई के लिए) तैयार रखो, ताकि उसके ज़रिये अल्लाह के दुश्मनों, और अपने दुश्मनों, और उसके सिवा, उन दूसरे लोगों को भी भयभीत कर दो जिन्हें

وَمَا تُنْفِقُوْا مِنْ شَيْءٍ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ يُوَفَّ اِلَيْكُمْ وَاَنْتُمْ لَا تُظْلَمُوْنَ ۝

तुम नहीं जानते, अल्लाह उनको जानता है; और अल्लाह की राह में जो कुछ ख़र्च करोगे, वह पूरा चुका दिया जाएगा, और तुम्हारे साथ हरगिज़ नाइन्साफ़ी न की जाएगी।

(सूरः अन्फ़ाल-६०)

व्याख्या-

अल्लाह के दुश्मनों पर भी रोब जमाए रखो जिनको तुम नहीं जानते बल्कि उन को अल्लाह ही जानता है और अल्लाह की राह में जिस में जिहाद भी आ गया जो कुछ भी ख़र्च करोगे वह तुम को आख़िरत में पूरा-पूरा दिया जाएगा और तुम्हारे लिए उस में कुछ कमी न होगी।

जंगी तैयारी के सिलसिले में ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने अपने दौर के सब से कामियाब हथियार की फ़राहमी और उस के सीखने की फ़ज़ीलत को इस तरह वाज़ेह फ़रमाते हैं।

तीर और जन्नत

عن عبد الله بن عبد الرحمن بن ابی حسین ان رسول الله صلی الله علیه وسلم قال ان الله یدخل بالسهم الواحد ثلثة الجنة صانعه یحتسب فی صنعه الخیر والرامی به والممد به ۔ قال ارموا واركبوا و لان ترموا احب الی من

अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्दुर्रह़मान बिन हुसैन से रिवायत है, "रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला एक तीर के ज़रिए तीन को जन्नत में दाख़िल फ़रमाएँगे। वह तीर बनाने वाला जो अपनी फ़नकारी से ख़ैर को तलब करता है, दूसरा तीरन्दाज़ी करने वाला और तीसरा उसकी मदद करने वाला।" "ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, तीरअन्दाज़ी करो घोड़सवारी करो, अलबत्ता तीरन्दाज़ी मुझे सवारी से ज़्यादा महबूब है।

ان ترکبوا کل ما یلهو به الرجل المسلم باطل الا رمیة بقوسه وتادیبه فرسه وملاعبته اهله فانهن من الحق ۔

(ترمذی ص ۱۹۷ ج ۱)

मुसलमान का हर खेल बातिल है सिवाए कमान से तीर फेंकने, अपनी बीवी से मुलाअ़िबत (मुह़ब्बत की छेड़छाड़) करने और अपने घोड़े को सधाने के, क्योंकि यह तीनों सच्चे खेल हैं।"

अबू दाऊद शरीफ़ की रिवायत में है-

ومن ترك الرمی بعد ما علمه رغبة عنه فانها نعمة تركها او قال كفرها ۔

"यानी जिस ने तीरअन्दाज़ी सीखने के बाद उस से एराज़ किया और छोड़ दिया उस ने अल्लाह तआ़ला की एक ज़बरदस्त नेअ़मत को जो उसे दी गई थी छोड़ दिया या अल्लाह की नेअ़मत की ज़बरदस्त नाशुक्री की।

(अबूदाऊद)

ह़ज़रत मौलाना ख़लील अह़मद साह़ब लिखते हैं कि आलाते जंग यानी तीर, नेज़ा, तलवार वग़ैरह ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के ज़माने के आलात थे। अब उन तमाम जदीद तरीन जंगी हथियारों को फ़राहम करना और उन्हें इस्तेमाल करने का ढंग सीखना ज़रुरी है। मुसलमानों को इस से ग़ाफ़िल न रहना चाहिए।

जिहाद की तमन्ना से खाली दिल

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) इर्शाद फ़रमाते हैं कि-

عن ابی هریرة عن النبی صلی الله علیه وسلم قال من مات ولم یغز ولم یحدث نفسه بغزو مات علی شعبة نفاق ۔ (ابوداؤد ص ۳۳۹ ج ۱)

ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से रिवायत करते हैं, "जो मरा और ग़ज़वा नहीं किया और न ही उस के नफ़्स ने उस की गुफ़्तगू की तो वह निफ़ाक़ के एक भाग पर मरा।" (अबूदाऊद भाग-१)

जब अल्लाह ने अपने फ़ज़्ल से किसी ख़ुश नसीब को ईमान लाने की तौफ़ीक़ दी तो उसे पूरे तौर पर अपने दिल को इस्लाम के रंग से रंग लेना चाहिए और किसी तरह़ की कोई कोताही उस से न होने पाए उस के लिए हर वक़्त तैयार रहना चाहिए। जब उस ने अल्लाह चाही ज़िन्दगी गुज़ारने का वादा कर लिया तो अब मर्द की शान यह नहीं कि उस में पसोपेश करे और मुताल्बा ख़ुदावन्दी को पूरा करने से हिचकिचाए, जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह एक पाक जज़्बा है उसे अपने दिल व दिमाग़ में रखना चाहिए।

ज़ालिमों के ख़िलाफ़ जिहाद

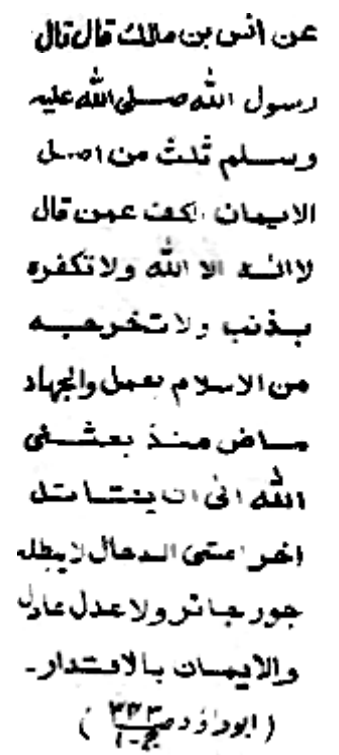
عن انس بن مالك قال قال
رسول الله صلى الله عليه
وسلم ثلث من اصل
الايمان الكف عمن قال
لااله الا الله ولا تكفره
بذنب ولا تخرجه
من الاسلام بعمل والجهاد
ماض منذ بعثني
الله الى ان يقاتل
اخر امتي الدجال لايبطله
جور جائر ولا عدل عادل
والايمان بالاقدار۔
(ابوداؤد ص ۳۴۳ ج ۱)

अनस बिन मालिक (रज़ि०) से रिवायत है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तीन चीज़ें ईमान की अस्ल हैं 'लाइलाह इल्लल्लाह' कहने वाले से हाथ और ज़बान को रोक लेना और उसके गुनाह की वजह से तकफ़ीर न करो और न ही उसे किसी बद्अ़मली की वजह से (बशर्ते कि अ़मल शिर्क व कुफ़्र न हो) इस्लाम से निकालो। और जिहाद मेरी बेअ़सत से लेकर दज्जाल से मेरी उम्मत के आख़िरी दस्ते के क़िताल करने तक चलता रहेगा। इस को किसी ज़ालिम का ज़ुल्म और किसी आ़दिल का अ़द्ल बातिल नहीं कर सकेगा और ईमान बिल्क़द्र।" (अबूदाऊद भाग-१)

एक दूसरी ह़दीस में है-

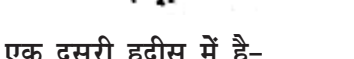
عن ابي هريرة قال

ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि

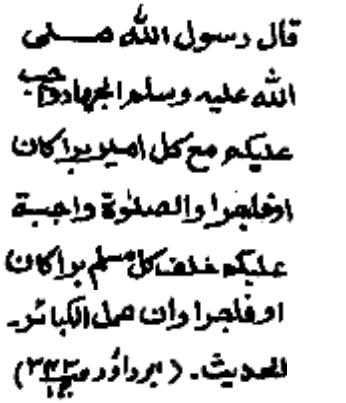
قال رسول الله صلى
الله عليه وسلم الجهاد واجب
عليكم مع كل امير برا كان
او فاجرا والصلوة واجبة
عليكم خلف كل مسلم برا كان
او فاجرا وان عمل الكبائر۔
الحديث۔ (ابوداؤد ص ۳۴۳ ج ۱)

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जिहाद तुम्हारे ऊपर वाजिब है। हर अमीर की इमारत में चाहे नेक हो या बद। और नमाज़ वाजिब है तुम्हारे ऊपर मुसलमानों के पीछे चाहे नेक हो या बद् अगरचे बड़े गुनाह को ही करने वाला हो।"

(अबूदाऊद भाग-१)

जान व माल की ह़िफ़ाज़त में मरना शहादत है

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

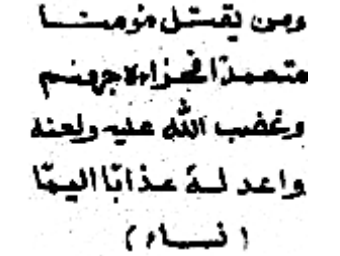
ومن يقتل مؤمنا
متعمدا فجزاؤه جهنم
وغضب الله عليه ولعنه
واعد له عذابا اليما
(نساء)

और जो कोई क़त्ल करे मुसलमान को जानकर तो उसकी सज़ा दोज़ख़ है, पड़ा रहेगा उसी में, और अल्लाह का उस पर ग़ज़ब हो और उसको लानत की और उसके वास्ते तैयार किया बड़ा अ़ज़ाब।

(सूरः निसा)

और ह़दीस शरीफ़ में है मोमिन का ख़ून केवल तीन वजह से करना जायज़ है।

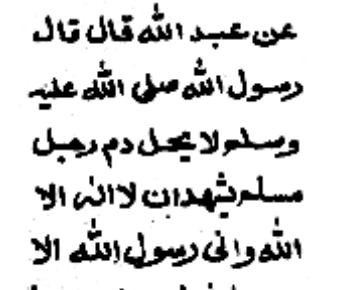
عن عبد الله قال قال
رسول الله صلى الله عليه
وسلم لا يحل دم رجل
مسلم يشهد ان لا اله الا
الله وانى رسول الله الا
باحدى ثلث، الثيب الزانى

ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी अकरम (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मुसलमान का ख़ून नहीं ह़लाल है मगर तीन चीज़ों में से किसी एक से, एक यह कि शादीशुदा आदमी ज़िना करे, दूसरे यह कि जान के बदले जान तीसरे यह कि दीन इस्लाम को छोड़ने वाला हो यानी जमाअ़त

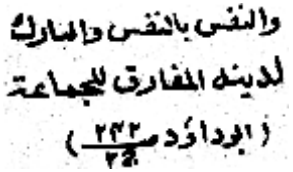
والنفس بالنفس والمارك
لدينه المفارق للجماعة
(ابوداؤد ص ۲۴۲)

मुस्लिमीन से अ़लैहिदगी अख़्तियार करने वाला हो।" (अबूदाऊद)

कुर्आनी आयत और ह़दीस से मुस्लिम के ख़ून की क़ीमत और अहमियत मालूम हुई, इस सूरत में अच्छी तरह़ समझा जा सकता है कि अगर मुसलमान अपनी जान और माल की ह़िफ़ाज़त में लगा हुआ हो और फिर कोई सरकश बदमाश उस से झगड़ा करे और उस के माल व दौलत और जान व आबरु को लेना चाहे और मोमिन को क़त्ल कर दे तो यह मुसलमान शहीद हुआ। ह़दीस शरीफ़ में है-

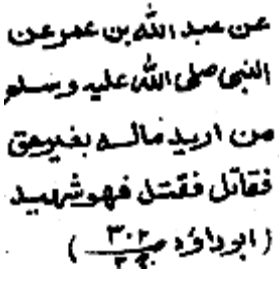
عن عبد الله بن عمر عن
النبي صلى الله عليه وسلم
من اريد ماله بغير حق
فقاتل فقتل فهو شهيد
(ابوداؤد ص ۳۰۲)

अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर (रज़ि०) से रिवायत है कि नबी अकरम (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जिस के माल को नाह़क़ लिया गया। उस माल की ह़िफ़ाज़त के लिए उस मुसलमान ने क़िताल किया और मक़तूल हुआ तो वह शहीद है।" (अबूदाऊद भाग-२)

अबूदाऊद शरीफ़ की दूसरी रिवायत में है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया जो शख़्स अपने माल की ह़िफ़ाज़त में मारा जाए वह शहीद है, जो बच्चों की ह़िफ़ाज़त में क़त्ल किया जाए वह शहीद है, जो अपने ख़ून की ह़िफ़ाज़त में क़त्ल किया जाए वह शहीद है, जो अपने दीन की ह़िफ़ाज़त में मारा जाए वह शहीद है।

फ़सादात में मरने वाले शहीद हैं

मुसलमानों को अम्न व सलामती का सबक़ पढ़ाया जाता है, वह किसी की जान व माल की तरफ़ नहीं देखते, लेकिन जब कुफ़्फ़ार क़ौम उन की तरक़्क़ी, इ़ज़्ज़त व आबरु और दौलत व सरवत को देखकर उन से झगड़ने को तैयार हो तो तमाम मुसलमानों को अल्लाह का नाम लेकर ख़ूब डट कर मुक़ाबला करना

चाहिए। अगर कामियाब हुए तो इ़ज़्ज़त व वक़ार की ज़िन्दगी ह़ासिल होगी, और मारे गये तो शहीद होंगे और आख़िरत का ए़ज़ाज़ ह़ासिल होगा।

मुसलमान अगर कुफ़्फ़ार पर ग़ल्बा पा लें तो उन्हें कुफ़्फ़ार के साथ ग़द्दारी करना, उनका माल चोरी से लेना और उनके अंग काटना जायज़ नहीं है।

जिहाद की आयतों पर आपत्ति

जिहाद और युद्ध व लड़ाई से सम्बन्धित कुर्आन मजीद की किसी आयत पर किसी को अगर वास्तव में कोई आपत्ति हो तो उसे चाहिए कि जिस आयत पर आपत्ति हो, उससे पूर्व की कुछ आयतों को और उसके बाद की कुछ आयतों के एक साथ मिलाकर पढ़ें।

इस तरह आ़मतौर पर आपत्ति स्वतः समाप्त हो जाएगी और यह बात स्पष्ट हो जाएगी कि कुर्आन ने जहाँ भी युद्ध करने या किसी को मृत्युदंड देने का आदेश दिया है, वे या तो युद्ध सम्बन्धी आदेश हैं या फिर न्याय और धरती पर शान्ति स्थापना करने की अनिवार्य अपेक्षाओं की ह़ैसियत से निर्देश दिए गए हैं। और यह बात किसी भी समाज या देश में आपत्तिजनक नहीं समझी जाती, बल्कि देश में सुरक्षा, शान्ति और न्याय की स्थापना के लिए अनिवार्य ठहराई जाती है।

दंगे फ़साद-

दंगे-फ़साद का अवसर हो या चुनाव के समय बूथ (Booth) पर क़ब्ज़ा करने का, आतंकवादियों का मामला हो या किसी देश का किसी देश पर फ़ौजी ह़मले का, हर समाज और हर देश में ऐसे उपद्रवजनक तत्वों को देखते ही मारने (Shoot at Sight) के आदेश दिए जाते हैं। कोई भी इस कार्यवाही को अत्याचार या हिंसा नहीं कहता। स्वयं हमारे देश में भी ऐसा ही होता है और सम्बन्धित अधिकारियों को वैधानिक तौर पर ऐसा करने का अधिकार प्राप्त होता है।

कुर्आन मजीद में जहाँ कहीं भी इस तरह के निर्देश दिए गए हैं, वहाँ अगर उनके सन्दर्भ को देखा जाए तो मालूम होगा कि ये निर्देश उपयुर्क्त परिस्थितियों में

ही दिए गए हैं। उदाहरणस्वरूप यहाँ केवल कुछ नमूने प्रस्तुत किए जाते हैं।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

وَمَا لَكُمْ لَا تُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَالْمُسْتَضْعَفِينَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَاءِ وَالْوِلْدَانِ الَّذِينَ يَقُولُونَ رَبَّنَا أَخْرِجْنَا مِنْ هَٰذِهِ الْقَرْيَةِ الظَّالِمِ أَهْلُهَا ۚ وَاجْعَلْ لَنَا مِنْ لَدُنْكَ وَلِيًّا ۚ وَاجْعَلْ لَنَا مِنْ لَدُنْكَ نَصِيرًا ﴿٧٥﴾

अनुवाद-

और तुम्हें क्या हुआ है कि अल्लाह की राह में उन कमज़ोर मर्दों, औ़रतों, और बच्चों के लिए जंग नहीं करते, जो दुआ़एँ किया करते हैं, ''ऐ हमारे रब! 'तू' हमें इस बस्ती से निकाल, जिसके रहने वाले ज़ालिम हैं, और हमारे लिए अपनी कुदरत से कोई दोस्त (समर्थक) पैदा कर दे, और हमारे लिए अपनी ओर से 'तू' कोई मददगार खड़ा कर दे।' **(सूर निसा- ७५)**

पवित्र कुर्आन में युद्ध का आदेश

पवित्र कुर्आन की जिस आयत में सबसे पहले युद्ध की अनुमति मिली वह यह है।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

युद्ध की अनुमति की पहली आयत यह है:-

أُذِنَ لِلَّذِينَ يُقَاتَلُونَ بِأَنَّهُمْ ظُلِمُوا ۚ وَإِنَّ اللَّهَ عَلَىٰ نَصْرِهِمْ لَقَدِيرٌ ﴿٣٩﴾ الَّذِينَ أُخْرِجُوا مِنْ دِيَارِهِمْ بِغَيْرِ حَقٍّ إِلَّا أَنْ يَقُولُوا رَبُّنَا اللَّهُ ۗ وَلَوْلَا دَفْعُ اللَّهِ النَّاسَ بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ لَهُدِّمَتْ صَوَامِعُ وَبِيَعٌ وَصَلَوَاتٌ وَمَسَاجِدُ يُذْكَرُ فِيهَا اسْمُ اللَّهِ كَثِيرًا ۗ وَلَيَنْصُرَنَّ اللَّهُ مَنْ يَنْصُرُهُ ۗ إِنَّ اللَّهَ لَقَوِيٌّ عَزِيزٌ ﴿٤٠﴾ الَّذِينَ إِنْ مَكَّنَّاهُمْ فِي الْأَرْضِ أَقَامُوا الصَّلَاةَ وَآتَوُا الزَّكَاةَ وَأَمَرُوا بِالْمَعْرُوفِ وَنَهَوْا عَنِ الْمُنْكَرِ ۗ وَلِلَّهِ عَاقِبَةُ الْأُمُورِ ﴿٤١﴾

(सूरः ह़ज आयत ३९-४१)

अनुवाद-

(उन लोगों को) इजाज़त दी जाती है जिनके विरूद्ध युद्ध किया जा रहा है, क्योंकि उन पर जुल्म हो रहा है, और अल्लाह उनकी मदद करने पर क़ादिर (सामर्थ्य) है; (यह वे लोग हैं) जो अपने घरों से नाह़क़ निकाले गये, केवल इस बात पर कि वे कहते हैं, ''हमारा 'रब' अल्लाह है,'' अगर अल्लाह लोगों को एक-दूसरे से न हटाता रहता, तो ख़ानक़ाहें (मठ), और गिरजा, और यहूदी प्रार्थना भवन, और मस्जिदें जिनमें अल्लाह का ख़ूब नाम लिया जाता है, सब ढ़ा दिये जाते, और अल्लाह उसकी ज़रूर मदद करेगा, जो 'उसकी' मदद करेगा; बेशक अल्लाह बड़ा ज़बर्दस्त, ताक़त वाला है; तो यह वे लोग हैं कि अगर धरती पर 'हम' इन्हें सत्ता दें, तो वे नमाज़ क़ायम करेंगे, और ज़कात देंगे, और भली बात का हुक्म करेंगे और बुराइयों से रोकेंगे; और सब मामलों का अंजाम तो अल्लाह ही के हाथ में है। **(सूरः ह़ज आयत नं० ३९-४१)**

व्याख्या-

इस आयत में मुसलमानों को इजाज़त दी है कि वह अपनी दिफ़ा (रक्षा) के लिए हथियार उठा सकते हैं।" यह पहली आयत है जो अनुमति क़िताल (जंग की इजाज़त) के बारे में नाज़िल (उतरी) हुई है।

इससे पहले कुरैशे मक्का (मक्का की प्रसिद्ध जाति) का यह जुल्म बयान कर दिया था कि उन्होंने मुसलमानों पर ह़ज की राह बन्द कर दी है जिसका उन्हें कोई ह़क़ नहीं। अब यहाँ साफ़-साफ़ लफ़्ज़ों (शब्दों) में वाज़ेह कर दिया कि जवाज़े क़िताल की हिल्लत (जंग की इजाज़त की वजह) क्या है, फ़रमाया-

मज़लूम का ह़क़

"बेअन्नलहुम जुलेमु" इसलिए कि मुसलमान मज़लूम हैं और मज़लूम का ह़क़ है कि ज़ालिम के मुक़ाबले में अपना बचाव करें।

यह मज़लूम तेरह वर्ष तक क़ुरैशे मक्का के ज़ुल्म व तशद्दुद का निशाना रहे, बिल आख़िर तर्के वतन (स्वदेश त्याग) पर मजबूर हुए। लेकिन ग़ुर्बत (विदेश) में भी चैन से न बैठने दिया गया। उनके ख़िलाफ़ जंग का एलान कर दिया गया, आख़िर इन का क़ुसूर क्या था। सिर्फ़ यह कि वह कहते थे 'रब्बुनल्लाह' हम अपने यक़ीन के मुताबिक़ अपने परवरदिग़ार को याद करना चाहते हैं, हम दूसरों को मजबूर नहीं करते कि हमारा धर्म स्वीकार कर लें, लेकिन दूसरे हमें क्यों मजबूर करते हैं कि अपने विश्वास को छोड़ दें।

इसके बाद वाज़ेह किया है कि यह मज़लूमों का क़ुदरती ह़क़ है अगर वह इस ह़क़ से महरूम (वंचित) कर दिये जायें तो दुनिया में इन्सानी ज़ुल्मों इस्तब्दाद (ज़बरदस्ती) की मुदाफ़िअ़त (प्रतिकार) का कोई सामान बाक़ी न रहे। जिस गिरोह की बन पड़े दूसरे गिरोह के एतिक़ाद व अ़मल की आज़ादी हमेशा के लिए पामाल (पद दलित) कर दे, चुनांचे फ़रमाया-

यहाँ अल्लाह ने एक जमाअ़त के ज़ुल्म व तशद्दुद को दिफ़ा कराने का निज़ाम (व्यवस्था) क़ायम कर रखा है अगर यह सिलसिल-ए-मुदाफ़िअ़त (एक के द्वारा दूसरे की रक्षा का काम) न होता, तो दुनिया में ख़ुदा परस्ती का ख़ात्मा (अन्त) हो जाता। किसी गिरोह की इ़बादतगाह इन्सानी ज़ुल्मों इस्तबदाद के हाथों महफ़ूज़ न रहती।

क़ुर्आन के अनुसार मुसलमानों के सत्ता व हुकूमत का अस्ली मक़सद क्या था फ़रमाया-

इन मज़लूम मुसलमानों के क़दम जम गये तो यह क्या करेंगे? यानी यह नमाज़ क़ाइम करें, ज़कात अदा करें, नेकी का हुक्म दें, बुराईयों से रोकें और ज़ुल्म और बुरे अ़मल की जगह अदालत व नेकी की हुकूमत क़ायम हो जाए (यानी न्याय और पुण्य का राज स्थापित हो जाये)

ह़क़ीक़त-

"यहाँ यह ह़क़ीक़त भी स्पष्ट कर दी कि क़ुर्आन ने जंग का हुक्म इसलिए नहीं दिया है कि मुसलमान दूसरों पर चढ़ दौड़ें बल्कि इसलिए कि मज़लूमों और

बेकसों (अत्याचार पीड़ितों और निःसहाय लोगों) की ह़िमायत करें और उन्हें ज़ालिमों के पंजे से मुक्ति दिलायें। इसलिए वह बार-बार कहता है कि अल्लाह की राह में लड़ो, यानी अपनी नफ़्सानी ख़्वाहिशों (मनो आकांक्षाओं) के लिए नहीं बल्कि अल्लाह के अ़द्ल व इन्साफ़ के क़याम (स्थापना) के लिये लड़ो।"

(तर्जुमानुल क़ुर्आन प्रथम भाग पृ० ३७१)

ऊपर क़ुर्आन की जो आयतें प्रस्तुत की हैं उस आयत के बाद की कुछ आयतें भी यहाँ प्रस्तुत हैं जिनमें वस्तुस्थिति और अधिक स्पष्ट हो जाती हैं:

जिहाद कब और किससे

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

وَقَاتِلُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ الَّذِيْنَ يُقَاتِلُوْنَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ ۝ وَاقْتُلُوْهُمْ
حَيْثُ ثَقِفْتُمُوْهُمْ وَاَخْرِجُوْهُمْ مِّنْ حَيْثُ اَخْرَجُوْكُمْ وَالْفِتْنَةُ اَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ ۚ وَلَا تُقٰتِلُوْهُمْ عِنْدَ
الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ حَتّٰى يُقٰتِلُوْكُمْ فِيْهِ ۚ فَاِنْ قٰتَلُوْكُمْ فَاقْتُلُوْهُمْ ۭ كَذٰلِكَ جَزَاۗءُ الْكٰفِرِيْنَ ۝ فَاِنِ انْتَهَوْا
فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝ وَقٰتِلُوْهُمْ حَتّٰى لَا تَكُوْنَ فِتْنَةٌ وَّيَكُوْنَ الدِّيْنُ لِلّٰهِ ۭ فَاِنِ انْتَهَوْا فَلَا
عُدْوَانَ اِلَّا عَلَي الظّٰلِمِيْنَ ۝

अनुवाद-

"और तुम अल्लाह की राह में लड़ो उन लोगों से जो तुम से लड़ते हैं, मगर ज़्यादती (अत्याचार) न करना कि अल्लाह ज़्यादती करने वालों को पसंद नहीं करता; और (ऐसे काफ़िरों को जो ज़ुल्म कर रहे हैं) <u>उनको जहाँ कहीं पाओ क़त्ल करो, और उनको निकाल दो, जहाँ से उन्होंने तुम्हें निकाला; और (इसलिए कि) फ़ित्ना (उत्पीड़न) पैदा करना क़त्ल से भी बढ़कर है,</u> और उनसे मस्जिदे ह़राम (कअ़बः) के पास न लड़ना, जब तक कि वे उस जगह तुमसे न लड़ें; <u>फिर अगर वे ख़ुद ही तुम से लड़ें, तो उन्हें क़त्ल करो,</u> यही काफ़िरों (सच्चाई का इन्कार करने वालों) की सज़ा है; (मगर जो न लड़ें उन्हें केवल काफ़िर होने की वजह से मारा या परेशान न किया जाए) <u>फिर अगर वह</u> (ज़ुल्म

से) रूक जाएँ, तो अल्लाह माफ़ करने वाला, मेहरबान है; और उनसे लड़ो (जिन काफ़िरों ने ज़ुल्म किया) यहाँ तक कि फ़ित्ना (ज़ुल्म) बाक़ी न रहे और दीन अल्लाह के लिए हो जाए, फिर अगर वे (ज़ुल्म से)बाज़ आ जाएँ तो ज़ालिमों के सिवा किसी पर ज़्यादती न करो। बड़ाई वाला (प्रतिष्ठित) महीना बराबर है, बड़ाई वाले महीने के, और सम्मान रखने में बदला है; फिर अगर जिसने तुम पर ज़्यादती की, तो (केवल उसी को) तुम भी उसके ज़्यादती की सज़ा दो, जैसा उसने तुम पर ज़्यादती की है; और अल्लाह से डरते रहो, और जान लो! कि अल्लाह डरने वालों (परहेज़गारों) के साथ है। **(सूरः बकरः-१९०-१९४)**

व्याख्या-

यह आदेश मुसलमानों को उस समय दिया गया जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने मदीना आने के बाद मक्का के लोगों से एक सन्धि की जिसे सुल्हे-हुदैबिया के नाम से जाना जाता है उसी सन्धि की शर्त के अनुसार रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने सह़ाब-ए-किराम (साथियों) के साथ इस उमरा की क़ज़ा पूरी करने का इरादा किया, "जिसे एक वर्ष पूर्व क़ुरैशे मक्का ने यह कह कर रोक दिया था कि आप अगले वर्ष उमरा कर सकते हैं। परन्तु ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के साथियों को यह ख़याल आया कि काफ़िर अत्याचारियों की सन्धि का कोई भरोसा नहीं यदि वह उस वर्ष भी रोकने लगें तो हमें क्या करना चाहिए इस पर यह अनुमति अल्लाह की ओर से दी गयी कि यदि वह युद्ध करने लगें तो तुम्हें भी अनुमति है कि जहां पाओ उन को क़त्ल करो और जिस प्रकार उन्होंने मुसलमानों को मक्का से निकाला, तुम भी उनको मक्का से निकाल दो। **(क़ुर्तुबी)**

इस्लाम पर आपत्ति करने वालों ने क़ुर्आन मजीद की उपर्युक्त आयतों को पूर्ण रूप से पेश करने के बजाए अपने घृणित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उनके बीच में से वाक्य निकाल कर नक़्ल किए हैं कि-

काफ़िरों को कहाँ और कब क़त्ल करो

"काफ़िरों को जहाँ पाओ क़त्ल करो," "फ़ित्ना क़त्ल से ज़्यादा बुरा है," "तुम

उनसे बराबर युद्ध किए जाओ यहां तक कि फ़ित्ना बाक़ी न रहे और धर्म केवल अल्लाह के लिए हो जाए।"..... आदि।

हालाँकि कोई भी न्यायप्रिय व्यक्ति क़ुर्आन की इन सम्पूर्ण आयतों को एक साथ मिलाकर पढ़ेगा और उन ह़ालात को अपने सामने रखेगा जिनमें यह बात कही जा रही है तो वह कदापि, वह निष्कर्ष नहीं निकाल सकता, जो आपत्ति करने वाले, हमारे इन नादान भाईयों ने निकाला है और कहते हैं कि क़ुर्आन मुसलमानों को यह आदेश देता है कि ग़ैर-मुस्लिमों को क़त्ल कर दिया जाए।

क़त्ल का कारण-

वास्तविकता यह है कि क़ुर्आन मजीद में कुफ़्र (इन्कार) करने वालों और शिर्क करने वालों से युद्ध और लड़ाई करने की जो बात कही गई है वह इस वजह से नहीं है कि वे शिर्क करने वाले या कुफ़्र (इन्कार) करने वाले हैं, बल्कि यह निर्देश इसलिए दिया गया है कि इन लोगों ने ईशदूत ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और उनके अनुयायी मुसलमानों का जीना दूभर कर दिया था।

अत्याचार की एक झलक

मक्का के काफ़िर ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और उनके अनुयाइयों पर तरह-तरह के अत्याचार करते थे। जिस का उल्लेख पिछले पेजों में किया जा चुका कि दहकते अँगारों पर उन्हें नंगी पीठ लिटाकर भारी पत्थर रख देते थे, तपती हुई रेत में नंगा करके उन्हें घसीटते थे, लोहे की गर्म छड़ों से उनके शरीर को दाग़ देते थे, उनकी औ़रतों के साथ अत्यन्त घिनौना और अपमानजनक व्यवहार करते थे।

इन दुष्टों का ग़ुस्सा यहाँ तक बढ़ गया था कि ईशदूत ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की ह़त्या कर डालने की असफ़ल साज़िश तक इन्होंने कर डाली। इन दुष्टों का ईशदूत और उसके अनुयायियों को उनके अपने घरों से निकल जाने पर विवश कर दिया था और उस पर आर्थिक सितम यह कर रहे थे कि ईमानवालों ने इन दुष्टों के अत्याचारों से बचने के लिए जिन जगहों और देशों में पनाह ले

रखी थी ये दुष्ट वहां भी बार-बार उन पर ह़मला करते थे।

ये लोग ईमानवालों का बिल्कुल सफ़ाया कर देने पर तत्पर थे तथा अन्य क़बीलों, गिरोहों और क़ौमों से भी अपने इन घृणित और दुष्टतापूर्ण उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता लेते थे।

मक्का के विधर्मी महाईशदूत ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का अपमान करते थे, कअ़बः में नमाज़ नहीं पढ़ने देते थे, मिथ्या विचार करके आपके विरुद्ध लोगों को बहकाते और भड़काते थे और मुसलमानों पर भयंकर अत्याचार करते थे आपका और आपके परिवार का बहिष्कार किया जो तीन वर्ष तक जारी रहा, इसका बहिष्कार भी ऐसी निर्दयतापूर्ण था कि बहिष्कृत परिवार तक मुट्ठी भर खाद्य सामग्री नहीं पहुँच पाती थी बच्चे भूखों मरते थे, रोते बिलखते थे। जीवन रक्षा के लिए वृक्षों के पत्ते और सूखे चमड़े भिगोकर और घास तक खानी पड़ी थी। कितने हृदय हीन थे विरोधी! उद्देश्य यह था कि महाईशदूत सत्य धर्म का प्रचार त्याग करने पर बाध्य हो जाएँ, शत्रु इस प्रकार एक दो वर्ष नहीं १३ वर्ष तक विरोध तथा अत्याचार करते रहे अंत में उन्होंने महाईशदूत की हत्या करने की योजना बनाई, रात्रि में आपका घर घेर लिया कि आप बाहर निकलें तो आप की हत्या कर दें।

आप (सल्ल०) के जान के दुश्मन-

आप ईशदूत थे, ईश्वर आपका रक्षक था आप शत्रुओं के बीच से निकले और मदीना पहुँच गए जहाँ के निवासी मुसलमान हो चुके थे और उनके सरदारों में यह तय हो चुका था कि आप मक्का त्याग करके मदीना चले आयें।

अत्याचारी इतने पर ही संतुष्ट एवं शान्त न हुए उन्होंने मदीने पर चढ़ाई कर दी। इन आयतों में ऐसे ही विधर्मी शत्रुओं से युद्ध करने की आज्ञा दी गई है, क्या यह आज्ञा अनुचित है?

ऐसे शत्रुओं से भी युद्ध की आज्ञा देते हुए मुसलमानों को चेतावनी दी गई है कि तुमको युद्ध की अवस्था में भी ज़्यादती करना! अर्थात तुम्हारा कोई काम

अत्याचार पूर्ण न हो, याद रखो ईश्वर ज़्यादती करने वालों को पसंद नहीं करता।

ज़्यादती क्या है-

इस ज़्यादती का तात्पर्य भी समझ लेना चाहिए। ज़्यादती की मनाही के अन्तर्गत हर वह कार्य और व्यवहार आ जाता है जो अनुचित, अनैतिक तथा न्याय विरुद्ध हो। मुसलमानों को आदेश दिया गया है कि उन लोगों से युद्ध निषिद्ध है जो तुम्हारे धर्म में विध्न बाधा नहीं डालते। स्त्रियों, बालकों, बूढ़ों तथा आहतों पर हाथ न उठाना, खेतियों और पशुओं को निरर्थक हानि न पहुँचाना, अपनी शारीरिक शक्ति का वहीं प्रयोग करना जहाँ वह अनिवार्य हो और उसी सीमा तक करना जितने की आवश्यकता हो इससे अधिक नहीं। इस आदेश का उद्देश्य यह था कि इस्लाम से पहले अ़रब निवासी यह सब अमानुषिक कार्य करते थे।

जब शत्रु का शान्ति का विचार ही न हो, वह लड़ने ही पर कटिबद्ध हो तो ऐसी अवस्था में लड़ने के सिवा मार्ग ही कौन सा रह जाता है! इसलिये कहा गया है कि जहाँ भी उससे सामना हो जाए, और जहाँ से भी उसने तुमको निकाला है तुम उसे निकाल दो।

रक्तपात-

रक्तपात कोई प्रिय कार्य नहीं है परन्तु जब शत्रु कर्म धर्म में विध्न बाधा डालें, विद्या, ज्ञान, उक्ति और प्रमाण द्वारा अपने विचार सत्य सिद्ध करने के स्थान पर बलपूर्वक लोगों को सत्य मार्ग से रोकें और उन पर अपना विचार तथा अपना विश्वास अनाधिकार लादना चाहें तो यह ह़त्या से भी अधिक अमानुषिक कार्य है। ऐसे अत्यचारी शत्रुओं से युद्ध करना ही कल्याणकारी है।

कअ़बः की मर्यादा-

कअ़बः के क्षेत्र में युद्ध निषिद्ध है परन्तु मक्का के विधर्मी अपनी शक्ति के घमण्ड में कअ़बः की मर्यादा का भी विचार नहीं रखते थे। इसलिए मुसलमानों से

कहा गया कि तुम स्वयं को कअ़बः के क्षेत्र के अन्तर्गत युद्ध में पहल न करो, परन्तु शत्रु न माने, लड़े तो फिर तुम भी उनसे लड़ो।

युद्ध का परित्याग-

ऐसे विधर्मी अत्याचारी तथा दुष्ट शत्रुओं के सम्बन्ध में भी मुसलमानों से कहा गया है कि यदि वह युद्ध का परित्याग कर दें तो ईश्वर बड़ा क्षमाशील तथा दयावान है। इस पवित्र शैली में मुसलमानों को नैतिकता की उच्चकोटि की बात बताई गई है। इसका तात्पर्य यह है कि क्षमा शीलता और दयालुता ईश्वर का महान गुण है इसलिए मुसलमानों में भी यह गुण विद्यमान होना चाहिए। यदि शत्रु युद्ध का परित्याग कर दें तो फिर प्रतिकार की भावना से तुम्हारा लड़ना उचित नहीं। तुम्हारा उद्देश्य धर्म मार्ग की बाधा का दूर कर देना है, अतः शत्रु धर्म के मार्ग से हट जाएं तो तुम भी अपना हाथ रोक लो।

बाधा को दूर करने के लिए-

अन्त में फिर कहा गया है कि तुम्हारी लड़ाई तो धर्म के मार्ग से बाधा को हटाने के लिए है अतः तुमको उसी समय तक लड़ना है, जब तक बाधा हट न जाए और जब बाधा हट जाए और धर्म ईश्वर के लिए हो जाए अर्थात उसकी भक्ति, उपासना उसकी आज्ञा पालन में कोई बाधा न रह जाए, शत्रु युद्ध से रुक जाए तो तुम भी हाथ रोक लो लड़ाई का विधान तो अत्यचारियों ही के लिए है।

विचारणीय प्रश्न-

ग़ैर मुस्लिम भाई विचार करें कि युद्ध सम्बन्धी ऐसा नियम किस धर्म, किस विधान अथवा किस शास्त्र में है? विरोधियों ने ऐसी पवित्र शिक्षा को भ्रष्ट प्रचार करके क्या से क्या बना दिया?

यह तथ्य ईशदूत के ह़ालात और क़ुर्आन की उन आयतों की पृष्ठभूमि और सन्दर्भ से बिल्कुल स्पष्ट है जिनमें युद्ध और लड़ाई की बात की गई है।

ये सारे अत्याचार ईशदूत ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और उनके अनुयायियों

पर केवल इसलिए करते थे कि ये लोग ईश्वर को एक मानते और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को ईशदूत स्वीकार करते थे। वे ईश्वर के आदेशानुसार जीवन व्यतीत करते, शराब, जुआ, अश्लीलता, लड़कियों पर अत्याचार करने, लड़ाई-झगड़ा और अन्य सामाजिक और नैतिक बुराईयों से दूर रहते थे।

तनिक ईमानदारी से विचार करें कि क्या ऐसे दुष्टों और अत्याचारियों पर फूलों की बारिश करने का निर्देश देना चाहिए?

मृत्यु दण्ड-

क़ुर्आन मजीद में स्वयं अत्यन्त स्पष्ट रूप से बार-बार यह बात बताई गई है कि किसी व्यक्ति को भी इस्लाम स्वीकार कराने के लिए विवश नहीं किया जा सकता और न ही किसी व्यक्ति को इस्लाम स्वीकार न करने के कारण मृत्यु-दण्ड अथवा कोई सज़ा दी जा सकती है।

अगर कोई व्यक्ति ज़ोर-ज़बरदस्ती से इस्लाम स्वीकार कर भी लें तो उसकी यह स्वीकृति और उसका यह ईमान विश्वास के योग्य न होगा।

मुसलमान बनने के लिए दिल से राज़ी होना है

परमेश्वर के निकट तो सिरे से ऐसा ईमान मान्य ही नहीं है, क्योंकि ईमान के लिए अनिवार्य शर्त दिल की आमादगी और इच्छा है। तलवार से या बलपूर्वक यह कार्य नहीं किया जा सकता। क़ुर्आन ने अपनी शिक्षा और सन्देश को प्रमाणों सहित अत्यन्त स्पष्ट रूप में पेश करने के बाद इन्सान को उसे स्वीकार या अस्वीकार करने की पूर्ण स्वतंत्रता दी है।

एक आवश्यक स्पष्टीकरण-

यहाँ यह बात भी स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए कि युद्ध या दण्ड सम्बन्धी ये आदेश क़ुर्आन ने अपने अनुयायियों को व्यक्तिगत रूप से अलग-अलग नहीं दिए हैं, बल्कि ये निर्देश इस्लामी राज्य और सत्ताधारी वर्ग को दिए गए हैं तथा इनको व्यावहारिक रूप देने के लिए एक न्यायिक और प्रशासनिक प्रणाली भी दी

गई है।

कितने अफ़सोस की बात है कि आपत्ति और आक्षेप करने वाले अपनी बात को इस ढंग से पेश करते हैं, मानो प्रत्येक मुसलमान को व्यक्तिगत रूप में किसी को मृत्युदण्ड देने या किसी उपद्रवी की हत्या करने का अधिकार और आदेश कुर्आन ने दिया है। आक्षेपकर्त्ताओं की यह नीति सत्य और न्याय की अपेक्षाओं के विरुद्ध और उन्हें मुँह चिढ़ानेवाली है।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:-

وَقَاتِلُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ الَّذِيْنَ يُقَاتِلُوْنَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ ۝

अनुवाद-

"और तुम अल्लाह की राह में लड़ो उन लोगों से जो तुम से लड़ते हैं, मगर ज़्यादती (अत्याचार) न करना कि अल्लाह ज़्यादती करने वालों को पसंद नहीं करता;" (सूरः बक़रः १९०)

इस प्रकार की कुछ आयतों को लेकर इस्लाम के विरुद्ध बड़ा प्रचार किया गया हैं और इस्लाम के प्रति बड़ा भ्रम फैलाया गया है। कुर्आन ने मुसलमानों को आदेश दिया है कि काफ़िरों को जहाँ पाओ उनकी गर्दन मार दो, इस प्रचार की वास्तविकता क्या है? इसका स्पष्ट हो जाना भी आवश्यक है।

जिहाद पर आक्षेप-

एक साहब ने कुर्आन के दो भयंकर आदेश "जिहाद और जिज़्या", यह शीर्षक देकर लिखा है-

"अर्थात क़त्ल करो उन लोगों को जो ख़ुदा और क़ियामत के दिन पर ईमान नहीं रखते और उन वस्तुओं को ह़राम नहीं समझते जिन्हें ख़ुदा ने और उसके रसूल ने ह़राम किया है, और न सच्चे दीन अर्थात् इस्लाम को मंज़ूर करते हैं चाहे वह किताब वाले हों अर्थात यहूदी और ईसाई यहाँ तक कि ज़लील होकर वे अपने हाथ से जिज़्या देने लगें।"

जिहाद का आदेश शत्रुओं के साथ

जिहाद और जिज़्या का यह आदेश न सब यहूदियों के लिये है न सब ईसाईयों के लिए और न दूसरे सब ग़ैर मुस्लिमों के लिए यह आदेश केवल उनके लिये है जो इस्लाम और मुसलमानों के शत्रु हों जिनसे मुसलमानों का युद्ध चल रहा हो। यदि वह युद्ध करते हुए यह अनुभव करें कि वह पराजित हो जाएँगें और मुसलमान उनके नगर अथवा दुर्ग में प्रवेश करके उस पर अधिकार कर लेंगे तो जिज़्या देना स्वीकार करके मुसलमानों की रक्षा प्राप्त कर सकते हैं। क्या कोई धर्म कहता है कि घातक शत्रुओं को आज़ाद छोड़ दिया जाए कि वह जब अवसर पाएँ आघात पहुँचाते रहें?

इस्लाम केवल धर्म भेद की वजह से, न किसी सम्प्रदाय से लड़ने की अनुमति देता है और न किसी की ह़त्या करने की। उपरोक्त आयतें और ऐसी सभी आयतें शत्रुओं के सम्बन्ध में हैं।

अल्लाह ने ऐसे विधर्मी मक्का निवासियों से लड़ने की आज्ञा देकर कौन सी संकीर्णतापूर्ण तथा अनुदार शिक्षा दी है जो अस्त्र-शस्त्र द्वारा इस्लाम तथा मुसलमानों का उन्मूलन कर देना चाहते थे?

विधर्मियों से युद्ध-

क्या श्री रामचन्द्रजी और श्रीकृष्णजी ने दुष्ट विधर्मियों से युद्ध नहीं किये? हम पवित्र कुर्आन की उस आयत से जिसमें 'फ़ित्ना' का शब्द आया है, उससे भी भलीभाँति स्पष्ट हो जाता है कि फ़ित्ना की वास्तविकता क्या है और जिनसे लड़ने की अनुमति दी गई वह कितने अत्याचारी थे।

उन लोगों से युद्ध करने का आदेश दिया गया है? जो मुसलमानों से युद्ध कर रहे थे और जिन्होंने मुसलमानों को उनके देश से निकाल दिया था फिर भी मुसलमानों के धर्ममार्ग में बाधक बने हुए थे युद्ध का त्याग नहीं करते थे। उनके प्रति भी अल्लाह ने मुसलमानों को चेतावनी दी है कि यदि वह युद्ध का परित्याग कर दें तो तुम भी युद्ध का परित्याग कर दो ज़्यादती मत करो। अल्लाह ज़्यादती

करने वालों को पसन्द नहीं करता, उन्होंने जो अत्याचार किए हैं अल्लाह उन्हें भी क्षमा करेगा वह अति दयावान है।

यह है इस्लाम और मुसलमानों के शत्रुओं का 'फ़ित्ना', परन्तु विधर्मियों के समर्थक तथा इस्लाम के विरोधी लोगों ने 'फ़ितना' की व्याख्या इस प्रकार की है।

फ़ित्ना की व्याख्या

"फ़ित्ना शब्द का अर्थ तो होता है उपद्रव परन्तु उपद्रव या झगड़ा था किस बात पर? मूर्ति पूजा पर, कुरैश मूर्ति पूजक थे ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) मूर्ति पूजा को बुरा कहते थे, अतः कुरैश उनका विरोध करते थे।"

ऊपर की पंक्ति कितनी मिथ्यापूर्ण और अन्याय संगत वकालत है मक्के के मूर्ति पूजकों की। मानो बात इतनी ही थी "ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) मूर्ति पूजा को बुरा कहते थे, अतः कुरैश उनका विरोध करते थे।"

इसकी वास्तविकता को बे डकारे हजम कर गए कि महाईशदूत शान्ति पूर्ण भाव से इस्लाम का प्रचार कर रहे थे और मक्का के कुरैश अपनी बहु संख्या, शक्ति तथा युद्ध के द्वारा मुसलमानों को उनके धर्माचरण में विध्न बाधा ही नहीं डाल रहे थे बल्कि इस्लाम को समाप्त भी कर देना चाहते थे।

यह था फ़ित्ना मक्का के मूर्तिपूजकों का, परन्तु लोगों ने उनकी वकालत उन वकीलों की तरह की है जो हत्यारों को भी निर्दोष सिद्ध करते हैं। अतः आयत का अन्तिम भाग छोड़ दिया जिससे मक्का निवासियों का अपराध स्पष्ट हो जाता है आयत का अन्तिम भाग यह है-

"फिर यदि वह अपनी ज़्यादती से बाज़ आ जाएँ तो अल्लाह उनके कर्मो को देखता है वह उनके नेक कर्मो का फल अवश्य देगा।"

हमारी समझ में नहीं आता कि मक्का के मूर्ति पूजकों से लोगों का किस जन्म का सम्बन्ध है कि वह मक्का के मूर्ति पूजकों की वकालत करते हैं, जबकि मक्का निवासी स्वयं इस्लाम की सत्यता स्वीकार करके इस्लाम के प्रचारक बन गए थे।

कहावत है, **मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त।**

परन्तु कुछ लोग तो कहावत से भी आगे बढ़ गए, अपराधियों ने अपराध स्वीकार कर लिया और कुछ लोग उनकी वकालत किए जा रहे हैं, भारत के कुछ मुसलमान शासकों ने जो कुछ किया उसका सम्बन्ध भी इस्लाम से नहीं राजनीति से था।

युद्ध की परिस्थियाँ

कुर्आन की इस आयत में युद्ध से सम्बन्धित ऐसे क़ीमती, उपयोगी और कल्याणकारी सिद्धान्त बयान किए गए हैं, जिनका इन्कार नहीं किया जा सकता। ऐसे सिद्धान्त केवल वास्तविक परमेश्वर की ओर से ही हो सकते हैं:

ईश्वरीय मार्ग के लिए युद्ध-

इस्लामी राज्य को इस नियम का पाबन्द बनाया गया है कि युद्ध केवल ईश्वरीय मार्ग ही में किया जा सकता है अर्थात युद्ध न तो अपने आर्थिक उद्देश्यों और हितों की पूर्ति के लिए हो, न अपना प्रभुत्व स्थापित करने के लिए। ईश्वरीय मार्ग का मतलब है सत्य व न्याय का मार्ग, अमन व शान्ति की स्थापना, अपने वास्तविक प्रभु की इच्छा और उसकी बताई हुई बातों पर अ़मल के लिए।

युद्ध-

युद्ध के लिए जो सक्रिय हों केवल उन्हीं लोगों से युद्ध करने की अनुमति दी गई है जो युद्ध करने पर तुले हों या जिन्होंने ह़क़ के ख़िलाफ़ युद्ध छेड़ दिया हो।

युद्ध सम्बन्धी सीमाओं का पालन करना अनिवार्य

अगर युद्ध की नौबत आ जाए तब भी युद्ध की कुछ सीमाएँ और मर्यादाएँ कुर्आन ने निश्चित की हैं जिनको ध्यान में रखना ज़रुरी होता है और उनका उल्लंघन करने वाले लोगों को सावधान किया गया है कि परमेश्वर ऐसे लोगों को पसन्द नहीं करता।

जैसे- "दुश्मनों की औ़रतों, बच्चों, बूढ़ों तथा ज़ख़्मियों पर हाथ न उठाया

जाए। जो लोग पूजा-पाठ और उपासना में व्यस्त हैं उन्हें किसी प्रकार की हानि न पहुँचाई जाए। फ़सलों और पेड़ों को नष्ट न किया जाए और जानवरों को न मारा जाए। दुश्मनों की लाशों के अंग न काटे जाएँ आदि।"

युद्ध के समय की सीमाओं और निर्देशों की पाबन्दी न करने पर परमेश्वर ने यह चेतावनी दी है कि तुम्हारी सारी मेहनत और सारी क़ुर्बानियाँ निरर्थक सिद्ध होंगी, बल्कि उल्टे तुम अपराधी और ईश्वरीय प्रकोप के भागी होगे।

इस्लामी लड़ाईयाँ क्यों?

यह बात तो भली भाँति सिद्ध हो गई है कि इस्लाम में ज़बरदस्ती मुसलमान बनाने की अनुमति कही नहीं है फिर भी जो भ्रम और सन्देह एक युग से जड़ पकड़े हुए हैं उसके कारण कुछ लोगों के मन में यह सवाल पैदा हो सकता है कि क़ुर्आन में जो युद्ध की आज्ञायें हैं उनका उद्देश्य क्या है? और ह़ज़रत रसूलुल्लाह (सल्ल०) (उन पर ईश्वर की दया और कृपा हो) और उनके सह़ाबा के समय में जो लड़ाईयाँ हुईं वह क्यों हुईं?

जब यह बात सिद्ध हो गई कि इस्लाम ज़बरदस्ती मुसलमान बनाने की इजाज़त नहीं देता तो सिरे से यह भ्रम और सन्देह ही अनुचित है कि क़ुर्आन में युद्ध का आदेश है और इस्लाम के पैग़म्बर और उनके सह़ाबा के काल में लड़ाईयाँ हुई हैं तो वह लोगों को ज़बरदस्ती मुसलमान ही बनाने के लिए हुई होंगी। हर विवेकशील व्यक्ति स्वंय सोच सकता है कि इस्लामी लड़ाईयों का उद्देश्य ही कुछ और होगा और यही तथ्य भी है।

हम यहाँ दो प्रमुख विद्वानों की सम्मतियाँ देना आवश्यक समझते हैं जो हमारे विषय से सम्बन्ध रखती है।

मिसेज़ एनीबेसन्ट

प्रसिद्ध अंग्रेज़ महिला 'मिसेज़ एनी बेसन्ट' जो हिन्दुस्तान के इतिहास में अपना एक विशेष स्थान रखती हैं अपने एक लेक्चर में कहती हैं-

"ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) देश-त्याग कर मदीना पहुँचते हैं और वहाँ के

लोग उनसे अति प्रेम पूर्वक व्यवहार करते हैं और वहाँ के शासक बना दिये जाते हैं। उनके दुश्मन मक्का से उनका पीछा करते हैं। ह़ज़रत के साथियों की संख्या बहुत कम है और दुश्मनों की सेना बहुत ज़्यादा है। अंततः दोनों के बीच लड़ाई होती है और यह युद्ध **"बद्र की लड़ाई"** के नाम से प्रसिद्ध है। पैग़म्बर साह़ब कहते हैं-

"ऐ ख़ुदा! अगर आज यह छोटी सी टोली तबाह हो गई तो फिर (दुनिया में) तेरी सच्ची उपासना करने वाला कोई प्राणी बाक़ी न रहेगा।"

लड़ाई घमासान की होती है और ह़ज़रत की जीत हो जाती है, इसलिए कि ईश्वरी शक्ति ह़ज़रत के साथ है। यही ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की पहली लड़ाई है जो रक्षा के उद्देश्य से लड़ी गई।

पैग़म्बर साह़ब हमेशा से सह़दय और दयालु थे उनके शत्रु उन्हें "स्त्री ह़दय रखने वाला" कह कर पुकारते थे। लेकिन अब वह प्राईवेट व्यक्ति की स्थिति में नहीं है कि वह उन समस्त अपराधों को क्षमा कर दें जो उनके विरुद्ध किये गये हैं, वह एक राज्य के शासक हैं एक सेना के सेनाध्यक्ष हैं और उनके ऊपर उन साथियों के भी कुछ अधिकार हैं, जिन्होंने उन पर भरोसा कर रखा है। वह दिन आ रहे हैं जब कि प्राईवेट व्यक्ति के रूप में वह अपराधों को क्षमा कर देंगे। लेकिन एक शासक के रूप में उनके लिए दण्ड देना अनिवार्य होगा। और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ऐसे नहीं हैं कि केवल किसी भावना वश कोई काम कर जायें।

बद्र की विजय के बाद सिर्फ़ दो आदमियों को प्राण दण्ड दिया गया और अ़रब की रस्म के विरुद्ध क़ैदियों के साथ ह़ज़रत की आज्ञानुसार अत्यन्त दया पूर्ण व्यवहार किया गया। मुसलमान इन्हें रोटी खिलाते थे और अपने लिये सिर्फ़ खजूरें रखते थे।" **(मासिक निज़ामुल्मशाइख़ "दिल्ली जमादिलूऊला १३३४ हि०)**

प्रसिद्ध इतिह़ासकार मिस्टर एडवर्ल्ड गिब्बन लिखते हैं

"प्राकृतिक नियम के अनुसार हर आदमी का ह़क़ है कि हथियारों द्वारा अपने प्राण और धन की रक्षा करे, अपने दुश्मनों के अत्याचार और दमन का बल पूर्वक प्रतिकार करे या रोके और उनके साथ दुश्मनी को बदले की उचित सीमा तक

प्रसारित करे।

अ़रबों के स्वतंत्र समाज में क्या प्रजा होने के विचार से और क्या एक नगर के निवासियों के पारस्पारिक बर्ताव के विचार से लोगों के कर्तव्य में एक कमज़ोर सी रोक थी और मुह़म्मद (सल्ल०) को अपने देशवासियों की बेइन्साफ़ी के कारण अपना सन्देश पहुँचाने से जो सर्वथा शान्तिपूर्ण और जनता की भलाई पर निर्भर था, वंचित किया गया और स्वदेश से निकाला गया था। एक स्वधीन जाति की स्वीकृति ने मक्का के इस शरणार्थी को शासक के पद पर पहुँचा दिया और उसको उचित रूप से लोगों के साथ संधि करने और शत्रुओं के आक्रमणों को दूर करने या उन पर आक्रमण करने का अधिकार प्राप्त हो गया"।

".....शुभ चिन्तक बुद्धि विश्वास कर सकती है कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का वास्तविक उद्देश्य शुद्ध और संसार का सच्चा कल्याण था। मगर एक ऐसे पैग़म्बर से जो मनुष्य था यह नहीं हो सकता कि वह ऐसे हठी विरोधियों को सहन करें जो उसके दावों का इन्कार और उसके तर्कों का अपमान करें, और उसके प्राण को कष्ट पहुँचायें। वह अपने निजी दुश्मनों को तो क्षमा कर सकता है मगर ईश्वर के शत्रुओं से उचित रूप से दुश्मनी रख सकता है. ....." **(एजाज़ुत्तन्ज़ील पृष्ठ ४५०)**

प्रसिद्ध अंग्रेज़ इतिहासकार मिस्टर टामस कारलायल लिखते हैं

"ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने अब तक अपने धर्म के प्रचार के लिए सिर्फ़ वाज़ और उपदेश का तरीक़ा अख़्तियार कर रखा था, लेकिन अब जो बुरे तरीक़े पर उनको स्वदेश से निकाला गया और अत्याचारी लोगों ने केवल इतना ही नहीं किया कि उनके सच्चे अलौकिक सन्देश के सुनने में उपेक्षा प्रकट की जो उनके ह़दय का एक गहरा चीत्कार था बल्कि जब वह इस सन्देश के सुनाने से चुप न हुये तो उनके जीवन के बाधक बन गये।

ऐसी परिस्थिति में उस जंगल निवासी ने एक वीर अ़रब की तरह अपनी

रक्षा का निश्चय किया, उन्होंने विचार किया कि अगर कुरैश की यही इच्छा है, तो अच्छा यूं ही सही, जो सन्देश कुरैश और सारे संसार के मनुष्यों के लिए अत्यन्त महान था इसके सुनने से उन्होंने इंकार कर दिया और अत्याचार, दमन, तलवार और हिंसा से उसका मलियामेट कर देने का प्रयत्न किया तो लोहे का सामना लोहे से करना चाहिए फिर हुआ यह कि ह़ज़रत मुह़म्मद को दस बरस युद्ध कठिन श्रम और संघर्ष में बिताना पड़ा और उसका जो कुछ परिणाम हुआ उससे हम सब अवगत हैं।"

वास्तविक बात यह है कि इस्लाम केवल ईश्वर-पूजा पाठ और कुछ जातीय रीति-रिवाज तक सीमित नहीं है। वह साम्राज्यवाद, समाजवाद, साम्यवाद आदि की तरह एक पूर्ण मानव जीवन व्यवस्था है जिसे आप चाहें तो ईश्वरवाद कह सकते हैं यानी ईश्वरीय आदेशों और नियमों पर आधारित कोई मानव जीवन व्यवस्था ऐसी नहीं हो सकती जिसमें युद्ध आवश्यक और अनिवार्य न हो। ऐसी कोई व्यवस्था बाहरी शत्रुओं से सुरक्षित रह सकती है और न भीतरी दुष्टों और द्रोहियों से, और न वह अपने उद्देश्य और सिद्धान्त को सफ़ल बना सकती है यदि इसके साथ युद्ध शक्ति और युद्ध प्रबन्ध न हो। जिस जीवन व्यवस्था को आप स्वयं मानते हैं उसी के सम्बन्ध में सोच लीजिए, क्या यह वह युद्ध शक्ति के बिना अपने उद्देश्य और सिद्धान्त में सफ़ल हो सकती हैं? और सफ़ल होकर स्थिर और बाक़ी रह सकती हैं? नहीं, कदापि नहीं, यह असम्भव है।

इस्लाम को अपने आदि काल में बड़े-बड़े दुखों और संकटों से सामना हुआ। ह़ज़रत रसूलुल्लाह और उनके मुट्ठी भर सह़ाबा अपने विश्वास, सिद्धान्त और उद्देश्य का पालन करने और दूसरों को इसका सन्देश देने के सिवा और कुछ नहीं करते थे लेकिन इतने ही पर सारा नगर, सारा देश, और सारी जाति आप लोगों की शत्रु बन गई। महीना दो महीना नहीं बरस दो बरस नहीं पूरे बारह बरस तक मुसलमानों पर निरन्तर अत्याचार होते रहे। निश्चय कर लिया गया था कि मुसलमानों को कुचल डाला जाये और इस्लाम को मिटा दिया जाए। यहाँ तक कि ह़ज़रत पैग़म्बरे इस्लाम और मुसलमान अपनी जन्म-भूमि और अपना सब कुछ

छोड़ कर मक्का से मदीना चले गये। इतने पर भी इस्लाम और मुसलमानों के विरुद्ध शत्रुता और अत्याचार का सिलसिला जारी ही रहा। जो मुसलमान अपनी बेबसी के कारण मक्का ही में रह गये थे वह और ज़्यादा सताये जाने लगे। और जो मुसलमान मदीना चले गये थे उन पर भी आक्रमण होने लगे। तब कहीं जाकर मुसलमानों को युद्ध करने की अनुमति मिली।

वैदिक ग्रन्थों में युद्ध-सम्बन्धी निर्देश

इस समय इस्लाम और कुर्आन पर आपत्ति और आक्षेप कुछ लोग करते हैं जबकि स्वयं हिन्दू धर्म में युद्ध लड़ाई और माले ग़नीमत (युद्ध में प्राप्त माल) के सम्बन्ध में आदेश एवं निर्देश दिए गए हैं। इस सिलसिले में हम यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत करते हैं जैसे-

शत्रुओं से जंग

रुद्रो वो ग्रीवा अशरैतू पिशाचाः पृष्टीर्वोऽपि शृणातृ यातुधानाः।
वीरुद् वो विश्वतोवीर्या यमेन समजीगमत्।।२।।

(अथर्ववेद ६-३२-२)

अर्थ-

"हे मांसभक्षक! (रोगों व प्राणियों) दुखनाशक सेनापति ने तुम्हारे गले को तोड़ डाला है। हे पीड़ादायको! तुम्हारी पसुलियाँ भी तोड़े। सब ओर से सामर्थ्यवाली विविध प्रकार से प्रकोपित होने वाली शक्ति (परमेश्वर) ने तुमको नियम के साथ संयुक्त किया है।"

भावार्थ-

इस श्लोक का भावार्थ बयान करते हुए वेदों के टीकाकार श्री पंडित क्षेमकरणदास त्रिवेदी जी लिखते हैं:

"प्रतापी राजा दुखदायक शत्रु और रोगों का सदा प्रतिकार करे। इस परमात्मा ने सबके कर्मों को वेद द्वारा नियमबद्ध किया है।"

शत्रुओं के धन का बटवारा

निर्हस्ताः सन्तु शत्रवोऽङ्रै.षां म्लापयामसि।
अथैषामिन्द्र वेदांसि शतशो वि भजामहै।।३।।

(अथर्ववेद ६-६६-३)

अर्थ-

"शत्रु लोग निहत्थे हो जावें, उनके अंगों को हम शिथिल करते हैं। फिर हे महाप्रतापी सेनापति इन्द्र! उनके सब धनों का सैकड़ों प्रकार से हम बांट लेवे।"[४]

भावार्थ-

पंडित क्षेमकरणदास त्रिवेदी जी इस श्लोक का भावार्थ बयान करते हुए लिखते हैं:

"विजयी वीर पुरुष शत्रुओं को जीतकर सेनापति की आज्ञानुसार राजविभाग निकालकर उनका धन बांट लेवें।"

शत्रु का मुक़ाबला

ऐषु नह्म वृषाजिनं हरिणस्या भियं कृधि।
पराड.मित्र एषत्वर्वाची गौरुपेषतु ।।

(अथर्ववेद ६-६७-३)

अर्थ-

"(हे सेनापति!) इन (अपने वीरों) में ऐश्वर्यवान पुरुष को चर्म (कवच) पहिना दे और (शत्रुओं में) हरिण का डरपोकपन कर दे। शत्रु उलटे मुख होकर चला जावे, भूमि (युद्ध भूमि और राज्य) हमारी ओर चली आवे।"

अत्याचारियों को दण्ड

एवा त्वं देव्यध्न्य ब्रह्मज्यस्य कृतागसो देवपीयोराधसः।।
वज्रेण शतपर्वणा तीक्ष्णेन क्षुरभृष्टिना।।

प्र स्कन्धान् प्र शिरो जहि।।
लोमान्यस्य सं छिन्धि त्वचमस्य वि वेष्टय।।
मांसान्यस्य शातय स्नावान्यस्य सं वृह ।।
अस्थीन्यस्य पीडय मज्जानमस्य निर्जहि ।।
सर्वास्याङ्र.ा पर्वाणि वि श्रथय।। (अथर्ववेद १२ः ५ः ६५-७१)

अर्थ-

" हे देवी! (उत्तम गुणवाली), हे अवध्य (न मारने योग्य प्रबल वेद वाणी)! तू इसी प्रकार ब्रह्मचारियों के हानिकारक, अपराध करने वाले, विद्वानों के सताने वाले, अदानशील पुरुष के ।। ६५।। सैकड़ों जोड़वाले, तोड़-तोड़ दे ।।६७।। उस (वेद-विरोधी) के लोमों को काट डाल, उसकी खाल उतार ले ।।६८।। उसके मांस के टुकड़ों में बोटी-बोटी कर दे, उसके नसों को ऐंठ दे ।।६९।। उसकी हड्डियाँ मसल डाल, उसकी मींग (निर्जहि) निकाल दे ।। ७०।। उसके सब अंगों और जोड़ों को ढ़ीला कर दे।"

भावार्थ-

वेद के उपरोक्त श्लाकों में से ६५-६७ का भावार्थ बयान करते हुए पंडित क्षेमकरण दास त्रिवेदी जी लिखते हैंः

"वेदानुयायी धर्मात्मा राजा वेदविरोधी दुष्टाचारियों को प्रचण्डदण्ड देवे।"

तथा उपरोक्त श्लोकों में से ६८-७१ का भावार्थ यह बयान करते हैंः

"नीति निपुण धर्मज्ञ राजा वेद मार्ग पर चलकर वेद विमुख अत्याचारी लोगों को विविध प्रकार दण्ड देकर पीड़ा देवे।"

शत्रुओं को सख़्त सज़ा

मूढा अमित्राश्चरताशीर्षाण इवाहयः।
तेषां वो अग्मिनूढानामिन्द्रो हन्तु वरंवरम् ।।

(अथर्ववेद ६-६७-२)

अर्थ- "हे घबड़ाए हुए, पीड़ा देने वाले शत्रुओं! बिना शिरवाले (शिर कटे) साँपों

के समान चेष्टा करो। प्रतापी वीर राजा अग्नि (आग्नेय शस्त्रों) से घबड़ाए हुए, उन तुम सबों में से अच्छे-अच्छों को चुनकर मारे।"

भावार्थ-

इस श्लोक का भावार्थ बयान करते हुए वेदों के टीकाकार पंडित क्षेमकरण दास त्रिवेदी जी लिखते हैंः

"कुशल सेनापति इस प्रकार व्यूह रचना करें कि शत्रु के सेनादल विध्वंस होकर घबड़ा जावें और उनके बड़े-बड़े नायक मारे जावें।"

हिंसकों का क़त्ल

पियारूणां प्रजां जहि (अथर्ववेद ११-२-२१)

अर्थ- "हिंसकों की प्रजा (जनता) को मार।"

वेद द्वेषियों का नष्ट

अव ब्रह्मद्विषो जहि (अथर्ववेद २०-९३-१)

अर्थ- वेद-द्वेषियों को नष्ट कर दे।"

शत्रुओं का क़त्ल

त्वं तूर्य तरुष्यतः ।। (अथर्ववेद २०-१०५-१)

अर्थ- "तू मारनेवाले शत्रुओं को मार। "

कष्ट देने वाले की सज़ा

सर्वं परिक्रोशं जहि जम्भया कृकदाश्वम् (अथर्ववेद २०-७४-७)

अर्थ- " (हे राजन्!) प्रत्येक निन्दक, कष्ट देने वाले को पहुँच और मार डाल।"

पापी को नष्ट कर

समिन्द्र गर्दभं मृण नुवन्तं पापयामुया ।। (अथर्ववेद २०-७४-५)

अर्थ– "हे इन्द्र (बड़े प्रतापी राजन्)! उस प्रक्रिया के साथ स्तुति करते हुए गदहे (के समान व्यर्थ रेंगनेवाले निन्दक पुरुष) को मार डाल।"

दुष्ट की पसुलियों को तोड़

चक्षुर्मन्त्रस्य दुर्हार्दः पृष्टीरपि शृणाञ्जन (अथर्ववेद १८-४५-१)

अर्थ– " हे अञ्जन! आँख के इशारे से हानि करने वाले, दुष्ट हृदयवाले की पसुलियों को तोड़।।"

जीता हुआ माल

जितमस्माकम् (अथर्ववेद १०-५-३६)

अर्थ– "जो जीत लिया गया वह सब हमारा है।"

शत्रु के साथ मामला

छत्रुयतामा भरा भोनानि (अथर्ववेद ४-२२-६)

अर्थ– "शत्रु जैसा आचरण करने वालों के भोजन के साधन यहां ला।"

धर्मयुद्ध न करने वाले पापी

श्री कृष्ण जी कहते हैं:

यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्।
सुखीनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम ।।३२।।
अथ चेत्वमिमं धर्म्य सङ्ग्रामं न करिष्यसि।
ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि ।। ३३।।
अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम् ।।
सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते ।। ३४।।

(श्रीमद्भगवद्गीता २: ३२-३४)

अर्थ– " हे पार्थ (अर्जुन)! अपने-आप प्राप्त हुए और खुले हुए स्वर्ग के द्वार रूप इस प्रकार के युद्ध को भाग्यवान क्षत्रिय लोग ही पाते हैं। और यदि तू इस धर्म युक्त संग्राम को नहीं करेगा तो स्वधर्म को और कीर्ति को खोकर पाप को प्राप्त होगा और सब लोग तेरी बहुत काल तक रहने वाली अपकीर्ति को भी कथन करेंगे और वह अपकीर्ति माननीय पुरुष के लिए मरण से भी अधिक बुरी होती है।"

युद्ध से भागने वाले की सज़ा

यच्चास्य सुकृतं किञ्चिदमुत्रार्थमुपार्जितम् ।
भर्ता तत्सर्वमादते परावृत्तहतस्य तु ।।
रथाश्वं हस्तिनं छत्रं धनं धान्यं पशून् स्त्रियः ।
सर्वद्रव्याणि कुप्यं च यो यज्जयति तस्य तत् ।।

(मनुस्मृति, ७: ९५-९६)

अर्थ– "युद्ध में भागने वाले के परलोक के लिए संचित सभी पुण्य उसके स्वामी को प्राप्त होते हैं। रथ, घोड़े, हाथी, छत्र, धन, धान्य, पशु, स्त्री (दासी आदि) गुड़, नमक द्रव्य (चाँदी, सोना छोड़कर) ताँबा, पीतल आदि द्रव्य इनमें जिस वस्तु को जो जीतकर लाता है वह उसी का होता है।"

सैनिकों द्वारा जीता हुआ धन

राज्ञश्च दद्युरुद्धारमित्येषा वैदिकी श्रुतिः।
राज्ञा च सर्वयोधेभ्यो दातव्यमपृथग्जितम् ।। (मनुस्मृति, ७:९७)

अर्थ– "योद्धा युद्ध में जीते हुए हाथी, घोड़े, रथ आदि सब कुछ राजा को अर्पित कर दे; यह वेद का वचन है। सभी सैनिकों द्वारा एक साथ जीता हुआ जो धन हो उसे राजा सैनिकों में बांट दे।"

शेर के समान हमला

बकवच्चिन्तयेदर्थान् सिंहवच्च पराक्रमेत् ।

वृकवच्चावलुम्पेत शशवच्च विनिष्पतेत् ।।

(मनुस्मृति, ७: १०६)

अर्थ- "बगुले की तरह धन लेने की चिंता करे, सिंह के समान पराक्रम करें, भेड़िए की भांति अवसर पाकर शत्रु को मार डाले और बलवार शत्रु से घिर जानेपर खरहे (खरगोश) की भांति निकल भागें।"

दुष्ट कर्म करने वालों का नाश

संसार में सत्य धर्म का प्रचार व प्रसार करने के लिए देखें कि उनकी गीता क्या कहती है:-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मानं सृज्जात्तयहम।।
परित्राणाय साधुनां विनाशाय च दृष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।

(गीता, अध्याय ४- श्लोक ७६०)

"अर्थात जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की बढ़ोत्री होती है तब मैं ही अपने रूप को रचता हूं। क्योंकि साधू पुरुषों का उद्धार करने के लिए और दुष्ट कर्म करने वालों का नाश करने के लिए तथा धर्म स्थापन करने के लिए युग युग में प्रकट होता हूँ।"

ऊपर की पंक्तियों से जिहाद स्वयं समझ में आ जाना चाहिए।

देवता स्वरूप आर्यों ने क्या किया?

देवता स्वरूप आर्यों ने भारत के प्राचीन निवासियों के साथ क्या किया? उनको मारा, काटा, लूटा वह जंगलों में शरण लेने पर बाध्य हो गए और वह आज तक जंगली जीवन व्यतीत कर रहे हैं। यह भारत के शूद्र कौन हैं? उनको किसने अछूत बना रखा है? यह किस धर्म का प्रभाव है? लोग अपने इतिहास को याद नहीं करते। मुसलमानों की क्रूरता व्यक्त करने के लिए लोग कर्बला की घटना की

ओर संकेत करते हैं। किस जाति में अत्याचारी और अन्यायी नहीं हुए हैं?

रावण का धर्म-

रावण भी वैदिक धर्म का अनुयायी था कितना अत्याचारी था। महाभारत का युद्ध भी लोगों को याद नहीं रहा कृष्णजी का जिनसे युद्ध हुआ वह भी तो अत्याचारी तथा अन्यायी ही था। उसका धर्म क्या था ?

उसमें यह दुर्गुण किस धर्म के प्रभाव से उत्पन्न हो गया था? क्या भारत के राजा महाराजा सन्यासी थे? वह मुसलमानों के भारत में आने से पहले भी आपस में लड़ते रहते थे और मुसलमानों के आने के बाद भी लड़ते रहे। यह सब किस धर्म का प्रभाव था। भारत का इतिहास परस्पर के युद्धों से भरा हुआ है।

हनुमान जी के द्वारा लंका-दहन, सीता जी को मुक्त कराने के लिए श्री रामचन्द्र जी का लंका पर आक्रमण और एक ही कुटुम्ब, पांडवों और कौरवों, के बीच भयानक खूनी महाभारत के युद्ध की घटनाएँ और उनके विवरण किसी से छिपे नहीं हैं। आपत्तिकर्ता हमारे ये भाई उनके बारे में हम से अधिक जानकारी रखते हैं। हमने यहां केवल कुछ नमूने ही पेश किए हैं अन्यथा इस क्रम की शिक्षाएँ, आदेश और निर्देश वेदों, गीता, मनुस्मृति और अन्य ग्रन्थों में बहुतायत के साथ मौजूद हैं।

हिन्दू धर्म की इन शिक्षाओं और आदेशों की पृष्ठभूमि और सन्दर्भ को ध्यान में रखें बिना सिर्फ़ उनके शब्दों के बाह्य अर्थो को देखकर कोई व्यक्ति अपना मनमाना निष्कर्ष निकालने लगे तो क्या कुर्आन पर आपत्ति करने वाले हमारे ये भाई इस नीति को उचित ठहराएँगे?

वास्तव में इनका उद्देश्य तो दुनिया में न्याय और सत्य की स्थापना करना, इन्सान को वास्तविक शान्ति और सफ़लता उपलब्ध कराना है और उसे एक अच्छा इन्सान और एक आदर्श नागरिक बनाना है।

एक ही घटना के दो रुख़

एक ही घटना में व्यक्ति उस घटना की पृष्ठभूमि ज्ञात न होने के कारण एक

निष्कर्ष निकालता है और पृष्ठभूमि और उद्देश्य मालूम हो जाने के बाद उसके विपरीत बिलकुल दूसरा निष्कर्ष निकालता है। **(क़ुर्आन पर अनुचित आक्षेप)**

आतंकवाद और इस्लाम

आजकल इस्लामी जिहाद और आतंकवाद के अन्तर को स्पष्ट किये बिना हर प्रकार की ख़ूँरेज़ी को इस्लाम से जोड़ दिया जाता है और संचार माध्यमों के द्वारा 'आतंकवाद' शब्द का बहुत प्रयोग हो रहा है और कुछ राजनीतिक तत्व यह सिद्ध करने की चेष्टा भी कर रहे हैं कि इसका सम्बन्ध इस्लाम से है। हालाँकि सामान्यतः न तो आतंकवाद का अर्थ लोगों को ठीक-ठीक मालूम है और न यह आसानी से सिद्ध किया जा सकता है कि इसका कोई सम्बन्ध इस्लाम से भी हो सकता है।

आतंकवाद का अर्थ

वस्तुतः उर्दू में शब्द "दहशत पसन्दी" अंग्रेज़ी शब्द Terrorism का अनुवाद है। "टेरर" का अर्थ है बहुत अधिक भय, ख़तूरा और आतंक। इस अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए फ़ारसी शब्द "दहशत"(आतंक) का प्रयोग किया गया, और अंग्रेज़ी के "इज़्म" का अनुवाद "पसन्दी" (वाद)।

इस प्रकार इसका पूरा अर्थ यह हुआ कि लोगों में भय एवं आतंक पैदा करने के मत का नाम दहशत पसन्दी (आतंकवाद) है। दूसरे शब्दों में जो लोग दूसरों की हत्या और विध्वंस आदि जैसे अवैधानिक, अनैतिक एवं अमानवीय कृत्यों के द्वारा डरा धमका कर अपने अवांछनीय उद्देश्यों की पूर्ति करना चाहते हैं, उनका यह कुकृत्य आतंकवाद है।

आतंकवाद का इतिहास

यह बात पत्रकारिता में विशेषकर उस समय से बहुत बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत किया जा रहा है जब फ़िलिस्तीनी मुक्ति संगठन (Palestinian Liberation Organization) के शस्त्रधारी दल के रूप में "अलफ़तूह़" ने इस्राईली राज्य और

यहूदी (Zionist) आतंकवादियों और उनके समर्थकों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मुँहतोड़ जवाब देना शुरु किया। यद्यपि अत्याचारियों के विरुद्ध पीड़ितों की इस गतिविधि में ऐसे तत्व सक्रिय थे, जिनका कोई संगठनात्मक सम्बन्ध फ़िलिस्तीनी मुक्ति संगठन (P.L.O) से नहीं था।

आतंकवाद की परिभाषा

संयुक्त राष्ट्र संघ ने दिनांक १८ दिसम्बर, १९७२ से ७ दिसम्बर १९८७ के बीच हुए विभिन्न अधिवेशनों में पन्द्रह वर्ष केवल 'आतंकवाद' की परिभाषा एवं व्याख्या में बिता दिया, परन्तु आज तक इस शब्द का कोई सर्वसम्मत अर्थ निश्चित नहीं हो सका। यह विषय पारिभाषिक आतंकवाद और उसके राजनीतिक प्रयोग का है।

आतंकवाद का आरोप आज के विश्व राष्ट्रों का एक राजनीतिक खिलौना बनकर रह गया है।

आतंकवाद और इस्लाम

आतंकवाद और इस्लाम बिल्कुल विपरीतार्थक शब्द हैं और ये दोनों एक जगह एकत्रित नहीं हो सकते, यहाँ तक कि इस्लाम का नाम लेकर कभी और कहीं कुछ मुसलमान भी आतंकवाद को बढ़ावा दें तो इस्लाम से उसका कोई सम्बन्ध हरगिज़ नहीं होगा। बल्कि यह इस्लाम धर्म की एक अवहेलना और शरीअ़त-ए-मुह़म्मदी में एक परिवर्तन होगा, जिसे दीन व शरीअ़त के बद्तरीन शोषण की संज्ञा दी जाएगी।

इस्लाम में भ्रष्टाचार की अनुमति नहीं

इस्लाम यातनाएं देने और भ्रष्टाचार फैलाने की अनुमति नहीं देता। यही बात दूसरे उन धर्मो के विषय में भी कही जा सकती है जिनकी वास्तविकता वह्य-ए-इलाही (ईश्वरीय प्रकाशना) पर आधारित है, चाहे उनके अनुयायियों ने अपने नबियों की शिक्षाओं को कितना ही विकृत कर दिया हो, यहां तक कि उनके

स्वार्थी धर्मनेता अपने धर्म का प्रयोग कितने ही ग़लत उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कर रहे हों, इसलिए कि दीन (धर्म) पूरे विश्व के पालनहार की निर्धारित की हुई वह जीवन-पद्धति और जीवन-व्यवस्था है जो बिना भेद-भाव के पूरी मानवता की सुख-समृद्धि के लिए है।

धर्म ईश्वर का बनाया हुआ विधान है और फ़ित्रत (प्रकृति) के अनुकूल है। प्रकृति अपनी वास्तविकता की दृष्टि से आतंकवादी नहीं, वरना इस धरती को इंसान के लिए उपयोगी नहीं बनाया जाता, न ही आसमान कवियों की कल्पना के विपरीत मेहरबान होता। दुनिया की जलवायु आदमी के लिए इसीलिए अनुकूल है कि वह विशेषकर उसी के लिए बनाई गई है। कुछ आयतों की ओर इशारा करेंगे जिन का उल्लेख पिछले पेजों में करते आए हैं। जैसे-

"अनुमति दी गई उन लोगों को जिनके विरुद्ध युद्ध किया जा रहा है, क्योंकि वे उत्पीड़त हैं, और अल्लाह को निश्चय ही उनकी सहायता की सामर्थ्य प्राप्त है। ये वे लोग हैं जो अपने घरों से अनुचित रूप से निकाल दिए गए केवल इसलिए कि वे कहते थे, हमारा पालनहार अल्लाह है।" -२२: २९-४०

"यह अल्लाह के रास्ते में युद्ध करने के बारे में सबसे पहली आयत है जो अवतरति हुई। इस आयत में सिर्फ़ अनुमति दी गई थी। बाद में सूरः बकरा की आयतें १९० से १९३ और ३१६ और २२४ अवतरित हुईं, जिनमें युद्ध का आदेश दिया गया है। इन आदेशों में केवल कुछ महीनों का अन्तराल है। हमारे शोध के अनुसार यह अनुमति ज़िलहिज्जा सन् १ हिजरी में अवतरित हुई और आदेश बद्र की लड़ाई से कुछ पूर्व रजब या शाबान २ हिजरी में अवतरित हुआ।"

आतंकवाद की गुंजाईश नहीं-

आतंकवाद एक बर्बरतापूर्ण कार्य है और इस्लाम की सभ्य व्यवस्था में इसकी कोई गुंजाईश नहीं। इस्लाम इंसान को केवल ईश्वर का भय दिलाता है, अतः वह किसी इंसान को इसकी अनुमति नहीं दे सकता कि वह लोगों को अपना भय दिलाए और उन्हें भयभीत करके अपने उद्देश्यों की पूर्ति करे। समाज में तनाव और संघर्ष इस्लाम को गवारा नहीं, वह हर प्रकार के संघर्ष और चपक़लिश

समाप्त करके एक शांतिपूर्ण वातावरण में व्यक्तियों के बीच प्रेम, सौहार्द, भाईचारा और सामूहिक कल्याण के कामों में सहयोग के अवसर पैदा करना चाहता है, ताकि ईश्वर के बन्दे एकाग्रता के साथ अपनी और जगत् की सृष्टि के उद्देश्यों की पूर्ति में बेरोक-टोक क्रियाशील रहें। दुनिया में सत्यनिष्ठा और ईश-परायणता के साथ सद्व्यवहार करके आख़िरत की सफ़लता का प्रबन्ध करें।

दूसरे धर्मो और उनके मानने वालों की सुरक्षा के विषय में यह बात भी याद रहे कि अपने अक़ीदे के मुताबिक़ इस्लाम दुनिया का बेहतरीन दीन है, मगर इसके बावजूद वह दूसरे धर्मो की सुरक्षा की ज़िम्मेदारी लेता है। हाँ, जो अपनी ज़िद और हठ की वजह से इस्लाम के प्रति अपना विद्वेष ख़त्म करना नहीं चाहते। और न उसके साथ किसी प्रकार के शान्तिपूर्ण समझौते पर तैयार होते हैं। यही वह लोग हैं, जो हर सच्चाई की राह में चट्टान बन कर खड़े होते रहे हैं और उनके भौतिक साधन और सारी पूंजी हमेशा सत्य को नीचा दिखाने की कोशिशों में काम आती रही है।

सिर्फ़ उन्हीं के ख़िलाफ़ इस्लाम लड़ने की इजाज़त देता है और केवल उस समय जब कि स्थिति में सुधार लाने के सारे रास्ते बन्द हो गये हों, पर अपने इन दुश्मनों के ख़िलाफ़ भी लड़ाई का एलान करने से पहले इस्लाम उन्हें विधिवत अल्टीमेटम देता है, ताकि संभव हो तो ख़ून खराबे की नौबत न आए। यह अल्टीमेटम इस्लाम की ओर से सुलह की आख़िरी कोशिश होती है, क्योंकि वह मार काट नहीं चाहता, बल्कि संसार को सुख शान्ति से परिपूर्ण देखना चाहता है।

क़ुर्आन में अल्लाह का इर्शाद है-

"और ऐ नबी, अगर दुश्मन सुलह और सलामती की ओर झुकें तो तुम भी इसके लिए तैयार हो जाओ और अल्लाह पर भरोसा रखो।"

जिहाद का आदेश, न्याय की शर्त के साथ

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

"और तुम अल्लाह के मार्ग में उन लोगों से लड़ो, जो तुमसे लड़ते

हैं, परन्तु ज़्यादती न करो कि अल्लाह ज़्यादती करने वालों को पसंद नहीं करता।" (सूरः बकरा- १६०)

इस आदेश में न्याय की शर्त और उसकी नसीहत के अलावा दो मौलिक बातें ये हैं कि लड़ना उन लोगों से है जो लड़ाई की शुरुआत कर रहे हैं और लड़ना भी केवल ईश्वरीय मार्ग में है, किसी देश की सत्ता हथियाने की लोलुपता, युद्ध में प्राप्त संपत्ति के लोभ और निजी प्रतिरोध की भावना से नहीं। इसलिए इसी परिप्रेक्ष्य में आगे की आयतें स्पष्ट करती हैं कि-

(१) अल्लाह और रसूल से अनुचित अगर अपनी युद्ध-प्रवृत्ति से "बाज़ आ जाएँ तो अल्लाह क्षमा करने और दया करने वाला है।"

(२) लड़ाई केवल उस समय तक जारी रखी जाए जब तक फ़ित्ना (अत्याचार) बाक़ी है और ख़ुदा और रसूल की अवज्ञा करने वाले ये अत्याचारी इस सीमा तक हतोत्साहित न हो जाएँ कि सत्य का बोलबाला हो जाए।"

(३) और "ज़ालिमों (अत्याचारियों) के अतिरिक्त किसी पर हाथ उठाना उचित नहीं।"

एक दूसरे अवसर पर सूरः अन्निसा की आयतें ७५ और ७६ में बताया गया है कि जब किसी स्थान पर "कमज़ोर मर्द, औरतें और बच्चे" अत्याचारों के विरुद्ध फ़रियाद करें तो उनकी दादरसी भी करनी चाहिए, मगर ईश्वर के आज्ञाकारी बन्दों का युद्ध "शैतान की राह" में होता है।

इसी प्रकार सूरः निसा ही की ८८ से ९१ तक की आयतों में दुष्टों और धोखेबाज़ों से युद्ध का निर्देश देते हुए व्याख्या की गई हैः

अनुवाद-

"अगर वे तुम से दूर हो जाएँ और लड़ाई से रुके रहें और तुम्हारी तरफ़ शान्ति एवं मित्रता का हाथ बढ़ाएँ तो अल्लाह ने तुम्हारे लिए उन पर हाथ उठाने की कोई राह नहीं रखी है।"

दुष्टों एवं दंगाइयों को शिक्षाप्रद पराजय देने के लिए हर प्रकार की आवश्यक "शक्ति" और साधनों को उपलब्ध करने का निर्देश देते हुए कुर्आन

शान्ति की इच्छा का जवाब शांति की चेष्टा से ही देने की ताकीद करता है।

अनुवाद-

"और हे नबी, अगर दुश्मन सुलह और सलामती की ओर तैयार हों तो तुम भी इसके लिए तैयार हो जाओ और अल्लाह पर भरोसा करो, निश्चय ही वही सब कुछ सुनने वाला और जानने वाला है।" (सूरः अन्फ़ाल-६१)

इन व्याख्याओं से यह सत्य बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि इस्लाम का मौलिक और स्थायी उद्देश्य शांति है, जबकि युद्ध एक अस्थायी और क्षणिक घटना है, एक सामयिक संकट है, जिसको दूर करने के लिए कुछ उचित शर्तों के साथ और निश्चित सीमाओं के अन्दर शक्ति का प्रयोग न केवल वैध बल्कि आवश्यक है।

तलवार के प्रयोग का तरीक़ा इस्लाम धर्म में

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने दुनिया को तलवार का सही प्रयोग बताया इस लिए कि अत्याचार को रोकने के लिए कभी-कभी हथियार उठाना एक ज़रुरत ही नहीं बल्कि अनिवार्य हो जाता है। जैसे कोई स्वतंत्रता छीनने का प्रयास करे या अ़िबादतगाहें ख़तरें में पड़ जाएँ या मानवता नष्ट होने लगे और इन्सानों (मुस्लिम या काफ़िर) की जान माल की कोई क़ीमत न रहे तो क्या ऐसे संकट के समय में केवल तमाशाई बन कर खड़ा देखता रहे या केवल अपनी अ़िबादत में लगा रहे। ऐसा नहीं बल्कि उस समय मानव को अत्याचार से निकाल कर अम्न व सुकून की राह की ओर लाना दायित्व बन जाता है, परन्तु बद्क़िस्मती से तलवार का प्रयोग अधिकतर लोगों ने ग़लत ढंग से किया है। इसलिए वह ग़लत समझ में आने लगी है।

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने मुनष्यों के स्वभाव को सामने रख कर जंग की जो अनुमति दी है आपको आगे की पंक्तियों से स्पष्ट हो जाएगा कि किस परिस्थिति में युद्ध करें और किस से करें, पूरे उपदेश ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने बताए हैं।

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का आदेश

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) जिन ग़ज़वात में स्वयं होते उनमें मुजाहिदीन को आदेश होता कि जब तक शत्रुओं की फ़ौज क़रीब न आ जाए कोई आगे न बढ़े और एक बार १० हिजरी में ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) को तीन सौ सवारों के साथ यमन भेजा तो रसूल (सल्ल०) ने उनसे फ़रमाया, "जब, तुम वहाँ पहुँचो तो जब तक तुम पर कोई ह़मला न करे तुम न लड़ना।" **(सीरतुन्नबी भाग १,६०५)**

इसी प्रकार ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की मिसाल, (उपमा) तो ऐसी है कि जिस प्रकार एक डाक्टर आपरेशन थियेटर में मरीज़ के फोड़े को सही करने के लिए ब्लेड का प्रयोग करता है ताकि पूरा शरीर स्वस्थ हो जाए ठीक उसी प्रकार रसूल (सन्देष्टा) का तलवार उठाना उसी डाक्टर के समान हैं (कि मानवता को क़ायम करने के लिए जो फोड़ा फुन्सी हो उसे ख़त्म करता है, और एक अच्छे समाज को क़ायम करता है।)

एक प्रसिद्ध अंग्रेज़ (Hobbes) का विचार है- "प्रकृति का पहला क़ानून यह है कि अम्न को ढूंढा जाए, उसकी राह पर चला जाए और जो प्रकृति का निचोड़ है वह यह कि हर प्रकार से अपनी रक्षा की जाए।"

इस प्रकार ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने युद्ध की आज्ञा देते हुए मुसलमानों को चेतावनी दी गई है कि तुमको युद्ध की अवस्था में भी ज़्यादती नहीं करनी है अर्थात हर वह कार्य और व्यवहार जो अनुचित, अनैतिक तथा न्याय के विरुद्ध हो।

जंग की नसीह़तें

अबूदाऊद में ह़ज़रत अनस (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) जिहाद में जाने वालों को नसीह़त करते कि तुम अल्लाह के नाम पर और रसूलुल्लाह की मिल्लत पर जिहाद के लिए जाओ लेकिन, किसी बूढ़े कमज़ोर, छोटे बच्चों या औ़रतों को क़त्ल (ह़त्या) न करना। **(मज़हरी)**

इसी प्रकार मुसलमानों को आदेश दिया जाता कि उन लोगों से युद्ध निषिद्ध है जो तुम्हारे धर्म में विघ्न (बाधा) न डालें, स्त्रियों, बालकों, बूढ़ों, आहतों पर हाथ न उठाना, खेतियों और पशुओं को निरर्थक हानि न पहुंचाना, अपनी शारीरिक शक्ति का वहीं प्रयोग करना जहां वह अनिवार्य हो और उस सीमा तक करना जितने की आवश्यकता हो। **(सीरतुन्नबी भाग-२)**

मुह़म्मद (सल्ल०) द्वारा सेना के उपदेश

अल्लाह से डरो, अपनी इच्छाओं का दमन करो, ईश्वर का नाम लेकर जाओ, और उसी के आज्ञानुसार जाओ, और उसी अल्लाह से सहायता मांगो, और ईश्वरीय सेना बन कर युद्ध करो, किसी प्रकार का धोखा न दो, विरोधी के माल की चोरी न करो, मृतक की लाश को नष्ट न करो, बूढ़ों बच्चों और स्त्रियों पर हाथ न उठाओ, न उन पर, जो युद्ध में सम्मिलित न हों, वृक्षों को अनावश्यक न काटो, पूजा स्थलों को न गिराओ।

तुम्हारा सरदार जिस स्थान पर तुम्हें नियुक्त कर दे वहां स्थिर रहो, जो श्रण मांगे उसे श्रण दो, आक्रमण करते हुए ईश्वर को याद रखो, बिना ज़रूरत मवेशियों को न मारो न उन्हें ज़ख़्मी करो, आग न लगाओ, खजूर या दूसरे फलदार वृक्षों को न काटो, फ़सलों को हानि न पहुंचाओ न उन्हें जलाओ।

इससे पता चलता है कि जब इस्लाम में युद्ध के नियम इतने मानवतापूर्ण न्याय जनक और शांतिदायक हैं तो उसके साधारण नियम कितने शान्तिपूर्ण होंगे। इस प्रकार आपको संपूर्ण जीवन उदारता, समता, सत्य और न्याय एवं पड़ोसियों के साथ सुव्यवहार से भरा पड़ा है आपने कभी दास, बालक व पशु तक को नहीं मारा न किसी को अपशब्द कहा, यहां तक कि युद्ध के बन्दियों का भी सम्मान करते अन्य जातियों के सरदारों तथा अन्य धर्मो के विद्धानों, प्रतिष्ठित जनों से सम्मान पूर्वक मिलते जहां अपने प्रिय अनुयाइयों के लिए दिन रात ईश्वर से प्रार्थना करते वहीं विरोधियों और शत्रुओं के लिए भी प्रार्थना करते आप का आदेश था कि "सृष्टि के प्राणियों पर दया करो ईश्वर से डरो।"

इस प्रकार हम महामान्य ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के कुछ उपदेशों को आपके सम्मुख रखते हैं जो आप के दयालुता और आचरण का स्पष्ट नमूना है कि शुद्धि बुद्धि इसके बाद निर्णय ले सकती है कि क्या वह लोहे की तलवार थी? नहीं, वह मुह़म्मद (सल्ल०) की अमूल्य सच्चरित्रता, क्षमा, भाव, शुद्ध आचार विचार उनके महान गुण और क़ियामत तक न मिटने वाली आदर्श शिक्षाओं की चमकती हुई तलवार थी जिसने असत्य और अत्याचार की गर्दन उड़ा दी और स्वस्थ समाज की स्थापना की।

मशहूर मिस्री इतिह़ासकार 'अह़मद अमीन' अपनी किताब ज़हरुल इस्लाम भाग एक में लिखते हैं।

> "अ़ब्बासी दौर में चूँकि इस्लामी हुकूमत में रवादारी का आ़म दौर-दौरा था और मुसलमानों के साथ यहूदियों और ईसाईयों के तिजारती, इ़ल्मी और जंगी सम्बन्ध बड़े पैमाने पर थे इसलिए ईसाई और यहूदी काफ़ी फल-फूल रहे थे। मुसलमानों के यहाँ ला वारिस का माल बैतुल माल में जमा होता है। लेकिन उन्होंने ज़िम्मियों के ला वारिसों का माल उन्हीं के अपने मज़हबों को लौटाने का हुक्म दे दिया था।
>
> इसी तरह दूसरे पहलुओं से भी मुसलमान ग़ैर मुस्लिमों के साथ रवादारी का भरपूर मुज़ाहिरा करते थे जिस के नतीजे में इस्लामी हुकूमत में हर तरफ़ यहूदियों और ईसाईयों की तअ़दाद काफ़ी हो गई थी।

इस्लामी जिहाद की अस्ल रूह-

इस्लामी लड़ाईयों की अस्ल रुह यह थी कि इन्सान अपने मालिक के बताए हुए रास्ते पर चले ताकि शाँति स्थापित हो। इस उद्देश्य की प्राप्ति में शान्तिपूर्ण साधनों से काम न चले, तो मजबूरन इस्लाम शाँति को भंग करने वालों के ख़िलाफ़ शक्ति का प्रयोग करता है। इस्लाम की ये लड़ाइयां किसी सेनापति का स्वार्थ और

उसकी विस्तारवादी दृष्टि की पैदावार नहीं थीं, न उनके पीछे दूसरों को ग़ुलाम बनाने का भाव काम कर रहा था, बल्कि ये लड़ाईयां सिर्फ़ ख़ुदा के लिए लड़ी गयीं और इनका मूल उद्देश्य ईश-प्रसन्नता की प्राप्ति थी।

बात केवल भावनाओं पर ही समाप्त नहीं हो जाती बल्कि इस्लान ने इन लड़ाइयों के लिए विधिवत उसूल और क़ानून भी बनाए। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने मुसलमानों को हिदायत देते हुए फ़रमाया,

"अल्लाह का नाम लेकर जाओ और उस की राह में जाकर लड़ो। जो ख़ुदा से बग़ावत करे, उससे लड़ो पर वचन निभाना, शवों के नाक-कान न काटना और न किसी बच्चे को क़त्ल करना"।

इसी तरह ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने, उन लोगों के सिवा जिन्होंने मुसलमानों की सेना के ख़िलाफ़ लड़ाई में हिस्सा लिया हो, अम्न पसंद लोगों पर हथियार उठाने की मनाही की है। माल व अस्बाब तबाह व बर्बाद करने या किसी की इ़ज़्ज़त पर हाथ डालने से भी मुसलमानों को रोक दिया और उन्हें आदेश दिया कि वे किसी बुराई या बिगाड़ को बढ़ावा देने की वजह न बनें, क्योंकि-

"और अल्लाह तआ़ला बिगाड़ पैदा करने वालों को पसंद नहीं करता।"

(क़ुर्आन ६४ : ५)

भाग-6

यूरोप का जंगी जुनून और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की जंगे तुलनात्मक दृष्टि में

वर्तमान सभ्यता का अपराध

दिखावे और बनावट से सजी वर्तमान सभ्यता अपने वास्तविक उद्देश्य और रीति-नीति में घोर अस्पष्टता का शिकार है। यह न तो अपने वास्तविक इरादों के ज़ाहिर करने में बे-बाक है और न इसकी रीति-नीति ही स्पष्ट है इसकी विशेषता यह है, तन उजला पर मन काला।

ट्यूनीशिया, अलजीरिया, और मोरक्को में इस सभ्यता के सुपुत्रों ने हज़ारों व्यक्तियों को मात्र इस अपराध से मौत के घाट उतार दिया कि वे आज़ादी चाहते थे और अपने लिए इन्सानी सम्मान के तलबगार थे। अपने वतन पर दूसरों के क़ब्ज़े के बजाए अपनी सरकार चाहते थे, अपनी भाषा में बातें करना चाहते थे और इच्छा रखते थे कि संसार की दूसरी आज़ाद क़ौमों की तरह उनका वतन भी आज़ाद हो, जहां वे वाह्य हस्तक्षेप से आज़ाद रह कर अपनी इच्छा से अपने दीन-धर्म और अक़ीदे के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ार सकें और दूसरों से जिस प्रकार चाहें, अपने आर्थिक और राजनीतिक संबंध बनाएँ।

ख़ूनी हाथ-

वर्तमान सभ्यता के अलमबरदारों ने इन बेगुनाहों के ख़ून से बिना किसी संकोच के अपने हाथ रंगे, उन्हें सड़ने के लिए गन्दे और बद्बूदार अज़ाब घरों में बन्द रखा, उनकी इज़्ज़त लूटी उनकी औरतों को ख़राब किया। और आपस में शर्तें लगा-लगा कर गर्भवती औरतों के पेट चाक किए। बीसवीं सदी की इस दोग़ली सभ्यता के ध्वजावाहकों ने इन सब घिनौने अपराधों को किया, पर हर जगह एलान यही किया कि वे दुनिया को आज़ादी, भाईचारा और बराबरी का पाठ पढ़ाने निकले हैं। ये लोग अपने इन घिनौने और भयानक अपराधों को रोशनी और तरक़्क़ी का नाम देते हैं।

नई सभ्यता वाले अपने होटलों और विहार-स्थलों पर केवल गोरों के लिए

अनुमति देते हैं और 'कालों और कुत्तों को अन्दर आने की इजाज़त नहीं होती है' चार्ट लटकाते हैं और जब सभ्य कोई भीड़ रंगदार नस्ल के किसी व्यक्ति को अपनी बर्बरता का शिकार बनाने के बाद उसे सड़क पर अपने जूतों से उस समय तक गेंद की तरह उछालती फिरती है, जब तक कि वे उसके प्राण न ले लें।

रोचक बात तो यह है कि इस सारे बर्बरतापूर्ण हंगामों को पुलिस ख़ामोश तमाशाई की तरह खड़ी देखती रहती है और मज़लूम को क्रुद्ध भीड़ से बचाने की कोई आवश्यकता नहीं समझती, हालांकि वह भाषा, धर्म और मानवता की दृष्टि से उन्हीं जैसा और उन्हीं के देश का रहने वाला होता है। वर्तमान सभ्यता के सुपुत्रों का दामन इन तमाम घिनौने अपराधों और कुकर्मो से कलंकित है, पर इसके बाद भी उनकी सभ्यता, सज्जनता और प्रगति पर कोई आंच नहीं आती और न उनके प्रगतिशील और सभ्य होने पर किसी को कोई आपत्ति होती है-

हम आह भी करते हैं, तो हो जाते हैं बद्नाम।
वह क़त्ल भी करते हैं, तो चर्चा नहीं होती।।

एक ओर सभ्यता के इन सुपुत्रों का यह कारनामा है और दूसरी ओर इस्लामी इतिहास की यह रोशन मिसाल।

इस्लामी सभ्यता की मिसाल

समय के ख़लीफ़ा हज़रत उमर (रज़ि०) को जब एक गुलाम ने क़त्ल की धमकी दी, तो शक्ति और सत्ता पाने के बावजूद आप ने उस को कुछ न कहा, उसे न क़ैद किया गया, न देश- निकाला दिया गया, और न यह कह कर उसको जल्लाद के हवाले किया गया कि यह अर्द्ध-सभ्य इंसान है, जो अपनी आँखों से हक़ और सत्य का अवलोकन करने के बाद भी मात्र हठ और पक्षपात के आधार पर असत्य और झूठ पर चलने का आग्रह कर रहा है। इस धमकी के जवाब में हज़रत उमर (रज़ि०) ने बस इतना कहा,

'इस गुलाम ने मुझे क़त्ल करने की धमकी दी है, और इसके बाद उससे कोई पूछताछ न की और न उसकी आज़ादी पर कोई पाबंदी लगायी। उस पर

ख़लीफ़ा के क़त्ल का आरोप केवल उस समय लगाया गया, जबकि वह व्यवहारतः इस घिनौने कार्य को पूरा कर चुका था।

अंग्रेज़ों की नीति-

अंग्रेज़ों ने अफ़्रीका के कालों के साथ जो बर्ताव किया और ब्रिटिश अख़बारों के अनुसार, जिस तरह उनका जानवरों की तरह शिकार खेला और उन्हें अपने मूल मानव अधिकारों से महरूम किया, वह अंग्रेज़ की न्याय-प्रियता और वर्तमान सभ्यता का उत्कर्ष-बिन्दु है।

इस्लाम में इन्सानों के शिकार की अनुमति नहीं

यहाँ पर हमें ब्रिटिश न्याय और वर्तमान सभ्यता अपने वास्तविक स्वरूप में दिखाई पड़ती है और यही वह 'श्रेष्ठ' और 'शानदार' नियम हैं, जिनके कारण पश्चिमवासी विश्व-राष्ट्रों पर अपने प्रभुत्व के दावेदार हैं, और इस्लाम को इस अपराध में कि उसने जिहाद और दुश्मन के क़ैदियों को बराबर के व्यवहार के आधार पर गुलामी को वैध समझे बिना सामयिक रूप से गुलाम बनाने की इजाज़त दे दी, निम्न स्तरीय, बर्बरतापूर्ण और प्रतिक्रियावाद घोषित करते हैं। उनके विचार से इस्लाम प्रतिक्रियावादी धर्म है, क्योंकि उसने जानवरों की तरह आदमियों के शिकार की अनुमति नहीं दी और न काली चमड़ी की वजह से किसी को क़त्ल व ग़ारतगरी के हवाले किया। यही नहीं, बल्कि उसकी प्रतिक्रियावादिता का तो यह हाल था कि उसने स्पष्ट शब्दों में एलान कर दिया।

"सुनो और आज्ञापालन करो', भले ही तुम्हारा शासक कोई ऐसा हब्शी हो, जिसका सर मुनक्का जैसा हो।" **(सीरतुन्नबी भाग-२)**

क़ैदी औरतें और इस्लाम

दूसरी क़ौमों में क़ैदी औरतों से बहुत बुरा व्यवहार किया जाता था। क़ैद के बाद वे वैश्या-वृत्ति और बद्कारी का घिनौना जीवन बिताने के अलावह और कोई रास्ता न पाती थीं, क्योंकि समाज में उन्हें कोई आदर प्राप्त न था, न उनके पीछे

कोई सत्ता-शक्ति ही होती थी, जो उनकी इ़ज़्ज़त व आबरू की रक्षा करती। उनके मालिक उनके रक्षक बन सकते थे, पर उनके लिए तो वे आमदनी का साधन थीं।

अतः कभी-कभी ख़ुद मालिक अपनी लौंडियों को वैश्या बनने और पेशा कराने पर मजबूर करते थे पर जब 'प्रतिक्रियावाद और उन्नति से अपरिचित' इस्लाम का युग आया, तो उसने बद्-कारी और बे-हयाई के इस साधन में भी अन्त कर दिया और यह क़ानून बना दिया कि लौंडियों से सिर्फ़ वही लोग फ़ायदा उठा सकते हैं, जो उनके क़ानूनी मालिक हैं। उनके मरण-पोषण का भार भी उसने मालिकों पर डाल दिया, ताकि वे किसी आर्थिक विवशता के कारण किसी प्रकार के भटकाव की शिकार न होने पावें और अपने मालिकों के संरक्षण में पाक-साफ़ जीवन बिता सकें।

औ़रतों के आज़ादी की ह़क़ीक़त-

यूरोप की 'भावुक' अन्तरात्मा इस 'असभ्य, क्रूर बर्बरता' को कुछ नहीं कहती, इस्लाम के इस विधान को ही वह 'असभ्य-काल की यादगार' क़रार देती है। इसीलिए कि इस्लाम बद्कारी और वैश्यावृत्ति को अवैध घोषित करता है, और उसको क़ानूनी संरक्षण भी नहीं देता है।

यह लानत अब दुनिया पर मुसल्लत है, यद्यपि इसके नाम नये हैं और इस पर तरह-तरह के मनमोहक रंगों वाले पर्दे पड़े हुए हैं। औ़रतों की आज़ादी के तमाम दावों के बावजूद अब भी औ़रत जुल्म का शिकार है और मर्दो के लिए मन बहलाने का सामान बनी हुई हैं। वर्तमान युग की बनी-ठनी वैश्याओं और पेशावर औ़रतों को क्या किसी भी दृष्टि से वास्तविक अर्थो में आज़ाद औरत कहा जा सकता है? क्या आज की औरत को सच्ची आज़ादी मिली हुई है? इस्लाम ने लौंडियों और मालिकों के दर्मियान जिन इंसानी और रूहानी रिश्तों की जड़ें मज़बूत की थीं, उनकी पावनता और सज्जनता और वर्तमान युग की छत्र-छाया में होने वाली वैश्यावृत्ति से इस घिनौने कारोबार में क्या संबंध है?

(इस्लाम सन्देहों के घेरे में)

वैश्यावृत्ति और वर्तमान सभ्यता-

इस्लाम अपने दृष्टिकोण और चिन्तन में बिल्कुल स्पष्ट है, पर वर्तमान सभ्यता इस विशेषता से महरूम और परेशान ख़याली और बिखराव का शिकार है। इसकी एक मिसाल वैश्यावृत्ति और देह व्यापार है। यही सभ्यता इसको गुलामी के दौर की एक यादगार मानती है, पर इसके बावजूद यह कहकर इसको बाक़ी रखने पर आग्रह करती है कि यह एक अनिवार्य सामाज़िक ज़रुरत है।

अब तनिक इस अनिवार्य 'सामाजिक ज़रुरत' पर भी एक निगाह डालते चलिए, जिसके कारण यूरोप वैश्यावृत्ति की इस लानत को बाक़ी रखने पर आग्रह कर रहा है।

स्वार्थपरता-

वर्तमान समय में वैश्यावृत्ति की बड़ी वजह वर्तमान सभ्यता की स्वार्थपरता है, जिसके कारण वर्तमान यूरोप का कोई सभ्य व्यक्ति अपने सिवा किसी और का माली बोझ उठाने को तैयार नहीं है। चाहे वह उसकी बीवी हो या बच्चे। वह इ़ज़्ज़त चाहता है, पर किसी क़िस्म की ज़िम्मेदारी अपने सर लेने के लिए तैयार नहीं। अतः अपनी वासना-तृष्टि के लिए उसे औ़रत की खोज होती है, तो मात्र उसके देह की।

वैश्यावृत्ति का मूल कारण-

यह है 'अनिवार्य सामाजिक आवश्यकता,' जिसको बुनियाद बना कर वर्तमान समय के यह रोशन ख़याल लोग औ़रत की इस गुलामी को जायज़ साबित करने की कोशिश करते हैं, पर यह केवल नज़र का धोखा है, क्योंकि वैश्यावृत्ति का मूल कारण आज के इंसान की वासना है। इसलिए जब तक उसकी इंसानियत की सतह ऊँची न होगी, वैश्यावृत्ति की इस लानत की रोकथाम भी असंभव है।

यहाँ यह बात भी स्पष्ट रहे कि पश्चिम की जिन 'सभ्य' सरकारों ने बाद के समयों में वैश्यावृत्ति पर पाबन्दी लगायी, उनका मूल प्रेरक वैश्याओं के नारीत्व या मानवता के आदर का भाव नहीं था और न यह कार्य उनके किसी नैतिक,

मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक विकास का सूचक था, कि जिसके कारण उनके नज़दीक वैश्यावृत्ति कोई अप्रिय और घिनौनी चीज़ बन गयी हो, बल्कि इसका मूल कारण यह था कि बनी- संवरी सोसाइटी गर्ल्ज़ के कार्य-क्षेत्र में उतर आने के बाद इन वैश्याओं की कोई विशेष सामाजिक आवश्यकता बाक़ी नहीं रही थी और न बद्कारी के अपराध या पाप होने का विचार ही बाक़ी रह गया था, पर इसके बावजूद इन लोगों की हठधर्मी का हाल यह है कि वे तेरह सदी पहले इस्लाम की लौंडियों के बारे में नीति को आड़ बनाकर अब तक उस पर व्यंग्य करते रहते हैं, हालांकि इस्लाम ने लौंडियो की समस्या का हल अस्थायी रूप (वक़्ती तौर) से अपनाया था और इसको अपनाते समय स्पष्ट कर दिया था कि इसका मंशा इस स्थिति को हमेशा बाक़ी रखना कदापि नहीं है। पर इसके होते हुए भी ये लोग इस्लाम को गुलामी का ताना देते हैं और यह भूल जाते हैं कि वह उनकी बीसवीं सदी की सभ्यता से, जिसे वे अपने आप मानवता का चरमोत्कर्ष, अपरिवर्तनीय और शाश्वत समझते हैं, कहीं ज़्यादा पाकीज़ा, स्वभावगत और पूर्णता प्राप्त धर्म है।

सोसाइटी गर्ल्ज़-

वर्तमान पश्चिमी समाज में भोग-विलास की आदी सोसाइटी गर्ल्ज़ जिस निर्लज्जता और 'आज़ादी' से अपने जिस्मों को दूसरों के सुपुर्द करती दीख पड़ती हैं, उससे हमें धोखा नहीं खाना चाहिए। यह आज़ादी नहीं है, बल्कि गुलामी की वह क़िस्म हैं, जिसमें गुलाम अपनी स्वेच्छा से गुलामी का फंदा अपने गले में डाल लेते हैं।

इस तरह के कुछ गुलाम-स्वभाव व्यक्तियों का वजूद और उनकी अपनी आज़ाद इंसानी हैसियत से यूँ अलगाव न तो इस्लाम के नज़दीक उनको हमेशा की गुलामी की लानत में फंसाए रखने का औचित्य जुटा पाता है और न दुनिया का कोई और धर्म या जीवन-दर्शन।

वर्तमान सभ्यता का कारनामा

इस स्थिति से उस जीवन-व्यवस्था का विनाशकारी होना स्पष्ट हो जाता है, जो एक ऐसा आर्थिक, राजनीतिक, वैचारिक और आध्यात्मिक वातावरण पैदा कर

देता है, जिसमें लोग इतने मजबूर होते हैं कि वे आज़ादी पर गुलामी को प्रमुखता देने लगते हैं। वास्तव में यूरोपीय सभ्यता अब तक जो कारनामा अंजाम दे सकी है।

यह है संक्षेप में वर्तमान गुलामी की दास्तान। इस का इतिहास मर्दो, औरतों और समस्त राष्ट्रों और वर्गो की गुलामी का इतिहास समझा जा सकता है, जिसके बाद एक लंबी मुद्दत तक बिना किसी विशेष सामाजिक ज़रुरत या विवशता के, इस को बाक़ी रखा गया है। यूरोप में इस प्रकार की परिस्थितियों का सामना नहीं था, जिन से तेरह सदी पहले इस्लाम को वास्ता पेश आया था और उसने विवश होकर गुलामी की एक शक्ल को बाक़ी रखा था। इसके विपरीत यूरोप में गुलामी का बराबर पाया जाना उसकी सभ्यता के घिनौने और अमानवीय स्वभाव का पता देता था, न कि उस की किसी प्रमुख आवश्यकता या मजबूरी का।

कम्यूनिस्ट देश

अब हम कुछ शब्द वर्तमान कम्यूनिस्ट देशों के बारे में भी कहना चाहते हैं। इन देशों के लोगों पर भी गुलामी मुसल्लत है और वह कम्युनिज़्म के ज़बरदस्त दैत्य के पावों तले कराह रहे हैं। इन देशों में बस एक ही आक़ा होता है और वह है सरकार। बाक़ी लोगों का काम बिना किसी आपत्ति के उनका आज्ञापालन है। हद यह है कि उसके नागरिकों को अपने पेशे और नौकरी के चुनाव की आज़ादी तक प्राप्त नहीं है, क्योंकि वे गुलाम हैं और गुलाम की अपनी कोई इच्छा नहीं होती।

इस दृष्टि से इन कम्युनिस्ट देशों और पूंजीवादी देशों में कोई अन्तर नहीं है, एक में सरकार सत्ता और शक्ति का स्रोत होता है और दूसरे में बड़े-बड़े पूंजीपति सत्ता और शक्ति पर क़ब्ज़ा किए होते हैं और मज़दूर उनकी दया-कृपा पर परिश्रम में लगे होते हैं।

पाठकों ने यह हक़ीक़त भी मन में बिठा ली होगी कि नामों के भिन्न होने के बावजूद कम्यूनिज़्म और पूंजीवाद, वास्तव में पुराने ज़माने के गुलामी ही की

नयी शक्लें हैं, जो सभ्यता और सामाजिक प्रगति के पर्दे में पाँव जमाए हुए हैं, इस्लाम के बताए हुए 'सीधे रास्ते' को छोड़ कर मानवता ने तरक़्क़ी की या वह क्रमागत पतन और नैतिक गिरावट का शिकार होती चली जा रही है? इसका अनुमान भी अब पाठक ख़ुद कर सकते हैं कि आज भी दुनिया इस्लाम की रहनुमाई की कितनी मुहताज है।

इन्क़िलाबी आइडियालोजी

"इन्क़िलाब" की राह में मार्क्सवादी हर प्रकार के हिंसा को जाइज़ ही नहीं समझते, बल्कि उसे इन्क़िलाब के लिए आवश्यक समझते रहे और यह दावा भी करते रहे कि हिंसा हर ज़माने में हर इन्क़िलाबी तहरीक की ख़ुसूसियत रहा है। फिर इस "क्रान्तिकारी हिंसा" को कामियाब बनाने के लिए उसे पूरी शिद्दत व बेरहमी के साथ बराबर इस्तेमाल करते रहे।

डाक्टर नदीम बैतार अपनी किताब "इन्क़िलाबी आइडियालोजी" में लिखते हैं कि "मार्क्सवादी इन्क़िलाबियों के फ़ल्सफ़े की बुनियाद इस पर है कि इन्क़िलाबी तर्बियत के लिए हिंसा ज़रुरी है। आन्दोलन हिंसा पर इसलिए निर्भर है कि अवाम को ख़्वाबे ग़फ़लत से बेदार और मुतहर्रिक करे और हमेशा तहरीक के लिए चाक़ व चौबन्द रहने पर उभारता रहे और हिंसा का तात्पर्य यह है कि जनता के सामने इन्किलाब निरन्तर पेश किया जाता रहे ताकि अवाम ग़ाफ़िल न हों और इन्क़िलाब उनके दिल व दिमाग़ से ओझल न होने पाए। दूसरे शब्दों में अवाम को यह न समझने दिया जाए कि इन्क़िलाब एक रिवायती चीज़ बन चुका है क्योंकि इस का मतलब इन्क़िलाब की मौत होगा।"

(इस्लाम मुसलमान और ग़ैर मुस्लिम पेज नं० १२७)

दहशतगर्दी-

अतः हुकूमत पर सत्ता से पहले आमतौर पर हिंसा का रूप व्यक्तिगत होता है, जिस का मक़सद ख़ौफ़ व दहशत पैदा करना और मौजूदा हुकूमत को हिलाना होता है ताकि अगले क़दम के तौर पर ख़ुद हुकूमत पर क़ब्ज़ा किया

जा सके।

फ़िर हुकूमत पर क़ब्ज़े के बाद व्यक्तिगत हिंसा सामूहिक हिंसा की शक्ल अख़्तियार कर लेता है जिस का मक़्सद सत्ता की जड़ें मज़बूत करना होता है और उस के लिए "दुश्मन" को मिटा देना ज़रुरी समझा जाता है ताकि समाज नई व्यवस्था के अनुरूप हो जाए।

(इस्लाम सुर्ख़ यलग़ार के सामने- शेख़ मुहम्मद ग़ज़ाली)

ज़ुल्म व सितम का राज

जिन्होंने ईसाई इतिहास का अध्यन किया है वह ख़ूब जानते होंगे कि १३२५ ई० में नेक़ियाह के मशहूर कान्फ़्रेंस में मिस्री ईसाई आ़लिम आरयूस के साथ क्या सुलूक किया गया। आरयूस ह़ज़रत ईसा (अ़लै०) के ईश्त्व के क़ायल नहीं थे। अतः कान्फ़्रेंस में इख़्तिलाफ़ करने वाले सारे मेम्बरों को निकाल कर यह फ़ैसला किया कि आरयूस को फ़ांसी दे दी जाए उस की किताबें जला दी जायें और उन का पढ़ना रखना जुर्म क़रार दे दिया जाए उस के ह़ामियों को नौकरियों से निकाल कर जिलावतन (देश निकाला) कर दिया जाए और जिस के पास भी आरयूस की कोई किताब मिले या उस का समर्थन करता हो उसे फ़ांसी दे दी जाए।

अतः इस मुसल्सल ज़ुल्म व सितम के नतीजे में ईसाईयों में से तौह़ीद के मानने वाले लापता हो गये और उन का कोई नाम व निशान बाक़ी नहीं रहा। ईसाइयों के दर्मियान इन्जील के बाज़ उसूलों और कथनों की व्याख्या के बारे में मतभेद, जैसे- यह कि रुहुल्-कुदुस (पवित्र आत्मा) बाप-बेटे दोनों का ह़िस्सा हैं या सिर्फ़ बेटे का। रोटी और शराब जिस्म का ह़िस्सा मानते हैं या नहीं, मसीह़ (अ़लै०) इन्सानी व ईश्वरीय दोनों प्रकृति रखते हैं या नहीं आदि। घोर हिंसा का सबब बन जाता था जिस में हज़ारों जानें जाती थीं और एक गिरोह दूसरे गिरोह को सख़्त तकलीफें पहुँचाता था।

लूथर के ख़ूनी हाथ

लूथर ने जब योरोप में प्रोस्टेंट पंथ की बुनियाद रखी तो कैथोलिक कलीसा

ने पूरी ताक़त से इस की मुख़ालिफ़त की और बेमिसाल ख़ूँरेज़ी हुई पेरिस का क़त्लेआ़म तो सबसे ज़्यादा मशहूर हुआ। जब २४ अगस्त १५७२ ई० में कैथोलिकों ने प्रोस्टेंटो को दअ़वत दी कि आपसी बातचीत से काम किया जाए।

फिर जब प्रोस्टेंट आ गये तो रात के अंधेरे में मेज़बान सोते हुए मेहमानों पर वह़शी दरिन्दों की तरह़ टूट पड़े। सुबह़ हुई तो पेरिस की सड़कें प्रोस्टेंटो के ख़ून से लालाज़ार चार्ल्स वहम को इस "महान कारनामा" पर ख़ुद पोप ने ज़बरदस्त मुबारकबाद दी और कैथोलिक बादशाहों और रहनुमाओं की ओर से इस पर प्रशंसा के गुणगान किये।

फिर जब प्रोस्टेंट ग़ालिब आए तो उन्होंने कैथोलिकों के साथ वह़शत व बर्बरियत की वैसी ही दास्तानें दोहराईं और लूथर ने अपने समर्थकों से साफ़ साफ़ कहा कि तुम में से जो ख़ुलेआ़म या पर्दे में जितना हिंसा कर सके करके कैथोलिकों को मार काट डाले।

(मसीह़ियत, डाक्टर अह़मद शिब्ली ५१-५२ और इन्क़िलाबी नज़रिया, डाक्टर नदीम बैतार ७०)

फिर कोई तअ़ज्जुब नहीं कि योरोप की यह धार्मिक जंगें इन्तिहाई घिनौना रूप अख़्तियार करतीं। कहा जाता है कि केवल जर्मनी में ही इन जंगों के नतीजे में अधिकतर जनता हलाक हो गई और उस के अधिकतर शहर राख का ढ़ेर बन गये।

बीसवीं सदी की सलीबी जंगें

रहीं सलीबी जंगें तो बीसवीं सदी की वह़शियाना तह़रीकें, जैसे 'नाज़ीइज़्म' (नाजीवाद) और 'कम्यूनिज़्म' (साम्यवाद) भी उन की दरिन्दग़ी के आगे कोई ह़ैसियत नहीं रखती उन में ख़ुद ईसाइयों ने अपने उन ईसाई भाईयों को जिन्हें वह गुमराह समझते थे सख़्त जोरो सितम का निशाना बनाया और उन की लाशों पर हल चलवा कर उन्हें खेतों की खाद तक बना डाला।

"अच्छे मज़हबी रहनुमा हमेशा आग पर तेल डालने के लिए तैयार रहते थे फ़ौजियों को अपनी सारी संगदिली के बावजूद कभी-कभी रह़म आ जाता था लेकिन यह मज़हबी रहनुमा रह़मदिली व हमदर्दी को मज़हब से ग़द्दारी समझते

थे और दिन रात ऐसी ईसाई दुनिया तैयार करने में रहते थे जिस में केवल ईसाई रहते हों वह दूसरे लोगों को किसी तरह का कोई हक़ देने को तैयार नहीं थे।

अतः **तलवार के ज़रिए या तो ईसाई मज़हब को तस्लीम करने पर मजबूर किया जाता वरना मौत के घाट उतार दिया जाता था।** ईसाईयों ने अपने मज़हब के प्रचार के लिए मिशनरी सरगर्मियों का काम बहुत बाद में शुरु किया।

ईसाइयत की ख़ूँरेज़ आँधी

तफ़्तीशी अदालतों की कार्रवाइयाँ आज भी रोंगटे खड़े कर देने के लिए काफ़ी हैं १४८१ ई० से १८०८ ई० तक इन अदालतों ने लगभग ३ लाख ४० हज़ार लोगों को सज़ाएँ दीं, जिस में दो लाख ज़िन्दा जला दिये गये और लगभग डेढ़ करोड़ को क़त्ल किया।

ब्रीफ़ोल्ट अपनी किताब **"इस्लाम व ईसाइयत साइंस व तहज़ीब के साथ"** में लिखा है "कि इतिहासकारों का अन्दाज़ा है योरोप में अपने धर्म के दौर में ईसाइयत ने **सत्तर लाख से डेढ़ करोड़ तक इन्सानों को क़त्ल किया,** जबकि इस दौर में योरोप की आबादी आज से बहुत कम थी, इंग्लैंड की कैथोलिक महारानी "मैरी" ने एक बार यह एलान किया था कि-

"चूंकि काफ़िरों की रूहें जहन्नम में हमेशा जलेंगी इसलिए उन्हें इन्तिक़ामे इलाही (ईश-प्रतिशोध) का अनुसरण करते हुए ज़मीन पर भी जला डालने से बेहतर कोई बात नहीं हो सकती।"

(इस्लाम मुसलमान और ग़ैर मुस्लिम पेज नं० १३०)

रुस की तरक़्क़ी के नाम पर ज़ुल्म के पहाड़

आइये सब से पहले हम आप को रूस की ओर ले चलते हैं जो इन्सानी समानता, आज़ादी और विकास एवं आधुनिकता (रौशनख़याली) का ढिंढ़ोरा सारी दुनिया में पीट रहा था। हम आप को दिखायेंगे कि मुसलमानों को यहाँ जिस

वहशियाना ज़ुल्म व सितम का निशाना बनाया गया उस के ज़िक्र से भी इन्सानियत का सर शर्म से झुक जाता है।

पिछली चार सदियों में ज़ार की हुकूमत इस्लाम और मुसलमानों की कट्टर दुश्मन समझी जाती थीं उस ने सलीबी तअ़स्सुब (संकीर्णता) को अति घिनौना रंग देकर मुसलमानों का जीना दूभर कर दिया था। हुकूमत के समर्थन एवं सहयोग से ईसाई मिशनरी और सरकारी कर्मचारी इस्लाम के नामलेवों पर हर मुम्किन ज़ुल्म ढ़ाते रहते थे, लेकिन कम्यूनिस्ट रूस ने इस्लाम और मुसलमानों के शोषण एवं जड़ से काट देने की जो कोशिशें कीं उन का कोई जवाब रुस के पास भी नहीं था।

यहाँ हम जनाब 'यूसुफ़ वली शाह' और 'अलूकैरी' की प्रसिद्ध किताब "सोवियत रूस में मुस्लिम क़िरम की त्रासदी" से एक उद्धरण पेश करेंगे जिस में रूस के दर्दनाक स्थिति का नक़्शा खींचा गया है। **(अल्लामा यूसुफ़ कर्ज़ावी)**

सोलहवीं सदी

"सोलहवीं सदी के प्रारम्भ में क़ाज़ान के अस्क़फ़ हीरहामान ने ज़ारटियूडोर को लानत मलामत से भरपूर एक ख़त लिखा जिस में अति उत्तेजक एवं प्रभावशाली ढंग से ईसाई मिश्नरियों की नाकामी नये ईसाईयों की फिर अपने अस्ल दीन में वापसी और उन मसाजिद में अपने मज़हबी कामों की अदायगी (जिन्हें उन्होंने नए सिरे से बना लिया था) का ज़िक्र किया गया था।

अस्क़फ़ की इस रिपोर्ट की बुनियाद पर ज़ार ने उन मुसलमानों के ख़िलाफ़ कठोर क़दम उठाए।

"उन्हें उन की ज़ायदाद से महरूम कर दिया गया और एक ऐसे मुहल्ले में रहने पर मजबूर किया जो शहर क़ाज़ान में ख़ासतौर पर उन्हीं के लिए बनाया गया था जिस का निगरां एक रूसी सरदार को बनाया था, और मुसलमान नौजवानों को मजबूर किया गया कि वह रूसी लड़कियों और औरतों से शादी करें, जो इस की मुख़ालिफ़त करता उसे जेल में डाल दिया जाता, उस के हाथ पैर बांध कर कोड़े बरसाए जाते और तरह-तरह से तकलीफ़ें पहुँचाई जातीं, फिर गोया

इतनी सज़ा काफ़ी नहीं थी कि इस से ज़ार के सज़ा की आग ठंडी हो सके अतः उस ने और हुक्म दिया कि सदियों पुरानी मस्जिदों को ढ़ा दिया जाए और मुसलमानों को उन के शहर से भगा दिया जाए।"

" लेकिन बालशेविकों ने अपने ख़ुफ़िया मन्सूबों को इन्तिहाई महारत के साथ परद-ए-राज़ में रखा और दीन के बारे में अपने दृष्टिकोण को लोगों से उस वक़्त तक छुपाते रहे जब तक सत्ता उन के हाथों में नहीं आ गयी और उन के पैर मज़बूती के साथ जम नहीं गये जब बाहरी दुनिया की तरफ़ से पूरी तरह इत्मिनान हो गया तो कम्यूनिस्ट पार्टी ने रूस के विभिन्न इलाक़ों में अपने अति संगठित दस्ते भेजना शुरु कर दिये। इन इल्हादी (अधर्मी) दस्तों ने दीन का नाम व निशान मिटा देने के लिए हर ज़रिया अपनाया, **क़ाज़ियों, मुफ़्तियों, मुदर्रिसीन, वाइज़ीन, मुक़र्ररीन आइम्मा मसाजिद व मोअ़ज़्ज़ज़ उलमा को बड़े पैमाने पर क़त्ल किया गया। मदरसों, मसाजिदों और दीनी मराकिज़ पर जबरन क़ब्ज़ा कर लिया गया। कुर्म और दूसरे मुस्लिम इलाक़ों में शरई अ़दालतें और दारुल् इफ़्ता ख़त्म कर दिये गये। उस के बाद मस्जिदों और मदरसों को अस्तबल, गोदामों, और सिनेमाहालों में तब्दील कर दिया गया जिस की गुंजाईश किसी भी क़ानून में नहीं मिलती। यही नहीं बल्कि क़ुर्आन करीम के नुस्ख़े और दीनी किताबें जमा करके उस में आग लगा दी गई।** कुरूने ऊला के वह़शियाना दौर में इस अख़्लाक़ी ज़वाल की कोई मिसाल नहीं मिलती। केवल उन ऐतिहासिक मस्जिदों और मदरसों को बाक़ी रखा गया जिन्हें विदेशी दुनिया की आँखों में धूल झोंकने के लिए यह मज़हब-ए-दुश्मन आसारे क़दीमा (भग्नावशेष) के तौर पर दिखाना चाहते थे।"

(सोवियत रूस में मुस्लिम-किरम की त्रसदी, "अलकैरी")

किरम और रूस के दूसरे मुस्लिम इलाक़े अज़ान की आवाज़ को तरस गये क्योंकि जान के ख़त्रे की वजह से कोई शख़्स दीनी शआ़यर (धार्मिक कृत्य) की अदायगी की ह़िम्मत नहीं कर सकता था।

किरम में मज़हब दुश्मनी की मुहिम १९३८ ई० में अपने नुक़्ते उ़रूज को पहुँच चुकी थीं यह वह दौर था जब कुर्आने करीम के नुस्ख़ों और दीनी किताबों के जलाए जाने, मदरसों और मस्जिदों के कम्यूनिस्ट इदारों में तब्दील किये जाने और उलमा को क़त्ल कर देने के बाद दीन का कोई नाम व निशान बाक़ी नहीं रह गया था।

१९३८ ई० ही की रात को 'जुलू' में उलमा के आख़िरी ग्रुप को भी गिरफ़्तार कर लिया गया और तरह़-तरह़ की तकलीफ़ों के बाद उन्हें बह़रेअस्वद (काला सागर) के किनारे "फ़वाद कैनाल" के वाटर वर्क्स के पास ले जाया गया फिर उन्हें रात के सन्नाटे में अलग-अलग ख़ुसूसी बन्द-गाड़ियों में कम्यूनिस्ट जन्नत की क़त्लगाह में पहुँचा दिया गया। इस अ़मल में जिन कर्मचारियों ने मजबूरन ह़िस्सा लिया था वह अब भी योरोप व तुर्की आदि में पनाहगुज़ीं की ह़ैसियत से ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं और इस की गवाही दे सकते हैं।

(इस्लाम मुसलमान और ग़ैर मुस्लिम, अल्लाम यूसुफ़ कर्ज़ावी, पेज नं० १३३)

रुस की दरिंदग़ी

जनाब 'ईसा यूसुफ़ अलपतगीन' जो तुर्किस्तान के रहने वाले थे, जिन्होंने एक किताब लिखी जिस का नाम **"मुसलमान आहिनी पर्दे (लौह आवरण) के पीछे"** में तकलीफ़ों के जिन तरीक़ों का ज़िक्र किया है उन में से बहुत से ऐसे हैं जिन की इन्सानी दुनिया कल्पना भी नहीं कर सकती, यहाँ निस्बतन कम गन्दे तरीक़ों का ज़िक्र किया जा रहा है जैसे-

१- सर में कीलें-

सर में लम्बी कीलें उस वक़्त तक ठोकी जाती थीं जब तक दिमाग़ तक न पहुँच जाए।

२- क़ैदियों पर पेट्रोल-

क़ैदियों पर पेट्रोल छिड़क कर आग लगा दी जाती थी।

३- निशाना लगाते-

क़ैदियों को लाइन में खड़ा कर दिया जाता था और फ़ौजी उन को निशाना बनाकर गोली चलाने की मश्क़ करते थे।

४- हवा-पानी बन्द करके-

क़ैदियों को ऐसी कोठरियों में बन्द कर दिया जाता था जिन में न हवा का गुज़र होता था न रौशनी का और उन्हें उस वक़्त तक वहां रखा जाता था जब तक भूक से वह दम न तोड़ देते थे।

५- बिजली के तार-

सरों पर तार रखकर बिजली की लहर दौड़ा दी जाती थी।

६- सर और धड़ को अलग बांधकर-

सर को एक मशीन से और बाक़ी जिस्म को दूसरी मशीन से बांध दिया जाता था और दोनों मशीनों को दो मुख़्तलिफ़ सिम्तों में चला दिया जाता था। यह सिलूसिला उस वक़्त तक जारी रहता था जब तक मुल्ज़िम की जान न निकल जाए।

७- ग़र्म सलाख-

जिस्म के हर हिस्से को लोहे की गर्म सलाख़ों से दाग़ा जाता था।

८- खौलता तेल-

मुल्ज़िम के जिस्म पर खौलता हुआ तेल डाल दिया जाता था।

९- कीलें ठोंकी जाती-

जिस्म में लोहे की कीलें और सूईयां चुभोई जाती थीं।

१०- उंगलियों में कीलें-

नाख़ूनों में लोहे की कीलें ठोंकी जाती थीं और वह कीलें दूसरी तरफ़ निकल आती थीं।

११- बाँधकर-

क़ैदी को चारपाई पर इन्तिहाई मज़बूती से जकड़ कर बाँध दिया जाता और कई दिनों तक भूका प्यासा छोड़ दिया जाता था।

१२- बर्फ़ पर लिटा कर-

जाड़ों में क़ैदियों को नंगे बदन बर्फ़ की सिलों पर सुलाया जाता था।

१३- सर के बाल नोच दिये जाते-

सर के बालों को इस तरह उखाड़ दिया जाता था कि उस के साथ चमड़ा भी निकल आता था।

१४- लोहे के कंघे-

क़ैदी के जिस्म पर लोहे के कंघे फेरे दिये जाते थे।

१५- जलता हुआ मवाद-

क़ैदियों को रस्सियों से जकड़ कर उन के मुँह और नाक में जलता हुआ मवाद डाला जाता था।

१६- पत्थर रख दिया जाता-

क़ैदी के हाथों को पीछे की तरफ़ बांध कर उस की पीठ पर बड़ा पत्थर रख दिया जाता था।

१७- छत से लटका दिया जाता-

क़ैदी के हाथ बांध कर उसे छत से लटका कर रात-रात भर यूं हीं छोड़ दिया जाता था।

१८- कीले वाले डंडे से पिटाई-

ऐसे डंडे से मारा जाता था जिस में तेज़ कीलें लगी हुई होती थीं।

१९- जिस्म के टुकड़े-टुकड़े

तलवार और छुरे से जिस्म के टुकड़े टुकड़े कर डाले जाते थे।

२०- जिस्म के सुराख़-

जिस्म में सुराख़ करके उस रस्सी को आरी की तरह इस्तेमाल किया जाता था ताकि ज़ख़्म फिर से ताज़ा हो जायें।

२१- दीवारों में कील से ठोंक दिया जाता-

क़ैदी को उस के पैरों पर देर तक खड़ा रखने के लिए दीवार के साथ उस के कान लगा कर उन्हें कीलें ठोंक दी जाती थीं।

२२- ठंडे पानी में डाल दिया जाता-

मौसमे सर्दी में क़ैदियों को पानी से भरे हुए तालाबों में डाल दिया जाता था।

२३- हाथ पैर बाँध देते-

हाथों पैरों की उंगलियों को एक दूसरे से जकड़ कर बांध दिया जाता था।

२४- बेहयाई के घिनौने काम किये जाते-

औरतों को नंगा करके बेरहमी के साथ ज़दोकोब किया जाता था और उन के साथ ऐसे शर्मनाक और घिनौने जरायम किया जाता था, जिन के ज़िक्र से भी हया व शर्म आती है। **(इस्लाम मुसलमान और ग़ैर मुस्लिम यूसुफ़ कर्ज़ावी)**

अरबों का दुश्मन क़ौम के बन्दियों के साथ सुलूक

अरब में लड़ाईयों की शिद्दत और वुसअत ने बड़ा वहशियाना मन्ज़र क़ायम कर रखा था, जिन में से चन्द की तफ़्सील इस प्रकार है।

वहशियाना मन्ज़र-

(१) बंदियों को जब क़त्ल करते, तो छोटे-छोटे बच्चों और औरतों को भी क़त्ल कर देते थे बल्कि आग में जला देते थे।

(मज़मउल मिसाल, किरमानी मतबूआ ईरान पेज नं० ३४६)

(२) ग़फ़लत या नींद की हालत में अचानक दुश्मन पर जा पड़ते थे और क़त्ल व

ग़ारतगरी शुरु कर देते थे, यह तरीक़ा आम और कसरत से रायज था, बहुत से बहादुर इस ख़ास तरीक़े में विशेषज्ञ थे, और उन को फ़ातिक या फ़त्ताक़ कहते थे।

(३) ज़िन्दा लोगों को आग में जला देते थे, अम्र बिन हिन्द (अरब का एक बादशाह था) के भाई को जब बनू तमीम ने क़त्ल कर दिया तो उस ने मन्नत मानी कि एक के बदले सौ आदमियों को क़त्ल कर देगा, अतः बनू तमीम पर हमला किया, वह लोग भाग गये केवल एक बुढ़िया रह गई थी, जिस का नाम हम्ज़ा था, उस को गिरफ़्तार करके ज़िन्दा आग में डाल दिया।

अचानक एक सवार जिस का नाम 'ग़म्मार' था आ निकला, अम्र ने पूछा तू क्यों आया, उस ने कहा मैं कई दिन का भूखा था, धुवां उठते देखा तो समझा खाना होगा, अम्र ने हुक्म दिया कि वह भी आग में डाल दिया जाए अतः इस हुक्म की तअमील की गई।

(४) बच्चों को निशाना बनाकर तीरों से मारते थे, वाहिस और गुबरा की लड़ाईयों में बनू ज़ीनान के पास जो बच्चे निकले उनको खुज़ाआ जो बनूज़ेयान का रईस था, उन बच्चों को ले जाकर एक वादी में खड़ा किया करता और उन को निशाना बनाकर तीरअन्दाज़ी करता अगर उसमें कोई लड़का न मरता तो दूसरे दिन फिर ले जाता और यह तफ़रीह फिर शुरु होती थी और लोग तमाशा देखते रहते थे।

(५) क़त्ल का एक यह तरीक़ा था कि हाथ पांव और दूसरे अंग काट कर छोड़ दिये जाते थे कि वह तड़प-तड़प कर मर जाता, ग़तफ़ान और आमिर की लड़ाई में इसी ख़ौफ़ से हकम बिन अत्तुफ़ैल ने अपने आप को खुद गला घोंट कर मार डाला था, जैसा कि अक़्दुल्ज़रीद में यह तफ़्सील मौजूद है।

'अरनिया' के लोग हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की ख़िदमत में बज़ाहिर इस्लाम लाकर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के गुलाम को पकड़ ले गये और उन के हाथ पांव काट डाले, फिर उन की आँखों और ज़बान में कांटे चुभोये, यहाँ तक कि वह तड़प-तड़प कर मर गये।

(६) मरने के बाद भी बदले का जोश तरह-तरह की हैरत अंगेज़ सूरतों में ज़ाहिर

होता था, मर्दों के हाथ, पांव, कान, नाक वग़ैरह काट डालते थे। हिन्द ने जंगे उहद में उसी रस्म के अनुसार ह़ज़रत ह़म्ज़ा (रज़ि०) और दूसरे शहीदों के अंग काट कर हार बनाया और गले में पहना दिया था।

(७) इस तरह की मन्नत मानते थे कि दुश्मन पर क़ाबू पा जाएँगे तो उसकी खोपड़ी में शराब पियेंगे, सलाफ़ा के दो बेटे जंगे उ़हद में आ़सिम के हाथ मारे गये थे, इस बिना पर 'सलाफ़ा' ने मन्नत मानी कि 'आ़सिम' की खोपड़ी में शराब डाल कर पियूँगी, इसी तरह मक़तूल का कलेजा निकाल कर खा जाते थे, हिन्द ने ह़ज़रत ह़म्ज़ा (रज़ि०) का कलेजा निकाल कर चबा लिया था, जिस का ह़ाल ऊपर गुज़र चुका है।

(८) ह़ामिला औ़रतों का पेट चाक कर डालते और इस पर गर्व करते थे।

(सीरतुन्नबी)

चीन के मुसलमानों पर ज़ुल्म

मुसलमानों पर चीन में वह़शियाना और इन्सानियत सोज़ मज़ालिम ढ़ाये गये और जिस तरह़ नस्लकुशी और क़त्लेआ़म के ज़रिए उन्हें मौत के घाट उतार दिया गया, वह भी अपनी मिसाल आप हैं।

रूस में मुसलमानों को ख़त्म करने की योजना के नतीजे में ख़ुद कम्यूनिस्ट पार्टी की प्रतिनिधि पत्रिका "प्रावदा" के एतिराफ़ के अनुसार-

बाज़ इलाक़ों में मुसलमानों की ४० फ़ीसद तआ़दाद को ख़त्म किया जा चुका है। कम्यूनिस्टों ने मुस्लिम इलाक़ों के अ़लावा दूसरे शहरों में क़िरम की कहानी नहीं दोहराई गयी उन्होंने अपने ज़ुल्म व सितम की मश्क़ के लिए केवल मुसलमानों को चुन लिया था और यह बात सोवियत रूस में अच्छी समझी जाती थी।

क़िरम के मुसलमानों पर रुसियों के ज़ुल्म व सितम का इतना प्रभाव था कि उन के दिलों में उन कम्यूनिस्टों के लिए शदीद नफ़रत और बुग्ज़ पैदा हो गया था। इस प्रकार दूसरी जंगे अ़ज़ीम के दौरान जब जर्मनी फ़ौज रूस में दाख़िल होती तो मुसलमानों के दिलों में यह ख़याल पैदा हुआ कि रूस व जर्मनी के दर्मियान जो शदीद दुश्मनी पाई जाती है वह शायद उन के लिए कुछ रह़मत साबित हो

लेकिन वह यह भूल गये थे कि मुसलमानों के बारे में रूस व जर्मनी में यकसां सलीबी रुह़ काम कर रही है। अहले योरोप आपस में एक दूसरे से दुश्मनी कर सकते हैं, आपस में कई ग्रुपों में तक़सीम भी हो सकते हैं लेकिन जहाँ मुसलमानों का सवाल आएगा सब एक होंगे।

अतः क़िरम में दाख़िल होने के बाद जर्मन फ़ौजियों के हाथों मुसलमानों को जिन दर्दनाक सूरतेह़ाल से दो चार होना पड़ा उस का ज़िक्र जनाब 'यूसुफ़ वली शाह' और 'अल्कैरी' की ज़बानी सुनिये ताकि कोई यह न कह सके कि रुस में मुसलमानों को इसलिए ज़ुल्म व सितम का निशाना बनाया गया कि वह कम्यूनिज़्म के मुख़ालिफ़ थे क्योंकि रुस दुश्मनी के बावजूद जर्मन फ़ौजियों ने मुसलमानों की कम्यूनिज़्म दुश्मनी का बदला इस तरह़ दिया कि रुसी ज़ुल्म व सितम भी मांद पड़ गया, जिसका उल्लेख इस प्रकार है।

जर्मनी की ज़ुल्म व बर्बरता

"ह़ज़ारों मुसलमानों को जिन्होंने अपने ख़ानदान को ख़तरे में डाल कर 'लाल फ़ौज' से अलग होने की नियत से हथियार डाल दिये थे। जंगी मह़ाज़ से सैंकड़ों किलोमीटर दूरे नंगे सर नंगे पैर और नंगे जिस्म भेड़ों की तरह़ हंका कर ले जाया गया न उन्हें जिस्म छुपाने के लिए कपड़ा दिया गया न खाना और पानी। रास्ते में अगर निढाल होने की वजह से कोई चन्द क़दम पीछे रह जाता तो बग़ैर किसी सवाल व जवाब के उसे गोली का निशाना बना दिया जाता। अगर कोई इस वह़शियाना सुलूक के ख़िलाफ़ एह़तिजाज का एक शब्द भी ज़बान से निकालता तो उसे भी हमेशा के लिए दुनिया से रुख़सत कर दिया जाता।"

मुस्लिम क़ैदियों को आ़म कैदियों के दर्मियान से छांट कर यह सुलूक किया जाता था यह मुसलमान क़ैदी जर्मनी से केवल इतना चाहते थे कि उसूली तौर पर

उन की आज़ादी तस्लीम करके उन्हें आज़ाद छोड़ दें कि वह कम्यूनिस्टों से जंग के लिए अपनी फ़ौज तैयार कर लें और उन्हें जर्मनी की सहायता के बिना ख़ुद रुस ही के हथियारों से भगा दें, जर्मन लीडरों से बातचीत करने वाले मुस्लिम लीडरों ने यह भी कहा कि अगर जर्मन सत्ता के बारे में कोई शंका हो, तो वह फ़ौज की पुश्त पर किसी गड़बड़ी का अन्देशा महसूस करे तो एहतियातन उन मराकिज़ पर क़ब्ज़ा भी बरक़रार रखे ताकि उसे कम्यूनिस्ट रुस से टक्कर लेने का इरादा करने वालों की नेक नियती का इत्मिनान भी हो जाए लेकिन जर्मनी ने यह कह कर उन की दरख़्वास्त रद्द कर दी कि जर्मनी जर्मनों के पाक व साफ़ ख़ून के ज़रिए ही सोवियत रुस पर क़ब्ज़ा करेगा।

(रुस में मुस्लिम क़िरम का अलमिया- १४६)

हब्शा के मुसलमानों पर ज़ुल्म के पहाड़

हब्शा (इथियोपिया) में मुसलमानों की आबादी ५५ फ़ीसद से कम नहीं, यह अनुपात बाज़ इलाक़ों में ६५ फ़ीसद तक है बक़िया ३५ फ़ीसद आबादी ईसाईयों, यहूदियों और बुतपरस्तों में है यह शुमार १९३६ ई० में इतालवियों की जनगणना और बाहिरी क़ौंसिल ख़ानों के तैयार किए हुए शुमार के मुताबिक़ हैं जब कि मुसलमानों को काफ़ी हद तक हर मैदान में नज़र अन्दाज़ किया गया है उस का इम्कान है कि उन का तनासुब ६५ फ़ीसद से ज़्यादा ही हो लेकिन इस ईसाई हुकूमत में मुसलमानों के साथ क्या सुलूक किया जाता रहा है इस का अन्दाज़ा इन हक़ायक़ से बख़ूबी किया जा सकता है।

१- इतालवी उपनिवेश के ख़ात्मे के बाद हब्शा की हुकूमत ने मुसलमानों का दो तिहाई माल व दौलत ज़ब्त करके ईसाई नागरिकों के हवाले कर दें और मुसलमानों को मुफ़्लिस व क़ल्लाश बनाने के लिए भारी टैक्स लगाए गये।

२- हुकूमत ने मसीही मिशनरियों की तरह की सहूलतें फ़राहम कीं जबकि मुसलमानों को इस की भी इजाज़त नहीं थी कि वह दूसरे मुसलमानों को नसीहत करने के लिए एक जगह से दूसरी जगह जा सकें। ईसाई मिशनरियों

ने अपनी रिपोर्ट में उम्मीद ज़ाहिर की कि मुसलमानों की मुफ़्लिसी व जिहालत और दीन व मज़हब पर उभारने और सिखाने वालों की अदम मौजूदगी की बदौलत वह पाँच बरस के अन्दर तमाम मुसलमानों को ईसाई बना सकेंगे।

३- हब्शा में दीनी उलूम पर सब से ज़्यादा तवज्जोह कूफ़ा, जैसमा और लुलूवहरा प्रांतों के मुसलमानों पर देते थे। केवल जैसमा में मुसलमान बच्चों की तअलीम के लिए ६० से ज़्यादा मदरसे थे लेकिन हब्शा के साथ उसे मिलाने का एलान किया गया और उस के सुल्तान अमीर अब्दुल्लाह बिन सुल्तान महमूद बिन दाऊद को जेल में डाल दिया गया तो हुकूमत-ए-हब्शा ने उन मदरसों पर क़ब्ज़ा कर लिया। अक्सर मदारिस बन्द कर दिये गये बक़िया मदारिस का निसाब इस तरह बदल गया कि उस में अरबी ज़बान और इस्लाम का कोई असर बाक़ी नहीं रह गया।

४- हुकूमत हब्शा ने ईसाईयों में तअलीम फैलाने के लिए अपने वसायल के अनुसार भरपूर इन्तिज़ामात किये लगभग दो सौ प्राईमरी सेकेन्डरी स्कूल खोले गये जिस में मुस्लिम बच्चों की तअदाद तीन फ़ीसद से ज़्यादा नहीं थी और वह भी मुस्लिम बच्चे थे जिन्हें हालात की वजह से मजबूरन स्कूलों में दाख़िल किया गया। मुसलमानों की अक्सरियत के बावजूद तअलीम के बजट का ५ फ़ीसद से ज़्यादा हिस्सा उन पर ख़र्च नहीं किया जाता था। और सरकारी स्कूलों में अरबी ज़बान और इस्लाम का दूर से भी कोई असर नहीं पड़ने दिया जाता था।

(इस्लाम, मुसलमान और ग़ैर मुस्लिम, अल्लामा यूसुफ़ करज़ावी-१४८)

मज़हबी जंगें तुल्नात्मक दृष्टि से

योरोप के मज़हबी जुनून की यादगार पहली जंग की तारीख़ का हर पेज ख़ून की एक चादर है, जिसने लम्बे समय तक दुनिया के अम्न शान्ति को अपने अन्दर छुपा लिया था। जबकि योरोप अपने आप को इन्सानियत का दावेदार समझता है, लेकिन अब तक वह "अत्तौहीद फ़ित्तस्लीस" और

"अत्तस्लीस फित्तौहीद" की गुत्थी नहीं सुलझा सका।

इस्लाम के प्रचार पर जब्रो इकरह और जुल्म व तशद्दुद के आरोप लगाने वाले आज तक कोई ठोस सुबूत पेश नहीं कर सके, जिससे ज़बरदस्ती इस्लाम के फैलने को साबित कर सकें। इस्लाम के फैलने का सबसे पहला ज़माना मुहम्मद (सल्ल०) का ज़माना है इसलिए सबसे पहले मुहम्मद साहब की जंगी तारीख़ को पढ़ना ज़रुरी है। तारीख़े इन्सानी में मुहम्मद साहब की ताक़त कभी-कभी दोगुनी-तीन गुनी और दस गुनी तक हो जाती और लगभग अक्सर जंगों में कामियाबी हासिल हुई। और हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की वफ़ात तक दस लाख से ज़्यादा मील के रक़बे पर आप की हुकूमत हो गई जिसमें लगभग डेढ़ सौ लोग क़त्ल हुए और मुसलमान फ़ौज का मुश्किल से दस साल में माहाना एक शहीद होता रहा। इन्सानी ख़ून की यह इज़्ज़त व तकरीम तारीख़ में बेनज़ीर है।

(अहले नबवी के मैदाने जंग पेज नं० ७- डा० हमीद उल्लाह)

इसके ख़िलाफ़ जो जंगे हुईं। १७वीं सदी के शुरु में योरोप में क़वानीने जंग में क़ानून की कोई कल्पना नहीं थी। जंग में दोनों तरफ़ के लोगों को बेशुमार तकलीफ़ पहुँचाने का तसव्वुर था। एक बड़े योरोपी लेखक 'गुरु ग्रोयियस' के अनुसार क़ानून में उन तमाम लोगों को क़त्ल कर देना जायज़ है जो दुश्मन की हुदूद में पाये जाएँ जिसमें औरतों और बच्चों को नहीं बख़्शा जाएगा।

मुहम्मद (सल्ल०) की तमाम जंगों का वर्णन

मुहम्मद (सल्ल०) की जंगी स्कीम में उसूल यह था कि इन्सानी जान व माल का हमेशा ख़याल रखा गया। इन्सानी जान दुनिया का क़ीमती सरमाया और क़ाबिले एहतिराम है। इसलिए हर जंग के मौक़े पर, हर ज़िम्मेदार को खुसूसी हिदायात मुहम्मद (सल्ल०) इस सिलसिले में ज़रुर देते थे।

अतः २३ साल के अन्दर ऐसा इन्क़िलाब आया जिस में २ हि० से ६ हि० तक ८ साल की थोड़ी सी मुद्दत में लगभग ८२ जंगें अगर मान ली जाएँ जिन में (सराया-५५ ग़ज़वात २७) उसमें दोनों तरफ़ का जानी नुक़सान (शोहदा व

मक़तूलीन मिला कर) मुश्किल से १०१८ हुआ। (जिस का विस्तार 'रहमतुल्लिल्आलमीन' के लेखक 'सुलेमान मन्सूरपूरी' ने इस प्रकार किया है।)

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के मुक़ाबिले में कुफ़्फ़ारे क़ुरैश, फिर यहूद, फिर अहज़ाब और आख़िर में दुनिया की मशहूर रोमन अम्पायर की ताक़त का चैलेंज आया। इनमें ज़्यादहतर तो डट कर मुक़ाबला ही हुआ क्या दुनिया की तारीख़ कोई ऐसा इन्क़िलाब पेश कर सकती है जिस में जंगे भी हुईं हों और ख़ून न बहा हो या इतना कम बहा हो, जितना कम मुहम्मद साहब के ज़माने में बहा। जिसकी सूची इस प्रकार है।

मुहम्मद (सल्ल०) की जंगों में कुल जानी नुक़्सान

नाम	बंदी	ज़ख़्मी	मक़तूल	कैफ़ियत
मुसलमान	१	१२७	३५६	हर दो जानिब के ज़ख़्मियों की तादाद सही नहीं।
मुख़ालिफ़	६५६४	१०	६५६	
टोटल	६५६५	१३७	१०१८	बंदियों और मक़तूलों की तअ़दाद

क्या ऐसी लड़ाईयों के विषय में कोई अक़्ल वाला यह क़रार दे सकता है कि सैकड़ों साल के मज़ाहिब के छुड़वाने और नये मज़हब को जबरन क़ुबूल करवाने के लिए, वह भी अ़रब जैसे खूँखार मुल्क में यह संख्या काफ़ी थी।

दुश्मन बंदियों की संख्या

दुश्मन बंदियों की संख्या केवल ६५६४ थी। यह संख्या भी जज़ीर-ए- अ़रब की वुस्अ़त के मुक़ाबले में कुछ भी नहीं है और चूंकि इस संख्या के अन्दर बड़ी संख्या (६०००) एक ही ग़ज़व-ए-हुनैन की है। इसलिए बाक़ी जंगों में औसतन बंदियों की संख्या १७ है। यह संख्या भी ऐसी नहीं है जो तमाम मुल्क को तब्दीली-ए-मज़हब पर मजबूर कर सके।

हम को ६५६४ क़ैदियों की संख्या के सम्बन्ध में यह तह़क़ीक़ हुई है कि ६३४७ को नबी करीम (सल्ल०) ने अपनी दयालुता से बिना किसी शर्त के आज़ाद फ़रमाया दिया था। केवल दो क़ैदी ऐसे थे जो पिछले जरायम की वजह से क़त्ल की सज़ा के ह़क़दार हुए।

२१५ क़ैदी ऐसे हैं जिनके विषय में मुझको सही पता नहीं चला। उम्मीद है कि जिस ने ६३४७ के साथ मेहरबानी फ़रमाया था। उस के मेहरबानी से २१५ लोग मुसलमान होकर मुसलमानों के अन्दर रह गये होंगे इसलिए उन का शुमार रिहाई पाने वालों में नहीं हुआ।

कुल जानें-

इस संख्या से यह नतीजा निकलता है कि वह़शी अ़रब को मुस्लिम अ़रब बनाने, डकैती व ख़ूँख़्वारी की बातों को रोकने, फ़्रांस से बड़े मुल्क में अम्न आ़मान को क़ायम और मज़बूत बनाने, सदियों और नस्लों की अ़दावत व झगड़ों को मिटा कर भाईचारगी और जम्हूरियत के क़ायम करने में १०१८ जान की कुर्बानियाँ की गईं। **(रह़मतुल्लिल्आ़लमीन पेज नं० २१४)**

जम्हूरियत के नाम पर ख़ून की नदियाँ

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की जंगों के मुक़ाबले में फ़्रांस और अमरीका को जम्हूरियत के क़ायम करने में कितनी कुर्बानियाँ करनी पड़ीं और कितना ख़ून बहाना पड़ा।

अभी की जंगे जो १४ अगस्त १९१४ से शुरु होकर ३ मार्च १९१७ तक दुनिया के बड़े ह़िस्से पर जारी रही है उन के नुक़सानात को देखें कि इंग्लिस्तान का मक़सद जंग में केवल इतना ही बताया गया है कि छोटी सल्तनतों की आज़ादी और ह़िफ़ाज़त को बरक़रार रखा जाए।

केवल इतने ही मक़सद के लिए लाखों जानों और अ़रबों अशरफ़ियों को ख़ाक व ख़ून में मिला दिया गया है, सैंकड़ों जहाज़ समुद्र में ग़र्क़ हो गये।
अख़बार हमदम १७ अप्रैल १९१९ ने जंगे अ़ज़ीम १९१४-१९१८ के मरने वालों

की संख्या इस प्रकार लिखी है।

जंगे अ़ज़ीम में मरने वालों की संख्या

१- रुस की जंग में मरने वालों की संख्या- १७ लाख।

२- जर्मनी की जंग में मरने वालों की संख्या- १६ लाख।

३- फ़्रांसीसी की जंग में मरने वालों की संख्या- १३ लाख सत्तर हज़ार।

४- इटली की जंग में मरने वालों की संख्या- ४ लाख ६० हज़ार।

५- आस्ट्रेलिया की जंग में मरने वालों की संख्या- ८ लाख।

६- बरतानिया की जंग में मरने वालों की संख्या- ७ लाख।

७- टर्की की जंग में मरने वालों की संख्या- २ लाख ५० हज़ार।

८- बेल्जियम की जंग में मरने वालों की संख्या- एक लाख २ हज़ार।

९- बिलग़ारिया की जंग में मरने वालों की संख्या- १ लाख।

१०- रुमानिया की जंग में मरने वालों की संख्या- १ लाख।

११- सरवियामांटी नीगड़ की जंग में मरने वालों की संख्या- १ लाख।

१२- अमरीका में मरने वालों की संख्या पचास हज़ार।

१३- नेट- तमाम जंगों में मरने वालों की कुल जनसंख्या ७३ लाख ३८ हज़ार।

लेखक को शक है कि इंग्लिस्तान व फ़्रांस की संख्या में हिन्दुस्तान और फ़्रांस की नई आबादियों के मरने वालों की संख्या भी शामिल है या नहीं मगर यह इक़रार है कि ज़ख़्मियों, बंदियों और गुमशुदों की तअ़दाद प्रस्तुत संख्या में शामिल नहीं। **(रह़मतुल्लिल्आ़लमीन भाग २-२१४)**

इसी तरह पहली जंगे अ़ज़ीम के मक़तूलीन की संख्या १९१५ ई० में एक अंदाज़े के मुताबिक़ ८० लाख के लगभग बताई गई है। योरोप का एक इतिहासकार ए० जी० ग्रांट इस जंग पर तब्सिरा करते हुए इस जंग से सम्बन्धित लिखता है-

"ख़ुदा न करें दुनिया में फिर इससे बड़ी फ़ौज वजूद में आए। चंद हफ़्ते खुले मैदान में जो जंग हुई तो पश्चिम की फ़ौजों ने ख़न्दक़े खोदीं जिनका सिलूसिला आठ्सलैंड से स्विज़रलैंड तक फैला हुआ था.....इस जंग में ५ करोड़ लोग शरीक थे जिनमें लगभग ८० लाख लोग मारे गये।"

(तारीख़े योरोप, ए० जी० ग्रांट)

आज भी पश्चिमी सभ्यता में खूंरेज़ी, 'ज़हरीली गैस' के नुक़सानात, 'एटम बम', की तबाहकारी और 'हाइड्रोजन बम' की हलाकत पर तुली हुई है इसके बावजूद इन्सानी अधिकारों का और समानता व प्रजातांत्रिक सत्ता का नाम लेकर पूरी दुनिया के इंसानों के ख़ून के प्यासे नज़र आते हैं और दावा है कि हम अम्न व शांति पैदा करेंगे।

मुहम्मद (सल्ल०) की कामियाब जंगे

देखिये मुहम्मद (सल्ल०) की कामियाबी का जिन्होंने केवल १०१८ क़ुर्बानियों के बाद इतनी बड़ी रुहानी, अख़्लाक़ी, समाजी व मिल्ली फ़ायदे हासिल किये थे, जिन की सामूहिक हैसियत आज तक दुनिया की कोई क़ौम और मुल्क हासिल नहीं कर सका।

अहले दुनिया की लड़ाईयों का ज़िक्र छोड़िए। मुक़द्दिसीन की लड़ाईयाँ भी उठा कर देखें जैसे-

महाभारत की जंग में क़त्ल होने वालों की संख्या लाखों से कम नहीं। योरोप की मुक़द्दस मज़हबी अन्जुमनों ने जिस क़दर जानों को हलाक किया, उन की संख्या लाखों से ज़्यादा है।

जान डेविस पोर्ट के अनुसार जानी नुक़सान

'जान डेविस पोर्ट' ने अपनी किताब "आइडियालोजी आफ़ मुहम्मद ऐण्ड क़ुर्आन" में मज़हबी अदालत के एहकाम से जानी नुक़सान की संख्या एक करोड़ बीस लाख बताई है जो ईसाईयों के हाथों से ईसाईयों की हुई थी।

(एजाज़ुत्तन्ज़ील पेज नं०-४६१)

केवल सल्तनत स्पेन ने तीन लाख चालीस हज़ार ईसाईयों को क़त्ल किया था जिन में से बत्तीस हज़ार आदमी ज़िन्दा आग में जलाए गये थे।

(रहमतुल्लिलूआलमीम, भाग-२ पेज नं० २१४ सुलेमान मन्सूर पूरी)

मुहम्मद (सल्ल०) की नसीहत-

ऊपर की पंक्तियों से मुहम्मद (सल्ल०) की जंगों का सिलूसिला (जैसा कि शुरु ही में बताया गया था और सारी जंगों के अध्ययन करने से भी साबित होता है) क्या आप (सल्ल०) के उस्व-ए-हस्ना का एक अहम और निहायत ही नसीहत भरी घटना नहीं है? काश दुनिया अब भी गम्भीरता से अध्यन करे और सबक़ हासिल करके फ़ायदे उठाए और जंग के वास्तविक उद्देश्य से परिचित हो जिसे हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया था-

कि अपने भाई की मदद करो (तात्पर्य तमाम इन्सानों की) चाहे ज़ालिम हो या मज़लूम। सहाबा ने पूछा अल्लाह के रसूल यह बात तो समझ में आती है। मज़लूम की मदद की जाए, लेकिन ज़ालिम की मदद कैसे की जाए। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया- ज़ालिम की मदद यह है कि उसे जुल्म से रोक दिया जाए यही उसकी मदद है। इस का आप (सल्ल०) ने नमूना बन कर दिखा दिया।

भाग-7

इस्लाम के मानवतापूर्ण आदेश तमाम इन्सानों के नाम

इस्लाम के मानवतापूर्ण आदेश कुर्आन की दृष्टि में

अब तक आपने दुनिया वालों के मानवतापूर्ण कार्य को देखा। अब इस्लाम के आदेशों को देखिए कि इस्लाम ने किस प्रकार इन्सानों को अधिकार दिये और ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने उसे अ़मल करके दिखाया।

१. किसी इन्सान का क़त्ल महापाप है

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

अनुवाद-

مَنْ قَتَلَ نَفْسًا بِغَيْرِ نَفْسٍ أَوْ فَسَادٍ فِي الْأَرْضِ فَكَأَنَّمَا قَتَلَ النَّاسَ جَمِيعًا ۚ

"जिसने किसी व्यक्ति को, किसी के ख़ून का बदला लेने या धरती में फ़साद फैलाने के अ़लावह किसी और वजह से क़त्ल कर डाला, तो मानों उसने सारे ही इन्सानों को क़त्ल कर दिया।" **(सूरः माइदा-३२)**

ख़ून के बदले का अधिकार किसको-

जहाँ तक ख़ून का बदला लेने या ज़मीन में फ़साद फैलाने पर सज़ा देने का सवाल है, इसका फ़ैसला एक अ़दालत ही कर सकती है। या किसी क़ौम से जंग हो तो एक बाक़ायदा हुकूमत ही इसका फ़ैसला कर सकती है। यूँ किसी आदमी को व्यक्तिगत रूप से यह अधिकार नहीं है कि वह अपने ख़ून का बदला ले या ज़मीन पर फ़साद फैलाने की सज़ा दे। इसलिए हर इन्सान पर यह वाजिब है कि वह हरगिज़ किसी इन्सान का क़त्ल न करे। अगर किसी ने एक इन्सान का क़त्ल किया तो वह ऐसा ही है जैसे उसने तमाम इन्सानों को क़त्ल कर दिया।

इसी बात को दूसरी जगह अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَلَا تَقْرَبُوا الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَمَا بَطَنَ ۖ وَلَا تَقْتُلُوا النَّفْسَ الَّتِي حَرَّمَ اللَّهُ إِلَّا بِالْحَقِّ ۚ ذَٰلِكُمْ وَصَّاكُمْ بِهِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ﴿١٥١﴾

अनुवाद-

और किसी जानदार को जिसके क़त्ल को अल्लाह ने ह़राम कर दिया हो, क़त्ल न करना, मगर ह़क़ के लिए जिसे शरीअ़त हुक्म दे; इन बातों की 'वह' तुम्हें ताकीद करता है, ताकि तुम समझो; (सूरः अनआम-१५१)

व्याख्या-

यहाँ भी क़त्ल की मनाही को ऐसे क़त्ल से अलग किया गया है जो ह़क़ के साथ हो, और ह़क़ का फ़ैसला बहरहाल कोई अधिकार रखने वाली अदालत ही करेगी। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने किसी जान के क़त्ल को शिर्क के बाद सब से बड़ा गुनाह क़रार दिया है।

इस्लाम में दो गुनाह सबसे बड़े

"सबसे बड़ा गुनाह अल्लाह के साथ शिर्क और किसी 'नफ़्स' को क़त्ल करना है।"

इन तमाम आयतों और ह़दीसों में स्वतंत्र रूप से 'नफ़्स' का शब्द प्रयोग हुआ है जो किसी ख़ास व्यक्ति के लिए नहीं उसका मतलब यह लिया जा सके कि अपनी क़ौम या अपने मुल्क के शहरी, या किसी ख़ास नस्ल, रंग या वतन, या मज़हब के आदमी को क़त्ल न किया जाये।

यह हुक्म तमाम इन्सानों के बारे में है और अल्लाह ने हर इन्सानी जान को क़त्ल करना ह़राम कहा है।

अपनों के लिए मानवता, दूसरों के लिए?

अब आप देखिए जो लोग मानव-अधिकारों का नाम तो लेते हैं, और अगर अपने संविधानों में या एलानों में कहीं मानव-अधिकारों का ज़िक्र करते हैं

तो ह़क़ीक़त में उस में यह बात छिपी (Implied) होती है कि यह ह़क़ या तो उनके अपने नागरिकों के लिए हैं, या फिर वह उनको सफ़ेद नस्ल वालों के लिए ख़ास समझते हैं। जिस तरह आस्ट्रेलिया में इन्सानों का शिकार करके सफ़ेद नस्ल वालों के लिए पुराने बाशिन्दों से ज़मीन ख़ाली कराई गई और अमेरिका में वहाँ के पुराने बाशिन्दों की नस्लकुशी की गई और जो लोग बच गये उन को ख़ास इलाक़ों (Reservations) में क़ैद कर दिया गया।

इस्लाम और इन्सान-

अफ़्रीका के विभिन्न इलाक़ों में इन्सानों को जानवरों की तरह हलाक किया गया, यह सारी चीज़ें इस बात को साबित करती हैं कि इन्सानी जान का "इन्सान" होने की ह़ैसियत से कोई आदर उन के दिल में नहीं है। अगर कोई आदर है तो अपनी क़ौम या अपने रंग या अपनी नस्ल की बुनियाद पर है। लेकिन इस्लाम तमाम इन्सानों के लिए इस ह़क़ को तस्लीम करता है अगर कोई आदमी जंगली क़बीलों से संबंध रखता है तो उसको भी इस्लाम इन्सान ही समझता है।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

مِنْ أَجْلِ ذَٰلِكَ ۚ كَتَبْنَا عَلَىٰ بَنِي إِسْرَائِيلَ أَنَّهُ مَنْ قَتَلَ نَفْسًا بِغَيْرِ نَفْسٍ أَوْ فَسَادٍ فِي الْأَرْضِ فَكَأَنَّمَا قَتَلَ النَّاسَ جَمِيعًا ۚ وَمَنْ أَحْيَاهَا فَكَأَنَّمَا أَحْيَا النَّاسَ جَمِيعًا ۚ وَلَقَدْ جَاءَتْهُمْ رُسُلُنَا بِالْبَيِّنَاتِ ثُمَّ إِنَّ كَثِيرًا مِنْهُمْ بَعْدَ ذَٰلِكَ فِي الْأَرْضِ لَمُسْرِفُونَ ﴿٣٢﴾

अनुवाद-

इसी वजह से हमने बनी इस्राईल के लिए लिख दिया था कि जिसने किसी व्यक्ति को, किसी के ख़ून का बदला लेने या धरती में फ़साद फैलाने के अ़लावा किसी और वजह से क़त्ल कर डाला, तो मानों उसने सारे ही इन्सानों को क़त्ल कर दिया और जिसने उसे ज़िन्दगी दिया, 'उसने मानो सारे इन्सानों को ही ज़िन्दगी दिया, और उन लोगों के पास 'हमारे' रसूल खुली दलीलें ला चुके हैं, फिर भी उनमें बहुत से लोग ज़मीन में ज़्यादती करने वाले ही हैं।

(सूरः माइदा-३२)

जान बचाने की शक्लें

इन्सान को मौत से बचाने की बेशुमार शक्ले हैं। एक आदमी बीमार या ज़ख़्मी है, यह देखे बग़ैर कि वह किस नस्ल, किस क़ौम या किस रंग का है, अगर वह आप को बीमारी की ह़ालत में या ज़ख़्मी होने की ह़ालत में मिलता है तो आपका काम यह है कि उसकी बीमारी या उसके ज़ख़्म के इलाज की फ़िक्र करें। अगर वह भूख से मर रहा है तो आप का काम यह है कि उसको खिलायें ताकि उसकी जान बच जाये। अगर वह डूब रहा है या और किसी तरह से उसकी जान ख़त्रे में है तो आप का फ़र्ज़ है कि उसको बचाएँ।

आपको यह सुनकर ह़ैरत होगी कि यहूदियों की मज़हबी किताब "तल्मूद" में हूबहू इस आयत का मज़मून मौजूद है, मगर उसके शब्द यह हैं कि "जिस ने इस्राईल की एक जान को हलाक किया, अल्किताब की (Scripture) निगाह में उसने मानो सारी दुनिया को हलाक कर दिया और जिसने इस्राईल की एक जान को बचाया अल्किताब के नज़दीक उसने मानो सारी दुनिया की ह़िफ़ाज़त की।"-

हर इन्सान की जान-

हम हर इन्सान की जान बचाने को अपना फ़र्ज़ समझते हैं, सिर्फ़ मुसलमान ही नहीं क्योंकि क़ुर्आन ने हुक्म दिया है। लेकिन दूसरे लोग अगर बचाना ज़रुरी समझते हैं तो केवल बनी इस्राईल की जान को, बाक़ी रहे दूसरे इन्सान, तो यहूदी-दीन में वह इन्सान समझे ही नहीं जाते उनके यहाँ 'गोयम' जिसके लिए अंग्रेज़ी में (Gentile) और अरबी में उम्मी का शब्द इस्तेमाल किया जाता है, यह है कि उनका कोई इन्सानी अधिकार नहीं हैं। इन्सानी हुक़ूक़ सिर्फ़ बनी इस्राईल के लिए ख़ास हैं। क़ुर्आन में भी इस का ज़िक्र आया है कि यहूदी कहते हैं कि-

وَمِنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ مَنْ اِنْ تَاْمَنْهُ بِقِنْطَارٍ يُّؤَدِّهٖٓ اِلَيْكَ ۚ وَمِنْهُمْ مَّنْ اِنْ تَاْمَنْهُ بِدِيْنَارٍ لَّا يُؤَدِّهٖٓ
اِلَيْكَ اِلَّا مَا دُمْتَ عَلَيْهِ قَآئِمًا ۚ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوْا لَيْسَ عَلَيْنَا فِى الْاُمِّيّٖنَ سَبِيْلٌ ۚ

अनुवाद-

"उन उम्मियों के बारे में (जो किताब वाले नहीं हैं,) हमारी कोई पकड़ नहीं है।" (सूरः **आले इमरान- ७५**)

इस्लाम में मुस्लिम या ग़ैर मुस्लिम हर औ़रत का आदर

इस्लाम के दिये हुये मानव-अधिकारों में यह है कि औ़रत की इ़ज़्ज़त हर हाल में आदर के योग्य है, चाहे औ़रत अपनी क़ौम की हो, या दुश्मन के क़ौम की, जंगल बियाबान में मिले या फ़तेह़ किये हुए शहर में, हमारे अपने मज़हब की हो या दूसरे मज़हब से उसका सम्बन्ध हो, या उसका कोई भी मज़हब हो, मुसलमान किसी हाल में भी उस पर हाथ नहीं डाल सकता। उसके लिये (ज़िना) को हर ह़ाल में ह़राम किया गया है, चाहे यह कुकर्म किसी भी औ़रत से किया जाये।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَلَا تَقْرَبُوا الزِّنٰٓى

अनुवाद-

"ज़िना के क़रीब भी न फटको।" (सूरः **बनी इस्राईल-३२**)

इसके साथ ही यह भी कहा गया है कि इस काम की सज़ा मुक़र्रर कर दी गई। यह हुक्म किसी शर्त के साथ बन्धा हुआ नहीं है। औ़रत की इस्मत और इ़ज़्ज़त पर हाथ डालना हर ह़ालत में मना है और अगर कोई मुसलमान इस काम को करता है तो वह इस की सज़ा से नहीं बच सकता, चाहे दुनिया में सज़ा पाये या आख़िरत में। औ़रत के सतीत्व के आदर को इस्लाम ने खोल कर बता दिया है। पाश्चात्य फ़ौजों को तो अपने मुल्क में भी " काम वासना की पूर्ति" के लिए ख़ुद अपनी क़ौम की बेटियाँ चाहिए होती हैं।

ग़ैर क़ौम के देश पर उनका क़ब्ज़ा हो जाये तो उस देश की औ़रतों की जो दुर्गत होती है, वह किसी से छुपी हुई नहीं है।

मुसलमानों की तारीख़-व्यक्तिगत इंसानी ग़ल्तियों को छोड़कर-इस से ख़ाली रही है कि किसी देश को फ़तेह़ करने के बाद उसकी फ़ौजें हर तरफ़ आम

बद्कारी करती फिरी हों, या उनके अपने देश में हुकूमत ने उनके लिये बद्कारियाँ करने का इन्तिज़ाम किया हो। यह भी एक बड़ी नेअ़मत है जो मानव-जाति को इस्लाम की वजह से ह़ासिल हुई है।

हर माँगने वाले की बिना भेदभाव मदद का आदेश

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَإِذَا حَضَرَ الْقِسْمَةَ أُولُوا الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسَاكِينُ فَارْزُقُوهُم مِّنْهُ وَقُولُوا لَهُمْ قَوْلًا مَّعْرُوفًا ۝

अनुवाद-

और जब मीरास बाँटने के वक़्त, नातेदार और यतीम और मुहताज मौजूद हों, तो उन्हें भी उसमें से कुछ दे दिया करो, और उनसे भली बात करो।

(सूरः निसा-८)

हर व्यक्ति की मदद-

पहली बात तो यह कि इस हुक्म में जो शब्द आये हैं वे सबके लिए हैं, उस में मदद करने को किसी धर्म विशेष के साथ ख़ास नहीं किया गया है, और दूसरे यह कि यह हुक्म मक्के में दिया गया था, जहां मुस्लिम समाज का कोई बाक़ायदा वजूद ही नहीं था। और आ़मतौर पर मुसलमानों का वास्ता ग़ैर-मुस्लिम आबादी ही से होता था। इसलिए कुर्आन की उक्त आयत का साफ़ मतलब यह है कि मुसलमान के माल पर हर मदद मांगने वाले और हर तंगदस्त और महरूम रह जाने वाले इन्सान का ह़क़ है।

इसमें यह ह़रगिज़ नहीं देखा जायेगा कि वह अपनी क़ौम या अपने देश का है या किसी दूसरी क़ौम, देश या नस्ल से उसका सम्बन्ध है। आप हैसियत और सकत रखते हों, और कोई ज़रुरतमंद आप से मदद मांगे, या आप को मालूम हो जाये कि वह ज़रुरतमंद है तो आप ज़रूर उसकी मदद करें।

हर इन्सान को आज़ादी का ह़क़

इस्लाम में किसी आज़ाद इन्सान को पकड़ कर ग़ुलाम बनाना या उसे बेच

डालना बिलकुल ह़राम क़रार दिया गया है। अल्लाह के रसूल मुह़म्मद (सल्ल०) के साफ़ शब्द ये हैं-

"कि तीन क़िस्म के लोग हैं जिन के ख़िलाफ़ क़ियामत के दिन मैं ख़ुद इस्तिग़ासा दायर करुँगा। उनमें से एक वह आदमी है, जो किसी आज़ाद इन्सान को पकड़ कर बेचे और उसकी क़ीमत खाये।"

मुह़म्मद (सल्ल०) के इस फ़रमान के शब्द भी आम हैं। उसको किसी क़ौम या नस्ल या देश या वतन के इन्सान के साथ ख़ास नहीं किया गया है। पाश्चात्य लोगों को बड़ा गर्व है कि उन्होंने ग़ुलामी का ख़ात्मा किया है। ह़ालांकि उन्हें यह क़दम उठाने का अवसर पिछली सदी के बीच में मिला है। उस से पहले जिस बड़े पैमाने पर वे अफ़्रीका से आज़ाद इन्सानों को पकड़-पकड़ कर अपनी नव-आबादियों में ले जाते रहे हैं और उनके साथ जानवरों से भी बुरा सुलूक करते रहे हैं, इसका ज़िक्र उनकी अपनी ही लिखी हुई किताबों में मौजूद है।

हर इन्सान के साथ न्याय का आदेश

इस्लाम ने इन्सान को इन्सान होने की हैसियत से दिया है।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُونُوا قَوَّامِينَ لِلَّهِ شُهَدَاءَ بِالْقِسْطِ ۖ وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَآنُ قَوْمٍ عَلَىٰ أَلَّا تَعْدِلُوا ۚ اعْدِلُوا هُوَ أَقْرَبُ لِلتَّقْوَىٰ ۖ وَاتَّقُوا اللَّهَ ۚ إِنَّ اللَّهَ خَبِيرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ ۝

अनुवाद-

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह के लिए इन्साफ़ की गवाही देने के लिए खड़े हो जाया करो और लोगों की दुश्मनी तुमको इस बात पर तैयार न करे कि इन्साफ़ छोड़ दो; इन्साफ़ किया करो, यही परहेज़गारी की बात है; और अल्लाह से डरते रहो, बेशक जो कुछ तुम करते हो, अल्लाह उसकी ख़ूब ख़बर रखता है।"

दुश्मन से भी इंसाफ़

ऊपर की पंक्तियों से मालूम हुआ कि आम इन्सान ही नहीं दुश्मनों तक

से इन्साफ़ करना चाहिए। दूसरे शब्दों में इस्लाम जिस इन्साफ़ की दावत देता है, वह सिर्फ़ अपने देश के रहने वालों के लिए या अपनी क़ौम के लोगों के लिए या मुसलमानों के लिए ही नहीं, बल्कि दुनिया भर के इन्सानों के लिए है।

हम किसी से भी बेइन्साफ़ी नहीं करते, हमारा हमेशा रवैया यह होना चाहिए कि कोई आदमी भी हम से बे-इन्साफ़ी का अंदेशा न रखे और हम हर जगह हर आदमी के साथ न्याय और इन्साफ़ का ख़्याल रखें।

तमाम इन्सानों के साथ समानता का आदेश

इस्लाम न सिर्फ़ यह कि किसी रंग व नस्ल के भेद-भाव के बग़ैर तमाम इन्सानों के बीच बराबरी को मानता है, बल्कि उसे एक महत्वपूर्ण सत्य नियम क़रार देता है।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

يَاَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوْا رَبَّكُمُ الَّذِىْ خَلَقَكُمْ مِّنْ نَّفْسٍ وَّاحِدَةٍ وَّخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالًا كَثِيْرًا وَّنِسَآءً ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِىْ تَسَآءَلُوْنَ بِهٖ وَالْاَرْحَامَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلَيْكُمْ رَقِيْبًا ۝

अनुवाद-

"ऐ लोगो! अपने रब से डरो, जिसने तुम को एक जान से पैदा किया और उसी से उसका जोड़ा पैदा किया, और उन दोनों से कसरत से (भारी संख्या में) मर्द और औ़रत फैला दिये; और अल्लाह से जिसका वास्ता देकर तुम एक-दूसरे के सामने अपनी माँगे रखते हो 'डरो', और नाते-रिश्ते (काटने) से, बेशक अल्लाह तुम्हारी निगरानी कर रहा है।" **(सूरः निसा-१)**

"दूसरे शब्दों में, इसका मतलब यह हुआ कि तमाम इन्सान अस्ल में भाई-भाई हैं, एक ही माँ और एक ही बाप की औलाद हैं।

وَجَعَلْنٰكُمْ شُعُوْبًا وَّقَبَاۗىِٕلَ لِتَعَارَفُوْا ۭ

अनुवाद-

"तुम्हें बिरादरियों और क़बीलों का रूप दिया, ताकि तुम एक-दूसरे को

पहचानो; **(सूरः हुजरात-१३)**

यानी क़ौमों और क़बीलों में यह तक़्सीम पहचान के लिए इसलिए है कि एक क़बीले या एक क़ौम के लोग आपस में एक दूसरे से परिचित हों और आपस में सहयोग कर सकें। यह इसलिए नहीं है कि एक क़ौम दूसरी क़ौम पर बड़ाई जताए और उसके साथ घमंड से पेश आये, उसको कमज़ोर और नीचा समझे और उसके अधिकारों पर डाके डाले।

اِنَّ اَكْرَمَكُمْ عِنْدَ اللّٰهِ اَتْقٰىكُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيْمٌ خَبِيْرٌ ۝

अनुवाद-

"अल्लाह के नज़दीक़ तुममें सबसे इ़ज़्ज़त वाला वह है, जो तुममें सबसे ज़्यादा मुत्तक़ी (परहेज़गार) हो, बेशक अल्लाह जानने वाला, ख़बर रखने वाला है।" **(सूरः हुजरात-१३)**

यानी इन्सान पर इन्सान की बड़ाई केवल पाकीज़ा किरदार और अच्छे आचरण की बिना पर है, न कि रंग व नस्ल ज़बान या वतन की बिना पर। और यह बड़ाई भी इस लिए नहीं है कि अच्छे किरदार और अच्छे आचरण के लोग दूसरे इन्सानों पर अपनी बड़ाई जतायें, क्योंकि बड़ाई जताना स्वयं में एक बुराई है, जिस को कोई धर्म परायण और परहेज़गार आदमी नहीं अपना सकता।

यह इस लिए भी नहीं है कि नेक आदमी के अधिकार बुरे आदमियों के अधिकारों से बढ़कर हों, या उसके अधिकार उनसे ज़्यादा हों, क्योंकि यह इन्सानी बराबरी के ख़िलाफ़ है, जिसको इस आ़दत के शुरु में नियम के तौर पर बयान किया गया है। यह बड़ाई और इ़ज़्ज़त अस्ल में इस वजह से है कि नेकी और भलाई नैतिक-दृष्टि से बुराई के मुक़ाबले में बहरहाल श्रेष्ठ है।

इसी बात को अल्लाह के रसूल मुह़म्मद (सल्ल०) ने एक ह़दीस में बयान फ़रमाया है कि -

मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया-

" किसी अ़रबी को ग़ैर-अ़रबी पर कोई बड़ाई नहीं है, न ग़ैर-अ़रबी को अ़रबी पर कोई बड़ाई है। न गोरे को काले पर और न काले को गोरे पर

कोई बड़ाई है। तुम सब आदम (अ़लै०) की औलाद हो और आदम मिट्टी से पैदा हुए थे। "

इस्लामी समानता

इस तरह इस्लाम ने तमाम मानव-जाति में बराबरी क़ायम की और रंग, नस्ल भाषा और राष्ट्र की बिना पर सारे भेद-भावों की जड़ काट दी। इस्लाम के अनुसार यह ह़क़ इन्सान को इन्सान होने की ह़ैसियत से ह़ासिल है कि उसके साथ उसकी खाल के रंग या उसकी पैदाइश की जगह या उसकी जन्म देने वाली नस्ल व क़ौम की बिना पर कोई भेद-भाव न बरता जाये।

किसी इन्सान को दूसरे के मुक़ाबले में नीच न ठहराया जाए। और उसके हुक़ूक़ दूसरों से कमतर न रखे जायें। अमेरिका के अफ़्रीकी नस्ल के लोगों का मशहूर लीडर 'मैलकम इक्स' जो काली नस्ल के बाशिन्दों की हिमायत में सफ़ेद नस्ल वालों के ख़िलाफ़ सख़्त मामला करता था, मुसलमान होने के बाद जब ह़ज के लिए गया और वहां उसने देखा कि एशिया, अफ़्रीक़ा, योरोप, अमेरिका अर्थात हर जगह के और हर रंग व नस्ल के मुसलमान एक ही लिबास में एक ख़ुदा के घर की तरफ़ चले जा रहे हैं, एक ही घर का तवाफ़ कर रहे हैं, एक ही साथ नमाज़ पढ़ रहे हैं और उनमें किसी तरह का भेद-भाव नहीं है तो वह पुकार उठा कि यह है रंग और नस्ल के मसले का ह़ल, न कि वह जो हम अमेरिका में अब तक करते रहे हैं। आज ख़ुद ग़ैर-मुस्लिम विचारक भी, जो अंधे भेद-भाव और तअ़स्सुब में ग्रस्त नहीं हैं, यह मानते हैं कि इस मसले को कामियाबी के साथ इस्लाम ही ने ह़ल किया है। **(इस्लाम में मानवता का अधिकार)**

भलाई में सहयोग देना और बुराई को मिटाना-

इस्लाम ने एक बड़ा अहम उसूल यह पेश किया है कि-

وَتَعَاوَنُوْا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى ۖ وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ۚ

अनुवाद-

"नेकी और परहेज़गारी के कामों में एक-दूसरे की मदद किया करो; और

गुनाह और ज़ुल्म की बातों में मदद न किया करो। " **(सूरः माइदा-२)**

इस के माने यह हैं कि जो आदमी भलाई का काम करे, यह देखे बिना कि वह उत्तर का रहने वाला है या दक्षिण का, वह यह ह़क़ रखता है कि हम उसे सहयोग करेंगे। इसके विपरीत जो आदमी बदी और ज़्यादती का काम करे, चाहे वह हमारा क़रीबी पड़ोसी या रिश्तेदार ही क्यों न हो, उसका न यह ह़क़ है कि नस्ल व वतन या भाषा और क़ौमियत के नाम पर वह हमारा सहयोग मांगे, न उसे हम से यह उम्मीद रखनी चाहिए कि हम उसे सहयोग करेंगे। न हमारे लिये यह जायज़ है कि ऐसे किसी काम में उसके साथ सहयोग करेंगे। बद्कार हमारा भाई ही क्यों न हो, हमारा और उसका कोई साथ नहीं है। नेकी का काम करने वाला चाहे हम से कोई रिश्ता न रखता हो, हम उसके साथी और मददगार हैं।

भाग-8

दुश्मनों के प्रति मानवतापूर्ण अधिकार इस्लाम की दृष्टि में

दुश्मनों के अधिकार इस्लाम की दृष्टि में

युद्ध के दौरान इस्लाम ने दुश्मनों को क्या-क्या अधिकार प्रदान किये हैं, यह जानने से पूर्व आवश्यक होगा कि हम इस सम्बन्ध में प्राचीन काल के सभ्य कहे जाने वाले राष्ट्रों के विचारों पर दृष्टि डालते चलें। मानव इतिहास के उषा-काल से रोमन साम्राज्य की स्थापना तक यह विश्वास प्रचलित था कि जाति या नस्ल की दृष्टि से समान होने पर ही राज्यों का एक दूसरे के प्रति कोई कर्तव्य है, अन्यथा कोई कर्तव्य नहीं है। यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो ने यूनानी राज्यों में परस्पर युद्ध होने की दशा में इसके संचालन के सम्बन्ध में कुछ नियम बनाये किन्तु यूनानियों से भिन्न बर्बर जातियों के साथ लड़ाई में इन नियमों को पालन करना आवश्यक नहीं था।

जर्मन लेखकों के विचार-

जर्मन लेखकों के विचार हैं कि सैनिक आवश्यकता का यह तकाज़ा है कि युद्धमान देशों के कार्यो पर कोई मर्यादा नहीं होनी चाहिए राज्य की सुरक्षा युद्ध के नियमों के पालन से अधिक महत्वपूर्ण है, अतः सभी प्रकार की हिंसा का प्रयोग अमर्यादित रूप से किया जा सकता है।

एक जर्मनी कहावत है कि युद्ध की आवश्यकता युद्ध के प्रकार पर हावी होती है आवश्यकता पड़ने पर हिंसा का कोई भी क्रूर कार्य किया जा सकता है। इसमें औचित्य-अनौचित्य का विवेचन व्यर्थ है। अंग्रेज़ी की कहावत है कि युद्ध और प्रेम में सभी कुछ उचित होता है। (All is fair in love and war)

प्राचीन ग्रन्थ-

रामायण, महाभारत, मनुस्मृति, कौटिल्य अर्थशास्त्र, कामन्दकीय नीतिसार आदि प्राचीन ग्रन्थों में अनेक प्रकार के युद्ध के नियमों का वर्णन मिलता है। इन

नियमों का कहाँ तक पालन होता था इस सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय कानून नामक पुस्तक के लेखक हरिदत्त वेदालंकार कहते हैं।

हरिदत्त वेदालंकार जी के अनुसार-

इसमें कोई संदेह नहीं कि इन नियमों का प्राचीन भारत में सदा पालन नहीं होता था। महाभारत में इनके उल्लंघन के अनेक उदाहरण हैं..... ..प्राचीन काल में युद्धों के दो भेद किये जाते थे धर्मयुद्ध और कूट युद्ध..... **...कूट युद्ध में सभी प्रकार के धोखेबाज़ी और छल के प्रयोग की अनुमति थी. .....भीष्म (महाभारत शान्ति पर्व) और शुक्र का यह मत है कि धर्म एवं कूट दोनों प्रकार के युद्धों से शत्रु का संहार होना चाहिए।**

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि युद्ध के दौरान हर प्रकार के अत्याचार तथा सितम किये जाते थे। सच तो यह है कि युद्ध के शिष्टाचार की कल्पना से दुनिया बेख़बर थी।

ग्रोशियस का युद्ध और शान्ति का क़ानून

पश्चिमी दुनिया इस कल्पना से पहली बार १७वीं सदी के विचारक ग्रोशियस (Grotiuous) ने जब अपना ग्रन्थ (De-Jure Belli Ac Pacis) युद्ध और शान्ति का कानून- १६२५ ई० में लिखा है, उस समय योरोप में तीस वर्षीय युद्ध (१६१८-१६४८ ई०) चल रहा था। उस समय युद्ध करने में जितनी स्वच्छन्दता और उच्छृखंलता प्रदर्शित हो रही थी, वह जंगली जातियों को भी मात देने वाली थी। बिना किसी प्रतिबन्ध सब प्रकार के अत्याचार और क्रूरतापूर्ण कार्य करने की दोनों पक्षों को खुली छूट थी। ग्रोशियस ने इस अराजक और भयावह स्थिति को नियन्त्रण करने के लिए कुछ अन्तर्राष्ट्रीय नियम निश्चित किये मगर अमली तौर पर अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध के नियम १९ वीं सदी के मध्य में बनना शुरु हुए।

युद्ध में शिष्टाचार-

इससे पहले युद्ध के शिष्टाचार का कोई विचार पश्चिमी वालों के यहाँ नहीं पाया जाता था। १८९९ ई० में प्रथम हेग सम्मेलन हुआ जिसमें कुछ स्थल युद्ध

के नियम बनाये गये। १९०७ ई० में दूसरा हेग सम्मेलन हुआ। प्रथम विश्व युद्ध के बाद राष्ट्र संघ की (League of Nations) स्थापना हुई। १९२५ ई० लोकार्नो सन्धि द्वारा यह निश्चय किया गया कि आपसी विवाद शान्तिपूर्वक निपटाये जायेंगे।

द्वितीय विश्वयुद्ध

१९३९ ई० में हिटलर ने अन्तर्राष्ट्रीय क़ानून को खुली चुनौती दी। अन्ततः द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान संयुक्त राष्ट्र अमेरिका ने ८ तथा ९ अगस्त को हिरोशिमा एवं नागासाकी पर बम गिरा कर सभी शिष्टाचार के नियमों को धूल चटा दिया स्पष्ट रहे कि युद्ध के दौरान शत्रुओं को कोई अधिकार नहीं दिया गया उनके साथ लोभहर्षक तथा हृदय विदारक व्यवहार किया गया।

इस्लामी शिष्टाचार

इस्लाम ने इसके विपरीत युद्ध के जो शिष्टाचार तथा आदाब बताये हैं, उनकी सही हैसियत क़ानून की है क्योंकि वे मुसलमानों के लिए अल्लाह और रसूल के दिये हुए आदेश हैं, जिनकी पाबन्दी हम हर ह़ाल में करेंगे, चाहे हमारा दुश्मन कुछ भी करता रहे। इस्लाम ने चौदह सौ वर्ष पहले युद्ध के दौरान जो अधिकार दुश्मनों को प्रदान किये थे, आज इस वैज्ञानिक युग में भी वह युद्ध की उन सभ्य मर्यादाओं तक नहीं पहुंच सका है, जिसे इस्लाम ने निश्चित किया है-

इस्लाम में युद्ध न करने वालों के अधिकार

इस्लाम में दुश्मन मुल्क की जंग आबादी (Combatant) और जंग न करती हुई (Non-Combatant) आबादी के बीच अन्तर किया गया है। जहां तक जंग न करती हुई आबादी का संबंध है (यानी जो लड़ने वाली नहीं है या लड़ने के क़ाबिल नहीं है। मिसाल के तौर पर औ़रतें, बच्चे, बूढ़े, बीमार, अंधे, अपाहि़ज आदि) उनके बारे में अल्लाह के रसूल मुह़म्मद (सल्ल०) की हि़दायतें निम्नलिखित हैं।

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया-

"किसी बूढ़े, बच्चे और किसी औ़रत को क़त्ल न करो। ख़ानक़ाह में बैठे राहिबों को क़त्ल न करो, या इ़बादतगाहों में बैठे हुए लोगों को न मारो।"

रोमियों और ईरानियों का इतिहास

इस्लाम के आगमन से पूर्व बर्बर एंव असभ्य कहे जाने वाले अ़रबों को छोड़िये जो बात-बात पर तलवार निकाल लेते थे और वर्षो तक प्रतिशोधात्म युद्ध लड़ा करते थे जिसमें ख़ानदान के ख़ानदान बर्बाद हो जाया करते थे, सभ्य और शिष्ट कहे जाने वाले रोमियों और ईरानियों के इतिह़ास पर एक नज़र डालें तो वहां भी हमें यही बर्बरता तथा अराजकता फैली हुई मिलती है जहाँ युद्धमान तथा अयुद्धमान आबादी के बीच कोई भेद नहीं किया जाता था। शत्रु देश का प्रत्येक व्यक्ति तलवार के भेंट चढ़ाने योग्य समझा जाता था। औ़रतें, बच्चे, बूढ़े, ज़ख़्मी, बीमार, पुजारी, पुरोहित सब युद्ध के अर्न्तगत आते थे।

साईकेस की हिस्ट्री आफ़ प्रशियन तथा गिब्बन की रोमन अम्पायर ऐसी ही हृदय विदारक घटनाओं से भरी हुई हैं जहाँ युद्ध का अभिप्राय इसके सिवा कुछ न था कि वह एक हंगामे क़त्ल व ख़ून या जो ताक़तवर की प्रत्येक इच्छाओं तथा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए लड़ा जाता था।

शाँति की स्थापना के लिए

बर्बरता, संगदिली तथा अत्याचार युद्ध की वास्तविकता का दूसरा नाम था। ऐसे ही मौहाल में इस्लाम ने युद्ध के सम्बन्ध में नया सिद्धान्त पेश किया और बताया कि युद्ध वास्तव में एक बुराई है जिससे प्रत्येक व्यक्ति को बचना चाहिए लेकिन जब दुनिया में इससे बड़ी बुराई अर्थात अत्याचार अराजकता तथा फ़ित्ना और फ़साद फैल गया हो और उपद्रवी लोगों ने मानव के सुख एवं शान्ति को ख़तूरे में डाल दिया हो तो मात्र फ़ित्ना व फ़साद को कुचलने के लिए युद्ध करना आवश्यक है। इस सिद्धान्त के अनुसार युद्ध का मुख्य उद्देश्य शत्रु को हलाक करना और नुक़सान पहुँचाना नहीं बल्कि मात्र बुराई को मिटाना है।

इस्लाम का सिद्धान्त

इसलिए इस्लाम यह सिद्धान्त पेश करता है कि युद्ध में केवल उतनी ही शक्ति का प्रयोग करना चाहिए जितना कि बुराई और फ़साद को मिटाने के लिए आवश्यक हो और उस शक्ति का प्रयोग केवल उन्हीं के ख़िलाफ़ हो जो युद्ध रत हों और शेष सभी वर्ग उसके प्रभाव से सुरक्षित हों। नबी करीम (सल्ल०) का फ़रमान है।

"किसी बूढ़े, और औ़रत, या ख़ानकाह में बैठे राहिबों को क़त्ल न करो।"

मक्का विजय के अवसर पर आप (सल्ल०) ने पहले से हिदायत फ़रमा दी थी कि किसी ज़ख़्मी पर ह़मला न करना, जो कोई जान बचा कर भागे उसका पीछा न करना और जो अपना दरवाज़ा बन्द करके बैठ जाये उसे संरक्षण देना।"

(फ़त्हुल्बुल्दान- पृष्ठ ४७)

१९०७ ई० के चौथे हेग सम्मेलन में पहली बार युद्धमानों (Belligerents) और अयुद्धमानों (Non Belligerents) के मध्य अन्तर किया गया जिसे हेग नियम के नाम से जाना जाता है। जबकि मुह़म्मद (सल्ल०) ने इस नियम पर व्यवहारतः अ़मल करके आज से चौदह वर्ष पूर्व ही दिखा दिया।

युद्ध करने वालों के साथ व्यवहार

युद्ध करने वाले जिन पर तलवार उठाना वैध है उन पर भी बर्बरता पूर्ण व्यवहार करने का अधिकार प्राप्त नहीं है, बल्कि उसके लिए भी कुछ सीमाएं हैं जिनकी पाबन्दी आवश्यक है। जिनका वर्णन किये इस प्रकार है।

१. ग़फ़लत में आक्रमण न किया जाय

अ़रब वालों का यह नियम था कि रातों को विशेष कर अर्द्ध रात्रि में जबकि लोग अचेत अवस्था में सोते होते, अचानक आक्रमण कर देते थे। रसूल (सल्ल०) ने इस आदत को बन्द कर दिया और नियम निश्चित किया कि प्रभात से पहले किसी पर ह़मला न किया जाये। अनस बिन मालिक (रज़ि०)

ग़ज़व-ए-ख़ैबर की चर्चा करते हुए बयान करते हैं:-

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) जब किसी दुश्मन क़ौम पर रात के समय पहुँचते तो जब तक प्रभात काल न हो जाता आक्रमण न करते थे।"

२. आग का अ़ज़ाब न दिया जाय

अ़रब लोग और ग़ैर अ़रब प्रतिशोध की भावना से ओत-प्रोत होकर शत्रु को जीवित जला देते थे। ईरान और रोम का इतिहास ऐसी घटनाओं से भरा पड़ा है। लेकिन इस्लाम ने इस बर्बरता पूर्ण कार्य को अवैध घोषित कर दिया। नबी करीम (सल्ल०) ने स्पष्ट शब्दों में फ़रमाया-

"आग़ का अ़ज़ाब देना आग के रब के सिवा किसी को ज़ेबा नहीं देता।"

३. लूट मार और ग़ारतगरी न की जाय

यह हिदायत भी की गई है कि दुश्मनों के देश में दाख़िल हो तो बर्बरतापूर्ण व्यवहार करके आम तबाही न फैलाओ। बस्तियों को वीरान न करो। सिवाय उन लोगों के जो तुम से लड़ते हैं, और किसी आदमी के माल पर हाथ न डालो। जंगे ख़ैबर के अवसर पर नबी करीम (सल्ल०) ने तमाम फ़ौजियों को जमा करके फ़रमाया-

"अल्लाह ने तुम्हारे लिए यह जायज़ नहीं किया कि अहले किताब के घरों में बिना अनुमति घुस जाओ उनकी औ़रतों को मारो पीटो और उनके फल खाओ, यद्यपि कि उन पर जो कुछ वाजिब था वह तुम्हें दे चुके।"

एक दफ़ा जेहाद के मार्ग में जाते हुए कुछ लोगों ने कुछ बकरियाँ लूट लीं और उनका गोश्त पका कर खाना चाहा। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को ख़बर हुई तो आप (सल्ल०) ने आकर देगचियां उलट दीं और फ़रमाया लूट घसोट का माल मुर्दा से भी घटिया है।"

फ़साद-

आम लोग जंग के मौक़े पर फ़सलों को नष्ट करना, खेतों को तबाह

करना, बस्तियों में क़त्ले आ़म करना, आग लगाना आदि फ़ौजियों द्वारा किये जाते हैं मगर इस्लाम इसे फ़साद कहता है और इसे अनुचित ठहराता है।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

وَإِذَا تَوَلَّىٰ سَعَىٰ فِي الْأَرْضِ لِيُفْسِدَ فِيهَا وَيُهْلِكَ الْحَرْثَ وَالنَّسْلَ ۗ وَاللَّهُ لَا يُحِبُّ الْفَسَادَ ﴿٢٠٥﴾

अनुवाद-

"और जब लौटता है, तो इस दौड़ धूप में रहता है कि धरती पर फसाद पैदा करे, और खेती और जानवरों को तबाह करे, जबकि अल्लाह फ़साद को पसंद नहीं करता;" (सूरः बकरः २०५)

ह़ज़रत अबू बक्र (रज़ि०) ने शाम और ईराक़ की तरफ़ फ़ौजें भेजते समय जो ह़िदायतें दी थीं उनमें एक ह़िदायत यह भी थी कि बस्तियों को वीरान न करना और फ़सलों को ख़राब न करना। जंगी ज़रुरत के अन्तर्गत पेड़ों को काटने और जला कर साफ़ कर देने की इजाज़त है जैसा कि बनू नज़ीर के घेराव में किया गया लेकिन मात्र उपद्रव फैलाने के लिए ऐसा नहीं किया जा सकता।

४. बांध कर क़त्ल न किया जाय

इस्लाम ने शत्रु को बांध कर वध करने और तकलीफ़ें दे दे कर मारने को मना किया है।

उबैद बिन अ़ली का बयान है कि हम अ़ब्दुर्रह़मान बिन ख़ालिद के साथ जंग पर गये थे। एक मौक़े पर शत्रु के चार लोग पकड़ कर लाये गये और उन्होंने आदेश दिया कि इन्हें बांध कर क़त्ल कर दिया जाए। इस की सूचना जब ह़ज़रत अबू अय्यूब अन्सारी को हुई तो उन्होंने कहा-

"मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से सुना है कि आप ने बांध कर क़त्ल करने से मना फ़रमाया है। ख़ुदा की क़सम यदि मुर्ग होता तो मैं उसको भी इस तरह बांध कर न मारता इसकी सूचना जब अ़ब्दुर्रह़मान बिन ख़ालिद को पहुँची तो उन्होंने चार ग़ुलाम आज़ाद कर दिये।"

५. दुश्मन की लाशों पर गुस्सा न निकाला जाय

इस्लाम ने इस बात को भी मना किया है कि दुश्मन की लाशों का अनादर किया जाय या उसके किसी अंग को काटा जाय। उब्दुल्लाह बिन यज़ीद अन्सारी रिवायत करते हैं कि नबी (सल्ल०) ने लूट के माल और लाश के काटने-पीटने या बुरा सुलूक करने से मना फ़रमाया है।

"यह आदेश जिस अवसर पर दिया गया, वह भी बड़ा सबक़ आमोज़ (शिक्षाप्रद) है उहद की जंग में जो मुसलमान शहीद हुए थे दुश्मनों ने उनकी नाक काट कर उनके हार बनाये और गलों में पहने। हुज़ूर (सल्ल०) के चचा हज़रत हम्ज़ा (रज़ि०) का पेट चीर कर उनका कलेजा निकाला गया और उसे चबाने की कोशिश की गई उस समय मुसलमानों का गुस्सा आख़िरी हद को पहुँच गया था।

दुश्मन की लाशें-

हुज़ूर (सल्ल०) ने फ़रमाया कि तुम दुश्मन क़ौम की लाशों के साथ ऐसा व्यवहार न करना जैसा उन्होंने किया। इसी से अन्दाज़ा किया जा सकता है कि यह दीन हक़ीक़त में ख़ुदा ही का भेजा हुआ है। इसमें इन्सानी जज़्बात और भावनाओं का यदि दख़ल होता तो उहद की जंग का यह मंज़र देख कर आदेश दिया जाता कि तुम भी दुश्मन की फ़ौजों की लाशों का इसी प्रकार अनादर करो।"

६. वादा ख़िलाफ़ी

इस्लाम में वादा ख़िलाफ़ी को भी सख़्ती से मना किया गया है। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) फ़ौजों को भेजते वक़्त जो आदेश देते थे। उनमें से एक यह था कि वादा ख़िलाफ़ी न करना। क़ुर्आन और हदीस में इस आदेश को बार-बार दोहराया गया है कि दुश्मन अगर अहद व पैमान की ख़िलाफ़वर्ज़ी करता है तो करे, लेकिन तुम को अपने अहद व पैमान की ख़िलाफ़वर्ज़ी कभी न करना चाहिए। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र रिवायत करते हैं कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया-

"जो कोई किसी को बध करेगा उसे जन्नत की ख़ुश्बू तक नसीब न होगी। जबकि उसकी ख़ुशबू ४० वर्ष की मसाफ़त से महसूस होती है।

हुदैबिया की घटना-

हुदैबिया की सुलह की प्रसिद्ध घटना है कि समझौते तय हो जाने के बाद एक मुसलमान नव जवान अबू जन्दल (रज़ि०) जिनका बाप सुलहनामें की शर्ते अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से तय कर रहा था। बेड़ियों में भागते हुए आये और उन्होंने कहा मुसलमानों मुझे बचाओ। अल्लाह के रसूल ने उनसे फ़रमाया कि समझौता हो चुका है। अब हम तुम्हारी मदद नहीं कर सकते तुम वापस जाओ अल्लाह तुम्हारे लिए कोई रास्ता खोलेगा।

उनकी दयनीय दशा को देख कर मुसलमान रो पड़े लेकिन अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने जब फ़रमा दिया कि प्रण को हम भंग नहीं कर सकते तो उनको बचाने के लिए कोई भी आगे न बढ़ा और काफ़िर उनको जबरन घसीटते हुए ले गये। यह समझौते की पाबन्दी की अनोखी व अद्भुत मिसाल है और इस्लामी इतिहास में ऐसे बहुत से उदाहरण हैं। हज़रत मुआविया (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि हमने रसूलुल्लाह (सल्ल०) को फ़रमाते हुए सुना है।

"जिसका किसी क़ौम से समझौता हो तो उसमें कोई परिवर्तन व संशोधन न करे जब तक कि उसकी अवधि पूरी न हो जाय या फिर यदि ख़यानत का ख़ौफ़ हो तो समानता को ध्यान में रखकर उसको समझौते के भंग होने की नोटिस दे दें।"

७. दूतों को क़त्ल न किया जाय

दूतों को भी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने क़त्ल करने से मना फ़रमाया है। मुसैलिमा कज़्ज़ाब का दूत उबादा बिन हारिस जब उसका शरारतपूर्ण सन्देश लेकर हाज़िर हुआ तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया-

"यदि दूतों का वध वर्जित न होता तो मैं तेरी गर्दन मार देता।"

८. बर्बरता पूर्ण अ़मल के ख़िलाफ़ हिदायात

फ़ौजियों की रवानगी के समय फ़ौजी बर्ताव के सम्बन्ध में हिदायत देने का तरीक़ा जिससे १६वीं शताब्दी के मध्य तक यूरोपीय दुनिया अन्जान थी। ७ वीं शताब्दी में जगत गुरू मुह़म्मद (सल्ल०) ने सबसे पहले ईजाद किया था। मुह़म्मद (सल्ल०) का तरीक़ा था कि जब आप किसी सरदार को जंग पर भेजते तो उसे और उसकी फ़ौज को पहले तक़्वा ईशभय और बहुत सी नसीह़तें करते -

जो ग़ज़वात (युद्ध मुठभेड़) पेश आये उनकी संख्या ८१ बताई जाती है मगर रसूलुल्लाह (सल्ल०) २७ ग़ज़वात में सम्मिलित हुए। इन युद्धों में मरने वालों की संख्या इस प्रकार है २५६ मुसलमान मारे गये और ७५६ ग़ैर मुस्लिम मारे गये।

प्रथम काल की यह क्रान्ति श्रेष्ठतम क्रान्ति थी जिसने मात्र-इतिहास के ध ाारे को मोड़ दिया। इतनी बड़ी क्रान्ति में मरने वालों की संख्या इतनी कम है कि इनको रक्तहीन क्रान्ति कहा जा सकता है न कि इंग्लैंड को १६८८ ई० की क्रान्ति। कहने का तात्पर्य यह है कि इस्लाम ने युद्ध के जो नियम निर्धारित किये उसका पालन किया जाय।

पराजितों के अधिकार

इस्लाम ने पराजितों के अधिकार भी सुनिश्चित किये हैं इस्लाम से पूर्व पराजितों के अधिकार नहीं थे। उन्हें या तो ग़ुलाम बना लिया जाता था या बधकर दिया जाता था। लेकिन इस्लाम ने उदारता के साथ यह घोषणा की-

لَآ إِكْرَاهَ فِى الدِّيْنِ

दीन में जब्र (बलात धर्म परिवर्तन) नहीं है।

"और (हे मुसलमानों) यह लोग अल्लाह के अतिरिक्त जिन को पुकारते हैं उन्हें गालियां न दो।"

मुसलमानों ने सदैव ग़ैर मुस्लिमों के साथ सहृदयता एवं उदारता का व्यवहार किया। वह विजेता की ह़ैसियत से या प्रशासक की ह़ैसियत से जहां कहीं गये अपने ग़ैर मुस्लिम प्रजा के साथ उदारता एंव सहिष्णुता का व्यवहार किया और उनके धार्मिक जीवन में हस्तक्षेप नहीं किया। नबी करीम (सल्ल०) ने इस सम्बन्ध में आदर्श नमूना स्थापित किया है। अल्लामा शिब्ली (रह़०) ने सीरतुन्नबी में ज़िम्मियों के अधिकार के सम्बन्ध में लिखा है-

ज़िम्मियों के अधिकार

१. कोई शत्रु उन पर आक्रमण करेगा तो उनकी रक्षा की जायेगी।
२. उनको उनके धर्म से विमुख नहीं किया जायेगा।
३. उनके जानवरों की रक्षा की जायेगी।
४. उनकी सम्पत्ति सुरक्षित रहेगी।
५. उनके काफ़िले और उनकी तिजारतें सुरक्षित रहेंगी।
६. उनकी ज़मीन उनके क़ब्ज़े में रहेगी।
७. जो वस्तु उनकी मिल्कियत में है, उनको बनाये रखा जायेगा।
८. पादरी, बिशप और गिरजों के पुजारी अपने पदों से पदच्युत नहीं किये जायेंगे।
९. सलीबों और औ़रतों को नुक़सान नहीं पहुँचाया जायेगा।

१०. उनसे ग़ल्ले की पैदावार पर उश्र नहीं लिया जायेगा।
११. आबादी में फ़ौज नहीं भेजी जायेगी।
१२. पहले से जो उनका धर्म था उसे परिवर्तन नहीं कराया जायेगा।
१३. उनका कोई अधिकार जो उन्हें पहले प्राप्त था विनाश नहीं होगा।
१४. जो लोग इस समय उपस्थित नहीं हैं उनके अधिकारों में वह भी सम्मिलित होंगे।
१५. उनसे जो कर लिया जायेगा उनके लिए उन्हें स्वयं वसूल करने वाले के पास नहीं जाना होगा।" **(मकालात शिब्ली भाग प्रथम पृष्ठ १५७)**

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने ग़ैर मुस्लिमों को जो उनके अधीन थे इतने व्यापक अधिकार प्रदान किये कि आज तक किसी भी विजयी देश ने पराजितों को इतने अधिकार नहीं प्रदान किये।

नजरान के ईसाईयों के साथ व्यवहार

६ हिजरी में नजरान के ईसाईयों का विष्ट मण्डल ह़ाज़िर हुआ तो पैग़म्बरे इस्लाम ने अपने तौर पर उन्हें धार्मिक अनुष्ठान के सम्पादन की मस्जिदे नबवी में अनुमति दे दी और फिर वह समझौता किया जिसे देखकर सर म्यूर जैसा इतिहासकार लिखे बिना न रह सका।

पैग़म्बर ने बिशपों पादरियों और राहिबों (सन्यासियों) को यह लेख दिया कि उनके गिरजाओं और ख़नक़ाहों में प्रत्येक छोटी बड़ी जैसी वस्तु थी, वैसी ही बरक़रार रहेगी, ख़ुदा के रसूल ने यह वचन दिया कि कोई बिशप अपने पद से और न कोई राहिब अपनी ख़ानकाह से और न कोई पादरी अपने मन्सब से हटाया जायेगा। न उसकी शक्तियों, अधिकारों और नित्यक्रिया में किसी प्रकार का परिवर्तन किया जायेगा।

जब तक वह शान्तिपूर्वक और सच्चाई के साथ रहें उन पर अत्याचार एवं बर्बरता न किया जाय, न वह किसी पर जुल्म व अत्याचार करें।"

(Life of Mohammed P. 158)

मिस्टर जेसन के अनुसार-

एक और मूर्धन्य इतिह़ासकार मिस्टर जेसेन जो वर्तमान युग के तमाम ईसाई एवं मुस्लिम इतिहाकारों के लेखों का आलोचनात्मक अध्ययन किया है, लिखते हैं-

" ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने अत्यन्त सहृदयता के साथ इस्लामी राज्य में आबाद ईसाई की जान उनकी तिजारत उनकी धन सम्पत्ति और उनकी धार्मिक क्रियाकलापों के सम्पादन और हर प्रकार के संरक्षण की प्रत्याभूत दी थी और उदारता के इस सिद्धान्त पर न केवल ख़ुलाफ़-ए-राशिदीन ही ने पूरी तन्मयता से अ़मल किया था बल्कि तमाम अ़रब प्रशासक भी उदारता के इसी सिद्धान्त पर कारबन्द थे।" **(इस्लाम और रवादारी- पृष्ठ ३६)**

श्री सुन्दर लाल जी के अनुसार-

हमारे देश के एक विद्वान श्री सुन्दर लाल जी ने अपने एक लेख में ह़ज़रत की लाइफ़ में जो कल्कत्ता के हिन्दी पत्रिका विशाल भारत में प्रकाशित हुआ था, हुज़ूर-ए-अकरम की धार्मिक उदारता की प्रशंसा करते हुए लिखते हैं-

दूसरी बात यह है कि प्रशासक की ह़ैसियत से मुह़म्मद (सल्ल०) ने ग़ैर मुस्लिमों को यहाँ तक कि बुत परस्तों को भी अपनी हुकूमत के अन्दर अपने धार्मिक अनुष्ठान की पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान की है और उनकी पूजा स्थलों की सुरक्षा करना प्रत्येक मुसलमान का फ़र्ज़ क़रार दिया। ला इकराहा फ़िद्दीन अर्थात धर्म के मामले में ज़बरदस्ती नहीं होनी चाहिए। यह मदनी आयत है और मुह़म्मद (सल्ल०) की तमाम ज़िन्दगी इस आयत की जीती जागती तस्वीर है। इसके सुबूत में ईसाईयों यहूदियों और अन्य धर्मो के अनुपालकों के साथ कभी-कभी मुह़म्मद (सल्ल०) के जो समझौते हुए उनकी नक़्लें अभी तक सुरक्षित हैं।"

(विशाल भारत कलकत्ता नव १९२३ पृष्ठ ५१४)

शत्रु देश के नागरिको के अधिकार

इस्लाम ने शत्रु देश के नागरिकों को जितने भी अधिकार प्रदान किये

उसका पूरी तरह पालन किया। इतिहास में इसके अनेकों उदाहरण मिल जायेंगे लेकिन यहाँ केवल एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है जिसकी गवाही लारेन्स इ० प्राउन ने यूरोसेलम के विजय के सम्बन्ध में दी है।

"यूरोसेलम के ग़ैर मुस्लिम प्रजा को उनकी जान व माल सन्तान और पूजा स्थलों सलीबों और प्रत्येक उस वस्तु को जो कि आधिपत्य में है, संरक्षण की प्रत्याभूत दी जाती हैं उनकी ज़मीनों और उनके मज़हब में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा, उनके गिरजाघरों को न तो विध्वंस किया जायेगा और न किसी प्रकार का नुक़सान पहुँचाया जायेगा। उनके धार्मिक पूंजी और उनके सम्मान को बहाल रखा जायेगा। यूरोसेलम के लोगों को अपने धर्म के पालन में प्रत्येक प्रकार की स्वतन्त्रता होगी।

(The Eclipces of christianity in Asia by Laurance E. Brown P. 39)

(इस्लाम में रवादारी पृष्ठ ६८) विजयी क़ौम जब पराजित देशों में घुसती थी तो बर्बरता का अद्‌भुत और हृदय विदारक उदाहरण प्रस्तुत करती थी। मौलाना अबुल कलाम आज़ाद ने अपने एक लेख में इनकी तरफ़ इशारा करते हुए लिखते हैं:-

विजयी सेनाएँ-

"सिकन्दर यूनानी ने ईरान का चप्पा-चप्पा जला दिया। ईरानियों ने बाबुल में दाख़िल होकर ख़ून का सैलाब, लाशों के ढ़ेर और मुनहदिम इमारतों (ध्वस्त) के खण्डहर अपनी यादगार छोड़े और टीटस के फ़ातेह फ़ौज (विजयी सेना) जब युरोशलम में दाख़िल हुई तो वह इन्सानों का दाख़िला न था बल्कि जंगल के दरिन्दों और अज़दहों का गोल था जिसने सिर्फ़ चीरा फाड़ और ज़िन्दगी और आबादी के लिए एक गोशा भी न छोड़ा।" **(मजमउल्हलाल पृष्ठ १६५)**

स्वामी बुद्धानन्द जी के अनुसार

स्वयं हमारे देश में आर्यो के आगमन के बाद यहाँ के मूल निवासियों के साथ जो क्रूरता पूर्ण व्यवहार किया गया था वह किसी से छिपा हुआ नहीं

है। स्वामी बुद्धानन्द जी अपनी पुस्तक 'भारत के मूल निवासी और आर्य' में लिखते हैं।

"यह भी प्रकट होता है कि आर्य लोग अपने विरोधियों को किसी प्रकार का धार्मिक अधिकार देना तो दर किनार वह उनकी जड़ बुनियाद काट डालने, उनकी धन सम्पत्ति चौपायें ज़मीन छीन लेने पर सदैव तत्पर रहते थे और वह उन्हें पहाड़ों पर से ढकेलते और उनकी गर्भवती औरतों तक को मार डालते थे। वह उनके नगरों और दुर्ग को बर्बाद करते और उन्हें जला देते थे। यह सब उनकी शत्रुता के ज्वलंत उदाहरण हैं।" **(भारत के मूल निवासी और आर्य पृष्ठ ३४)**

आर्यो का बर्बरतापूर्ण व्यवहार

इन्हीं आर्यो का जब बौद्धों एवं जैनियों से साबका पड़ा तो उन्होंने इन लोगों के साथ बर्बरता पूर्ण व्यवहार किये। इस्लाम और रवादारी के लेखक ने शंकर दिग्विजय पुस्तक के हवाले से (पृष्ठ १६ पर अपनी पुस्तक में उद्धृत किया है।)

"इसके बाद उसने अपने सरकारी कर्मचारियों को वेद के विरोधियों को जान से मार देने का आदेश दिया कि हिमालय से लेकर सेतुबन्ध, रामेश्वरम तक नागरिकों और बौद्धों के जिस क़दर बच्चे बूढ़े और जवान मिलें उन सबको मार डालो और यदि कोई मेरा नौकर नस्तिकों और बौद्धों का नाश न करेगा तो ऐसी दशा में उसे भी मृत्यु दण्ड दिया जायेगा।"

इसके विपरीत इस्लाम ने सदैव उदारता का व्यवहार किया। ग़ैर मुस्लिमों पर ज़्यादती नहीं की। उन्हें विभिन्न प्रकार के अधिकार प्रदान किये। अ़रब सभ्यता के लेखक डा० गस्टावली लिखते हैं-

"मुसलमान सदैव अपने अधीनस्थ राष्ट्रों के निवासियों को धर्म के मामले में स्वतंत्र छोड़ देते थे।

एडवर्ड गिब्बन जी कहते हैं-

"इस्लाम ने किसी धर्म की समस्याओं में हस्ताक्षेप नहीं किया न किसी को

कष्ट पहुंचाया कोई धार्मिक अदालत ग़ैर मज़हब वालों को दण्ड देने के लिए स्थापित नहीं की और इस्लाम ने बलात् पूर्वक धर्म परिवर्तन की चेष्टा नहीं की इस्लाम अंगीकार करने से लोगों को विजेताओं के समान अधिकार मिल जाते थे।"

अलबत्ता ज़िम्मियों (ग़ैर-मुस्लिम प्रजा) से जिज़्या एक ऐसा टैक्स ज़रुर लिया जाता था और मुसलमानों से ज़कात ली जाती थी लेकिन यह उनकी सुरक्षा और फ़ौजी सेवा का मुआवज़ा था। ज़िम्मी से सैन्य कार्य नहीं लिये जाते थे और मुसलमान उसके लिए मजबूर थे। जुर्जान के लोगों से जो समझौता हुआ था उसके शब्द यह हैं-

"हमारे ज़िम्मे इस शर्त पर तुम्हारी हिफ़ाज़त है कि तुमको सार्मथ्य भर सालाना जिज़्या देना होगा और अगर हम तुम से मदद लेंगे तो उसके बदले में जिज़्या माफ़ कर दिया जायेगा।"

(उद्धृत अल्लामा इकबाल और कुरूने ऊला के मुसलमान मुजाहिदीन बहवाला तबरी पृष्ठ २४६८)

आज़रबाई जान के विजयोपरान्त यह समझौता किया गया-

"जो लोग किसी साल फ़ौज में काम करेंगे तो उस साल का जिज़्या उन से न लिया जायेगा।"

जिज़्या भेद-भाव के आधार पर नहीं

जिज़्या यह कर किसी भेद-भाव के आधार पर नहीं लिया जाता था। इसका उद्देश्य मात्र ग़ैर मुस्लिम प्रजा को सुरक्षा प्रदान करना था और जब कभी सुरक्षा न प्रदान कर सके या सैन्य कार्य लिया तो जिज़्या वापस कर दिया। इस वास्तविकता को स्वयं एक ईसाई इतिहासकार जनरल गिलिब ने स्वीकार किया है-

"मुझे इतिहास में ऐसी पहली घटना याद नहीं पड़ती, जबकि किसी सरकार ने पहले से वसूल किया हुआ टैक्स इस आधार पर वापस किया हो वह अपने दायित्व को निभाने और कर्तव्य पालन में असफ़ल रही है।"

"I can remember any other occasion in history when a government returned taxes already collected, on the grounds that it had failed in its obligations.

संक्षेप में मुसलमानों ने जिस देश को पराजित किया उनके साथ उदारता और सहिष्णुता से पेश आये। उनके धार्मिक अनुष्ठानों में किसी प्रकार का संशोधन नहीं किया और उन्हें विभिन्न प्रकार के अधिकार प्रदान किये। अपालो जी फ़ार मुहम्मद का लेखक गाडफ़ार हिग्गिन्स लिखता है-

"इन मुल्कों में जो खुलफ़ा जीते शान्ति प्रिय नागरिकों को चाहे वह यूनानी थे ईरानी थे, साबी थे, या हिन्दू थे, तलवार के घाट नहीं उतारा गया जैसा कि ईसाई बयान करते हैं बल्कि जब विजय प्राप्त हो गयी तो उनके माल व जायदाद को शान्ति प्रिय आधार पर उन्हीं के अधिकार में रहने दिया गया और उन्हें अपने धर्म पर बने रहने की अनुमति दी गयी। इस बदले में उनको एक टैक्स अदा करना किसी पर बोझ नहीं बनता था।" लेखक के शब्द यह हैं-

"In the countries conqueresd by the caliphs, the peace able in Labibi tants, wheather persians sabeans or hindus, were not put to the sword as the christians have sepresented, but after the conquest was terminated, were left in the peace able passession of their properties and religion, playing a tax for the enjoyment of this latter privillege, so trifling as to be an oppression to none.

(Apology for Mohammad P. 125)

जनरल सर जान गालिब अपनी जगत प्रसिद्ध पुस्तक अ़रबों की महान विजय में लिखता है-

"अ़रब विजेताओं ने पराजित क्षेत्रों के निवासियों को इस्लाम में दाख़िल करने की कोई कोशिश नहीं की।"

Arab conquerors made little or no attempt to convert the conquered population to Islam. P. 370

आस्था बदलने के लिए इस्लाम विवश नहीं करता

इस्लाम आस्था और अन्तरात्मा की स्वतन्त्रता का ध्वजारोहक है इसीलिए वह दूसरे धर्मावलम्बियों के विश्वासों में हस्तक्षेप का विरोधी हैं यद्यपि कि उसकी

दावत सम्पूर्ण संसार के लिए है लेकिन वह किसी व्यक्ति को अपना अक़ीदा तथा आस्था बदलने पर विवश नहीं करता। हाँ यह आशा अवश्य रखता है कि उसकी शिक्षाओं पर लोग चिन्तन मनन करें। उसे विश्वास है कि जो लोग सच्चे दिल से इन अनुदेशों का अध्ययन करेंगे उनके लिए इसे अंगीकार किये बिना चारा न होगा क्योंकि वह प्रकृति के अनुसार है और सद्बुद्धि उसे ग्रहण में किसी प्रकार की हिचकिचाहट अनुभव नहीं कर सकती।

जहाँ इस्लाम अन्तरात्मा की स्वतन्त्रता के सबसे बड़े शत्रु हैं क्योंकि वह जानते हैं कि लोगों को आस्था एवं कृत्य की स्वतन्त्रता दे दी गयी कि वह जो धर्म एवं जीवन-विधान चाहे अंगीकार कर लें तो इस्लाम के श्रेष्ठ तथा व्यवहारिक शिक्षाएं उन्हें अपनी तरफ़ खींच लेंगी और उनके पक्ष में सिवाय असलफ़ता तथा असन्तोश के कुछ और न आयेगा।

भाग-9

इस्लाम के विषय में विश्व प्रसिद्ध विद्वानों के विचार

इस्लाम के विषय में प्रसिद्ध विद्वानों के विचार

कुछ प्रसिद्ध विद्वानों के विचार प्रस्तुत कर रहे हैं ताकि इस्लाम के विषय में लोगों के विचारों को समझने में आसानी हो।

गाँधी जी के अनुसार इस्लाम की तलवार

मुझे पहले से अधिक विश्वास हो गया है कि यह तलवार नहीं थी, जिसने इस्लाम के लिए जगह बनाई यह पैग़म्बर की सरलता, सादगी और उनकी पूर्ण सन्मयता, अपने प्राण और बच्चों के प्रति उनका सच्चा होना, मित्रों और अनुयायियों के प्रति उनका गहरा लगाव, उनकी बहादुरी, उनकी विनम्रता, ईश्वर के प्रति उनका पूर्ण विश्वास और उनका मिशन था। वह तलवार नहीं हो सकती जो हर चीज़ उनके सामने ला देती और न हर परेशानी और अशान्ति पर तलवार से क़ाबू पाया जा सकता था। **(यंग इण्डिया १६२४)**

एडवर्ड गिब्बन जी के अनुसार इस्लाम की तलवार

ह़ज़रत मुह़म्मद के जीवन की महान सफ़लता का कारण विशुद्ध नैतिक शान्ति थी जिसमें तलवार की आघात बिल्कुल नहीं थी।

(हिस्ट्री आफ़ द सारासेनएम्पायर १८७०)

ए० एडोल्फ़ ट्रीटन जी के अनुसार इस्लाम की तलवार

'मुस्लिम सैनिक का यह चित्र कि वह अपने एक हाथ में तलवार और दूसरे हाथ में क़ुर्आन लिए हुए आगे बढ़ रहा है। एक बिल्कुल झूठा चित्र है।

(इस्लाम, लंदन, १६५१ पृष्ठ २१)

डी लेसी ओलेरी जी के अनुसार इस्लाम की तलवार

'यह दन्त कथा कि कट्टर पंथी मुसलमान विश्व में फैले और उन्होंने

तलवार की नोक पर विभिन्न जातियों को इस्लाम धर्म क़ुबूल करने पर मजबूर किया यद्यपि इतिहास ने यह दिखा दिया है लेकिन वास्तव में एक सर्वाधिक बेतुकी काल्पनिक कथा है जिसे इतिहासकार, दोहराते रहते हैं।

(इस्लाम एट क्रासरोड्स, लंदन १६२३ पृष्ठ ८)

मिसेज़ एनीबेसन्ट के अनुसार इस्लाम

"आप ज़रा हमारे पैग़म्बर का ख़याल कीजिए और इस स्थिति की कल्पना कीजिए जब केवल उनकी पत्नी ही उन पर ईमान लाई है; इसके बाद अत्यन्त निकटतम सम्बन्धी उन पर ईमान लाते हैं; इस बात से भी मुह़म्मद के विषय में कुछ-न-कुछ पता चलता है। एक ऐसे समूह में से अनुयायी प्राप्त कर लेना सहज है, जो आपको नहीं जानता जो आप में केवल प्लेटफ़ार्म ही पर देखता है, जो आपका केवल लिखा, लिखाया भाषण ही सुनता है या आप को कुछ सवालों का जवाब देने की ह़ालत में देखता है। लेकिन अपनी पत्नी, अपनी बेटी और अपने दामाद और दूसरे निकटवर्ती सम्बन्धियों की नज़रों में नबी बनना, वास्तव में नबी बनना है और यह एक ऐसी विजय है जो ह़ज़रत ईसा को भी प्राप्त नहीं हुई।"

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के चरित्र का वर्णन करते हुए मिसेज़ एनीबेसन्ट कहती हैं-

"निःसन्देह यह भद्रतापूर्ण जीवन है, एक अद्भुत और विचित्र जीवन है। वास्तव में वह ईश्वर दूत थे। लेकिन इसके बावजूद यह ऐसे मितव्ययताप्रिय, सरल और नम्र हैं कि अपने फटे हुए कपड़ों को ख़ुद ही पेवन्द लगा लेते हैं, अपने जूतों की ख़ुद मरम्मत कर लेते हैं। विशेषकर ऐसी ह़ालत में कि हज़ारों (लाखों) आदमी उन्हें नबी और रसूल कह कर उनके सामने नत्मस्तक होते थे और वह आसपास के लोगों से अत्यन्त प्रेम और नम्रता का व्यवहार करते थे। ह़ज़रत अनस जो आपके सेवक थे, कहते हैं कि-

मैं दस वर्ष आपकी सेवा में रहा। इस अवधि में कभी आपने मुझको 'उफ़' तक नहीं कहा।"

मुहम्मद (सल्ल०) के विवाह पर आक्षेप-

"आपके विरोध में दो बड़े-बड़े दोषों का आरोपण किया गया है। एक यह कि आपने बुढ़ापे में नौ शादियां कीं। यही ठीक है, लेकिन क्या आप मुझ से यह कहना चाहते हैं कि जिस शख़्स ने ठीक युवावस्था में, जबकि वह केवल २४ बरस का था, ऐसी स्त्री से विवाह किया हो, जो उससे आयु में कहीं अधिक थी और २५ बरस तक उसका विश्वासपात्र पति रहा हो। चालीस बरस की आयु में, जो काम-वासनाओं के पतन का काल है, उसने काम और इच्छाओं के प्रभाव से विवाह किये?

मानव जीवन इस मान-दण्ड से कभी परखे नहीं जा सकते। अगर आप उन स्त्रियों की अवस्था पर विचार करें, जिससे आप ने विवाह किया तो आपको ज्ञात हो जायेगा कि उनमें से या तो हर एक के द्वारा या मुसलमानों के लिए समझौता किया गया था या उनके लिये कुछ हासिल किया गया था या उस स्त्री की संरक्षण की कुछ ज़रुरत थी।

काफ़िरों को मार कर इस्लाम

लोग यह भी कहते हैं कि आपने युद्ध और काफ़िरों को मार डालने का उपदेश दिया। इसके सम्बन्ध में मुसलमान फ़क़ीहों (शास्त्र-आचार्यों) ने निर्णय कर दिया है कि जब दो आज्ञायें हों एक अबाध्य (बेशर्त) जैसे "काफ़िर को क़त्ल कर डालो।" और दूसरा बंधन पूर्ण (शर्तिया) जैसे "काफ़िर को क़त्ल कर डालो अगर वह तुम पर आक्रमण करे या तुम्हारे धर्म में बाधा डाले।"

तो ऐसी हर अबाध्य आज्ञा पर उस बन्धन या सीमा का बढ़ाना अनिवार्य है। और इस सिद्धान्त के कुर्आन शरीफ़ में बहुत से उदाहरण मिलते हैं। आप की कार्य-प्रणाली भी उसी के अनुसार थी।

अब तनिक आप की कार्य-प्रणाी को देखिए कि उन्होंने दूसरों को जो शिक्षा दी, स्वयं किस तरह उसके अनुसार व्यवहार किया। आपके साथ कोई ऐसी बुराई नहीं की गई, जिसे आपने क्षमा न कर दिया हो?

" ऐ मेरे भाइयो! इस व्यक्ति को इसी दृष्टि से देखो, जैसा वास्तव में वह है। द्वेष के पर्दे में उसे देखने का प्रयास न करो।"

(मासिक 'निज़ामुल मशायख़', दिल्ली, जमादिलऊला, १३३४ हिजरी)

मिस्टर बर्नाड शा के अनुसार

इंग्लैण्ड के विश्व विख्यात दार्शनिक और विद्वान मिस्टर बर्नार्ड शा ने जनवरी १९३३ ई० को भारतागमन के अवसर पर 'लाइट' लाहौर के प्रतिनिधि से पैग़म्बरे इस्लाम के सम्बन्ध में जो विचार प्रकट किये थे वे मिस्टर बनार्ड शा के शब्दों में ये हैं-

"मैंने हज़रत मुहम्मद की जीवनी का अध्ययन किया है, वह एक महामहिम मानव थे। मेरी राय में उन्हें मानवता का मुक्तिदाता कहना चाहिये। मुझे विश्वास है कि अगर उनके जैसा इंसान वर्तमान संसार का अधिनायक बन जाता तो उसकी सारी जटिल समस्याओं का इस प्रकार समाधान कर देता कि इंसानी दुनिया इच्छित सुख-शान्ति की दौलत से मालामाल हो जाती।"

लेन पोल जी के अनुसार

'स्पीचेज़ ऑफ़ मुहम्मद' में प्रसिद्ध इतिहासकार लीनपोल जी लिखते हैं-

"हज़रत मुहम्मद का व्यक्तित्व दया और शौर्य दोनों का संमिश्रण है, वह वर्षो तक अकेले अपने देशवासियों की शत्रुता का सामाना करते रहे। मुहम्मद इतने सुशील थे कि वह हर एक से प्रफुल्ल-मुख के साथ मिलते थे। उनकी निष्कपट मित्रता, सहानुभूति, उदार हृदयता, वीरता और शौर्य प्रशंसनीय है। जब दस हज़ार आदमियों के साथ वह मक्का में विजेता की हैसियत से दाख़िल हुये तो मुहम्मद के लिये यह समय क्रूरता दिखाने और सारी दुष्टाओं का बदला लेने का था, क्योंकि आपको सताने वाले और दुख देने वाले आपके अधिकार में थे और पूर्णरूप से उनसे प्रतिशोध लिया जा सकता था, लेकिन आपने कुरैश के सारे अपराध क्षमा कर दिये और सेना नितांत शांति पूर्वक नगर में प्रविष्ट हुई।

न कोई घर लूटा गया, न कोई स्त्री अपमानित की गई, न किसी का रक्त

बहाया गया। देश विजय के इतिहास में इस प्रकार के विजय-प्रवेश का कोई उदाहरण नहीं मिलता।"

विश्व-बन्धुत्व और मानव-समानता के संस्थापक

दिल्ली के प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता और दैनिक समाचार पत्र **'तेज़' के निर्देशक लाला देशबन्धु गुप्त जी लिखते हैं-**

"ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) एक धार्मिक नेता थे। लगभग उनका सम्पूर्ण जीवन इस्लाम-प्रचार ही में व्यतीत हुआ। इसलिए उनकी शिक्षा वास्तव में इस्लाम ही की शिक्षा है। किन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि मुसलमानों के अतिरिक्त और दूसरे लोग उनकी शिक्षा से लाभ नहीं उठा सकते। अ़रब के अर्द्ध बर्बर बद्दुओं के साथ उन्होंने जो उपकार किए हैं, उन्हें इतिहास भुला नहीं सकता। जो देश अब से डेढ़ हज़ार वर्ष पहले सभ्यता और संस्कृति के नाम से भी अनभिज्ञ था, जहां कला-कौशल की कोई पहुँच न थीं, जहां के लोगों का पेशा ही लूटमार, ह़त्या और रक्तपात था, जहां मूर्तिपूजा और अन्धविश्वासों का आधिपत्य था, वह देश आज सभ्य देशों की पंक्ति में खड़ा नज़र आता है, यह सब उन्हीं के सद्प्रयास का सद्परिणाम है।

मानव समानता-

इसके अतिरिक्त इस्लामी बन्धुत्व का उत्तम आदर्श स्थापित करके उन्होंने दुनिया में मानव-समानता के सम्मानपूर्ण भाव को प्रोत्साहन दिया और यह एक ऐसा काम था, जिससे न केवल इस्लामी देशों की कायापलट कर दी, बल्कि अन्य देशों पर भी मुख्य प्रभाव डाला।

आप (सल्ल०) की एक और महान और विशेष कृति यह है कि आपने अ़रब से दासता की मानवता विहीन प्रथा का अन्त करने में प्रगति की और इस्लाम के अनुयाइयों को उपदेश दिया कि दासों को मुक्त करना सबसे बड़ा पुण्य कार्य है।

दास को भी उच्च पद-

यह कि कोई व्यक्ति पैदाईशी दास होने के कारण धार्मिक नेता या उच्च शासक होने से वंचित नहीं किया जा सकता। अस्तु इस्लामी इतिहास साक्षी है कि कई पैदाईशी गुलामों ने 'ख़लीफ़ा' का उच्च पद प्राप्त किया और अपने सुकर्म और उत्तम गुणों के कारण अपने काल में इस्लाम का नेतृत्व किया। आज बीसवीं सदी में जबकि लगभग सारी दुनिया में 'दासप्रथा' का अन्त हो चुका है, सम्भव है यह बात साधारण मालूम हो, लेकिन अब से चौदह सौ वर्ष पहले का चित्र अपनी आँखों के सामने रखकर यदि विचार किया जाये तो मानना पड़ेगा कि यह कोई छोटा काम न था।

इसी प्रकार की कई और मुख्य कृतियाँ ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के जीवन से सम्बन्धित हैं, जिनका विस्तार पूर्वक वर्णन इस छोटे से निबन्ध में संभव नहीं है और न उसकी यहां आवश्यकता ही है। यह केवल इतना ही कह देना पर्याप्त है-

कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) संसार के उन महानतम व्यक्तियों में से एक हैं, जिनका जीवन-उद्देश्य मानव-जाति को सत्यमार्ग दिखाना होता है। ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) को अपने उद्देश्य मानव-जाति में जितनी सफ़लता मिली, वह इसलिए और भी अधिक प्रशंसनीय है कि उन्हें अ़रब की मरुभूमि को, जहाँ इस्लामी जीवन के लिए आवश्यक आरम्भिक साधन को भी एकत्र नहीं थे, अपना कार्य-क्षेत्र बनाना पड़ा और उस अर्द्ध बर्बर जाति में काम करना पड़ा, जो अशिक्षित प्रकाशहीन एवं नैतिकता और सत्यता से सर्वथा अनभिज्ञ थी।"

('तर्जुमान' बनारस १६ जुलाई १६३३)

मिस्टर देवदास गाँधी जी के अनुसार इस्लाम

मिस्टर देवदास गाँधी, जो दिवंगत महात्मा गाँधी के कनिष्ठ पुत्र थे, अपने एक निबन्ध में लिखते हैं-

"एक महान शक्तिशाली सूर्य के समान ईश्वर दूत ह़ज़रत मुह़म्मद

(सल्ल०) ने अ़रब की मरुभूमि को उस समय रौशन किया, जब मानव-संसार घोर अन्धकार में लीन था और जब आप इस दुनिया से विदा हुए तो आप अपना सब काम पूर्ण रूप से पूरा कर चुके थे, वह पवित्रम काम जिससे दुनिया को स्थायी लाभ पहुँचने वाला था।

दुनिया के सच्चे पथ-प्रदर्शक बहुत थोड़े हुए हैं और उनके युगों में एक-दूसरे से बहुत अन्तर रहा है और वे लोग कि जिन्होंने मुह़म्मद (सल्ल०) के जीवन चरित्र का अध्ययन उसी श्रद्धा के साथ किया है, जिसके वे अधिकारी हैं। इस बात के मानने पर बाध्य हैं कि आप महान धर्म उपदेशकों में से एक थे। आपकी महानता और गुरुता में उस समय और भी वृद्धि हो जाती है, जबकि आपका चित्र खींचते वक़्त हम उस नितांत आध्यात्मिक और नैतिक ह्रास की पृष्ठभूमि पर भी दृष्टि रखें, जो आपके जन्म के समय अ़रब में विद्यमान थीं।

मुह़म्मद (सल्ल०) एक सभ्य और उन्नतिशील वातावरण की पैदावार न थे। आपके समय में एक आदमी भी ऐसा न था, जिससे आप ब्रह्मवाद की शिक्षा ग्रहण करते, उस काल में ईश्वरीय धर्म के लिए तो अ़रब की जगह ही न थी, वह देश अपने अंधकारमय काल से गुज़र रहा था। जब ख़राबी और पतन अपनी सीमा को पहुँच गया तो उस समय आप ईशवरीय अनुकम्पा बनकर उदित हुए। ऐसी देशा में यदि उन्हें 'रह़मतुललिल् आ़लमीन' (संसार के लिए दया-निधि) की पदवी दी जाती है, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है?

मुह़म्मद (सल्ल०) का जीवन-

मुह़म्मद साह़ब का सम्बन्ध किसी धनी परिवार से न था। आपके माता-पिता धनहीन लोग थे और आपको आध्यात्मिक प्रधानता भी विरासत में न मिली थी। आपका जन्म एक ऐसे परिवार में हुआ जिसे धन की दृष्टि से कोई महत्व प्राप्त न था और आपके जीवन में मेरे लिए जो बात सबसे अधिक मनोहर है वह यही है कि और बहुत से महान व्यक्तियों की तरह आपका आविर्भाव उस वर्ग में हुआ जिसे साधारण वर्ग कहा जाता है। आपने एक मामूली व्यापारी और बकरियाँ चराने वाले का जीवन व्यतीत किया।

मुह़म्मद (सल्ल०) की सबसे पहली विशेषता, जिसने लोगों का दिल मोह लिया, आपकी ईमानदारी थी।

आपकी ईमानदारी-

आपकी ईमानदारी आपकी इस विशेषता ने आपको 'अल्अमीन' (धरोहर रक्षक) का ईर्ष्याजनक पद दिलवा दिया था, जिसका अर्थ ईमानदार और सच्चे के हैं। सच्चाई और सत्यता पर आपका ईमान था और आपके जीवन के हर विभाग में इसकी ज्योति नज़र आती है।

किसी दशा में भी आप सच्चाई के विरुद्ध कोई बात सहन न कर सकते थे। अच्छे उद्देश्य से भी आप सत्य और न्याय के विपरीत कोई कार्य पसन्द न करते। इसका उज्जवल उदाहरण बद्र-युद्ध की इस घटना में देखा जा सकता है।
आपके दुश्मन क़बीलों ने आपके दो साथियों को पकड़ लिया और यह प्रतिज्ञा लेकर छोड़ दिया कि वे अल्लाह के रसूल के साथ होकर क़ुरैश से युद्ध न करेंगे; बद्र की लड़ाई में शत्रुओं की संख्या आपसे बहुत अधिक थी और एक आदमी की कमी या ज़्यादती भी आपकी जंगी ह़ालत पर असर डाल सकती थी, लेकिन इतनी अधिक आवश्यकता और उन लोगों की नम्र प्रार्थनाओं के बावजूद आपने इसे पसन्द न किया कि वह अपनी प्रतिज्ञा तोड़कर लड़ाई में आपका साथ दें।

सामायिक लाभ-प्राप्ति के सिद्धान्त की आपकी दृष्टि में कोई महत्व न था। आपने जांनिसार साथियों को उनकी हार्दिक आकांक्षा-पूर्ति से वंचित रखने में आपको अवश्य नितांज दुख हुआ होगा। लेकिन सत्य और न्याय के लिए इसे सहन किया गया। हर दशा और हर ह़ालत में एक नैतिक नियम का पालन अनिवार्य था, चाहे उसके कारण हृदय का कितना ही कष्ट पहुँचे, क्योंकि आवश्यक था कि जिस उच्च नैतिक आदर्श की ओर पैग़म्बर अपनी जाति को बुलाना चाहता था, पहले स्वयं उस पर चलकर दिखा देता। सच यह है कि आपने उदाहरण प्रस्तुत करने में तनिक भी संकोच नहीं दिया।

पहले स्वंय कर के दिखाते-

आपकी आदर्श जीवनी हमें बताती है कि आपने अपने उपदेश और प्रचार

का जीवन भर यही नियम रखा कि जो कुछ अपने अनुयाइयों को सिखाना चाहते थे, पहले वह सब कुछ स्वयं करके दिखा दिया और कभी किसी ऐसे कार्य की शिक्षा न दी जिसका उदाहरण आपने उपस्थित न कर दिया हो।

आपकी सादगी-

आपके पवित्र जीवन में उस समय भी किसी प्रकार का कोई अन्तर नहीं आया, जबकि आप पैग़म्बर के पद पर शोभायमान हो गये। आपने सम्पूर्ण जीवन उसी सरलता और सादगी से व्यतीत किया। सांसारिक सुख और जीवन के भोग-विलास उस समय भी आपको अपनी ओर आकर्षित न कर सके, जब एक से अधिक साम्राज्यों का धन आपके चरणों में अर्पित हो रहा था। आप का भोजन बहुत ही सादा और थोड़ा होता था और उसे भी केवल इसलिए खाते थे कि जीवित रह सकें।

चटाइयाँ और टाट आपके बिस्तर थे और इसी तरह पहनने के कपड़े भी बहुत साधारण होते थे। आपने कभी किसी को कटु वचन नहीं कहा, यहां तक कि लड़ाई के अवसर पर भी दुश्मनों के साथ आपका स्वर कोमल होता था। सत्य यह है कि आपको अपनी इच्छाओं और मनोभावों का पूरा-पूरा संयम प्राप्त था। गीता में कर्मयोगी के जो गुण बताये गये हैं, वे सबके सब आप में पूर्णतया मौजूद थे। आप अपने अप्रिय कर्तव्यों को भी सच्चे ईमान और सच्ची वीरता के साथ पूर्ण किया करते थे और इच्छाएँ या घमण्ड कभी आपके पगों में कम्पन नहीं डाल सकता था।

कर्मयोगी-

कर्मयोगी उस व्यक्ति को कहते हैं जो अपने उत्तम विचारों को भी कार्य रूप में परिणित कर दे और मुहम्मद साहब एक ऐसे ही व्यक्ति थे। एक नश्वर मनुष्य होते हुए भी आप अलौकिक गुण रखते थे। सुख-दुख, हर्ष, लोभ, जिनके प्रभावों के अन्तर्गत हम साधारण मनुष्यों के जीवन व्यतीत होते हैं और जो वास्तव में हमारे जीवन में क्रान्ति उत्पन्न कर देते हैं, उनसे यह पवित्रतम और महान आत्मा कभी प्रभावित न होती थी।

आपका जीवन गीता की इस प्रशंसा का बिल्कुल ठीक नमूना था, जो

पैग़म्बरों और अवतारों के लिए की गई है 'वह उस स्थान पर पहुँच जाता है, जहाँ समस्त इच्छाएँ इस प्रकार उसकी ओर बहती हैं, जिस प्रकार नदियाँ समुद्र की ओर बहती हैं, जो यद्यपि जल से पूर्ण होता है, किन्तु ये नदियां उसमें ज़रा-सा भी प्रकंपन नहीं उत्पन्न कर सकतीं। वह ऐसा नहीं होता कि इच्छाओं से प्रभावित होकर इच्छा करने लगे, उसके समस्त कार्य लोभ और नाम के सांचे से स्वतंत्र होते हैं और उसके कार्यो को ज्ञान की ज्वाला तपाकर कुन्दल बना देती है।

(गीता)

जो लोग समाज की वर्तमान व्यवस्था और प्रणाली को परिवर्तित करने में लगे हुए है और चाहते हैं कि इससे अच्छे समाज को जन्म दें, उनके दिलों पर जिस बात का गहरा प्रभाव पड़ेगा वह पैग़म्बर साहब का वह उच्च आदर्श है जिसे उन्होंने मेहनत मज़दूरी के सम्बन्ध में क़ायम किया। इस ईशदूत ने ऐसे बहुत से अनुकरणीय उदाहरण उपस्थित किए हैं, जिन्हें लोगों ने भुला दिया है।

आप अपना काम ख़ुद करते-

आप अपने कपड़ों की स्वयं मरम्मत करते थे। यही नहीं, बल्कि अपने जूते भी ख़ुद ही टांकते थे। आप घर के काम-काज में प्रायः अपने सेवकों की सहायता करते थे। मस्जिद के निर्माण में अपने मज़दूरों के साथ बराबर काम किया है। मज़दूरों के साथ काम करते वक़्त आप उसमें इस प्रकार घुल-मिल जाते थे कि कोई उन्हें पहचान न सकता था।

बच्चों से प्रेम-

बच्चों से आपको विशेष लगाव था और उनके साथ आप बहुत प्रसन्न रहते थे। वे सौभाग्यशाली बच्चे जो आपके जीवन-काल में थे और जिन्हें आपका प्रेम प्राप्त रहा अपने घरों में इतने प्रसन्न नहीं रहते थे जितना आपके साथ! बच्चों के सहयर्च में उठना-बैठना आपके लिए कोई इत्तेफ़ाक़ी बात न थी, बल्कि यह आपका नियम और कार्यक्रम था कि बच्चों को ढूंढ कर उनके साथ हो जाते और अपने उत्तम विचार उनके मस्तिष्कों में अर्पित कर देते। क्या शिक्षा और

उपदेश को इससे अधिक स्वभाविक और सरल ढंग कोई और हो सकता है।

दयालुता–

पैग़म्बर साहब के जीवन का महत्वपूर्ण विषय आपकी दयालुता और क्षमा-भाव था, जो उन लोगों के लिए भी आम था जिन्होंने आपको यातनायें दीं, कष्ट पहुँचाये, विभिन्न प्रकार के दण्ड दिए, यहां तक कि आपको क़त्ल कर देने के ऐसे-ऐसे तरीक़े अपनाये जिन्हें सुनकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। लेकिन आपने उन समस्त विरोधों को शान्ति के साथ सहन किया।

आपका सदा यह विश्वास रहा कि इस प्रकार कष्ट सहन करके आप उस महान उद्देश्य की पूर्ति कर रहे हैं, जो आपके सुपुर्द किया गया था। यह ख़याल कि आपकी यह सहन-शीलता और शान्ति-धारण, साहस और वीरता की कमी के कारण था। इसलिए तुच्छ और अस्वीकार्य मालूम होता है कि एक से अधिक अवसरों पर नियमित युद्धों में, जिनके लड़ने पर आपको बाध्य किया गया, आपने असीम साहस और वीरता का परिचय दिया है।

जीवन के हर अवसर पर जब मामूली इन्सान अपनी कमज़ोरी, ज़ाहिर कर देता है, परन्तु आप अलौकिक साहस के साथ उठे और पथभ्रष्ट अ़रबों को कल्याण-मार्ग दिखाया। यह सच है कि आप एक इन्सान थे। मुसलमान आपको इन्सान ही समझते हैं, ख़ुदा नहीं। बल्कि मानव-जाति का एक व्यक्ति समझते हैं।

वस्तुतः आप इन्सान ही थे। लेकिन हमें यह ज़रुर समझ लेना चाहिए कि आप एक ऐसे इन्सान थे जैसा कि वास्तव में एक इन्सान को होना चाहिए या जैसा कि ईश्वर ने हमें बनाना पसन्द किया था, न कि एक ऐसा इन्सान जैसा कि हम सब हैं।

तेरह सौ वर्ष पूर्व के इस महामानव के चरणों में आज भी संसार के विभिन्न भागों में करोड़ों मनुष्य श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। मानवता का यह पूर्णतम आदर्श एक प्रकाशमान सूर्य की भांति इस लोक में आया था और अपने करोड़ों प्रेमियों के हृदयों में सूर्य ही के समान सदा प्रकाशमान रहेगा।"

(मासिक 'पेशवा' दिल्ली जुलाई १९३१ ई०)

प्रोफ़ेसर टी० डब्लू० अर्नाल्ड के अनुसार

प्रोफ़ेसर टी० डब्लू० अर्नाल्ड ने किताब तस्नीफ़ की जिस तम्हीदी बाब में प्रोफ़ेसर मौसूफ़ ने इस बात का एतिराफ़ किया है कि यह किताब हर्फ़ अन तब्लीग़ी मसाअ़ी की तारीख़ है जो इस्लाम की इशाअ़त के लिए की गई हैं इस में जब्र व इकरह का कोई ज़िक्र नहीं है। अतः प्रोफ़ेसर साहब इस्लाम के प्रचार व प्रसार का माध्यम बयान करते हुए लिखते हैंः

"पूरे ज़मीन के इस क़दर वसीअ़ हिस्से में इस्लाम ने जो इशाअ़त पाई है उसके लिए समाजी, सियासी और मज़हबी अस्बाब हैं, मगर सब से क़ौमी सबब इस अ़ज़ीमुश्शान कामियाबी का यह है कि मुसलमान मुबल्लिग़ीन ने इस बारे में बेइन्तिहा कोशिशें की हैं। रसूल (सल्ल०) का जीवन उनके सामने था अतः उन्होंने कुफ़्फ़ार और मुश्रिकीन को दायरे इस्लाम में लड़ने के लिए अपनी कुव्वतों को पूरी तरह झोंक दिया।

(दअ़वते इस्लाम पेज नं०-७)

"कुर्आन में कहीं ऐसी आयात नहीं कि किसी को किसी तरह जबरी तब्दील-ए-मज़हब का हुक्म दिया जाए। **(दअ़वते इस्लाम- ४२४)**

डेविड पोर्ट के अनुसार इस्लाम

मिस्टर डेविड पोर्ट लिखते हैंः

यह ख़याल करना बहुत भारी ग़लती होगा जो बाज़ कर चुके हैं और बाज़ अब भी कर रहे हैं कि वह मज़हब जिसकी तअ़लीम कुर्आन ने दी है वह तलवार के बलबूते पर फैला। क्योंकि यह तमाम बात ग़ैर मुअ़तसब बड़ी जल्दी मान जाएँगे कि मुहम्मद (सल्ल०) का मज़हब जिसके ज़रिए से इन्सानों की ख़ूनरेज़ी की जगह नमाज़ों और ख़ैरात व ज़कात ने ले ली थी और जिस ने रिक़ाबत और मुसल्सल क़बाईली जंगों के बजाए फ़य्याज़ी और समाजी ख़िदमते ख़ल्क़ की तअ़लीम देकर एक नई रुह़ फूंकी थी। और ज़रुरी है कि इन वुजूहात की बिना पर उनकी तहज़ीब पर अहम असर पड़ा। यह मशरिक़ी दुनिया के लिए ह़क़ीक़ी माने हैं फ़ज़्ल

व करम का बाएस बना और नतीजा आगे यह ज़रुरत कभी नहीं पड़ी कि वह ख़ूनी ज़राए इस्तेमाल करता। देखें-

(Apology For Mohammad and The Koran)

योरोपी प्रसिद्ध इतिहासकार फ़न ले के अनुसार

योरोप का प्रसिद्ध इतिहासकार फ़न ले लिखता है-

"इस्लाम का अ़ज़ीमुश्शान उ़रुज तलवार के ज़रिए नहीं हुआ बल्कि उसकी रवादारी और समानता की बदौलत क़रीब-क़रीब हर मौक़े पर अ़रबों ने किसी ईसाई सल्तनत को फ़तेह़ किया तो तारीख़ इस बात का सुबूत देती है उनकी फ़तेह़ ग़रीब मफ़तूह़ अ़वाम में उनके उसूलों की हर दिल अ़ज़ीज़ी की वजह से हुई।

अहले शाम ने मुसलमानों का ख़ैर मक़दम किया। मिस्र के क़िब्ती बाशिन्दों ने अपने मुल्क को हमला आवरों के ह़वाले किया। ईसाई बर्बरियों ने अफ़्रीका की फ़तेह़ में मुसलमानों का साथ दिया। **(तारीख़ सल्तनत- बाज़ नतीनी)**

विश्व प्रसिद्ध इतिहासकार ग़िब्बन के अनुसार

दीगर तमाम मज़ाहिब को तलवार के ज़रिए ख़त्म कर देने का तबाहकुन और नुक़सानदेह उसूल मुसलमानों पर आरोप है। गिब्बन कहते हैं कि जिहालत और तंग नज़री के कारण यह इल्ज़ाम कुर्आन करीम ने रद्द कर दिया। ख़ुद मुस्लिम फ़ातिह़ीन की तारीख़ ने भी इसे रद्द कर दिया।

(मुह़म्मद (सल्ल०) पैग़म्बरे इस्लाम, रामा कृष्ण राव)

काँट हेनरी दी कास्तरी (प्रसिद्ध फ़्रांसीसी शोधकर्ता)

फ़्रांस का प्रसिद्ध फ़ासिल कांट हेनरी दी का सत्री अपनी किताब "Al Islam" में (जो इस फ़्रेंची ज़बान में लिखी थी और जिस का तर्जुमा मिस्र के आ़लिम अह़मद फ़तह़ी एक ज़िग़लोल ने करके १८५८ ई० में शाया किया) लिखा है! "कोई शख़्स तलवार या ज़बान के ज़रिए इस्लाम क़ुबूल करने पर मजबूर नहीं किया गया बल्कि इस्लाम ने ख़ुद लोगों के दिलों में घर कर लिया और यह इस

बात का नतीजा है जो कुर्आन की दिलआवेज़ और फ़राख़दिली की शान है।

जार्ज सेल (अनुवादक कुर्आन) के अनुसार

जार्ज सेल अपने अंग्रेज़ी तर्जुमा कुर्आन के नोट में लिखा है कि वह अस्बाब को तलाश करना नहीं चाहेगा जिनकी वजह से मुह़म्मद (सल्ल०) की शरीअ़त की बढ़ौतरी हुई और जो दुनिया में बेमिसाल है। मगर यह वाक़िया है कि यह हुई और अब तो उनकी आंखों से भी पर्दा उठ गया जिनको यह याद कराया जाता था कि इस्लाम तलवार के ज़रिए फैला।

इस मज़हब को उन कुव्वतों ने बेमिसाल क़ुबूल किया जिनको मुह़म्मद (सल्ल०) की कुव्वत से कभी वास्ता नहीं पड़ा और वह लोग भी दायरे इस्लाम में दाख़िल हुए जिन्होंने अ़रबों को उनके फ़ुतूह़ात से मह़रूम किया और उनके ख़ुलफ़ा की बालादस्ती को ख़त्म किया। इस मज़हब के बारे में जो कुछ भी कहा जाए मगर यह ह़क़ीक़त है कि इस का फ़रोग़ ह़ैरत अंगेज़ तरीक़े पर हुआ।

एच० जी० वेल्ज़ के अनुसार इस्लाम

एच० जी० वेल्ज़ इस्लाम और पैग़म्बरे इस्लाम (सल्ल०) का मुन्किर है। लेकिन इशाअ़ते इस्लाम की तरक़्क़ी का तजज़िया करने में उसको लिखना पड़ा कि यह एक नाक़ाबिल इन्कार ह़क़ीक़त है कि इस्लाम में बहुत ही उ़म्दह और आ़ला तअ़लीमात हैं।

जब इसकी तब्लीग़ शुरु हुई तो मुआ़शरा में ज़ुल्म व सितम का दौर दौरा था, जिस से सोसाईटी दब कर रह गई थी। इस्लाम ने एक ऐसा मुआ़शरती निज़ाम पेश किया जिस से मुआ़शरती सितम आराई ख़त्म हो गई। इस्लाम के मुआ़शरे में लुत्फ़, मेहर और मुह़ब्बत है यही एक तन्हा ख़ुसूसियत नहीं बल्कि कुर्आन के ज़रिए से उस ने तौह़ीद को जिस प्रकार पेश किया वह यहूदियों से बिल्कुल मुख़्तलिफ़ था, ईसाईयत ने इस को इतना गुन्जल्क बना दिया कि न सिर्फ़ इस में मतभेद पैदा हो गया बल्कि ह़ज़रत ईसा की तअ़लीमात की स्प्रिट जाती रही। **(इस्लाम की रवादारी, सबाहुद्दीन अ़ब्दुर्रह़मान पेज नं० १ व २)**

भाग-10

ग़ैर मुस्लिमों से दोस्ती या दुश्मनी कुर्आन की दृष्टि में

ग़ैर मुस्लिमों से दोस्ती या दुश्मनी कुर्आन की दृष्टि में

कुछ लोग बाज़ कुर्आनी आयात और बाज़ अहादीस के ह़क़ीक़ी मानों पर ग़ौर किये और समझे बिना किसी शब्द को लेकर यह ग़लत फ़हमी फैलाने लगते हैं कि इस्लाम ग़ैर मुस्लिमों के ख़िलाफ़ तअ़स्सुब से काम लेता है ख़ासतौर पर कुर्आन की इन आयतों को मिसाल के तौर पर पेश किया जाता है जिन में ग़ैर मुस्लिमों से दोस्ती न करने पर ज़ोर दिया गया है।

मोमिनों को छोड़कर दोस्ती

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۚ اَتُرِيْدُوْنَ اَنْ تَجْعَلُوْا لِلّٰهِ عَلَيْكُمْ سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ۔

(अन्निसा १४४)

لَا يَتَّخِذِ الْمُؤْمِنُوْنَ الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۚ وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ فَلَيْسَ مِنَ اللّٰهِ فِيْ شَيْءٍ اِلَّآ اَنْ تَتَّقُوْا مِنْهُمْ تُقٰىةً ۔ وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهٗ ۔ وَاِلَى اللّٰهِ الْمَصِيْرُ ۝

(सूरः आले इमरान ३८)

"ऐ ईमान वालो!" मोमिनों को छोड़ कर काफ़िरों (इन्कारियों) को दोस्त मत बनाओ; क्या तुम चाहते हो कि अपने ऊपर अल्लाह की खुली दलील (स्पष्ट तर्क) जुटाओ?

ईमान वालों को चाहिए, कि वे ईमान वालों के सिवा काफ़िरों (इन्कार करने वालों) को दोस्त (राज़दार) न बनाएँ; और जो ऐसा करेगा, उससे अल्लाह का कोई सम्बन्ध नहीं, हाँ, अगर इस तरीक़े से तुम उन (की बुराई) से बचाव की शक्ल निकालो, (तो हरज नहीं) और अल्लाह तुम को अपने से डराता है,

और अल्लाह ही की ओर (तुम को) लौट कर जाना है।

इ़ज़्ज़त का देने वाला अल्लाह

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है,

بَشِّرِ الْمُنٰفِقِيْنَ بِاَنَّ لَهُمْ عَذَابًا اَلِيْمَا ۙ الَّذِيْنَ يَتَّخِذُوْنَ الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۭ اَيَبْتَغُوْنَ عِنْدَهُمُ الْعِزَّةَ فَاِنَّ الْعِزَّةَ لِلّٰهِ جَمِيْعًا ۝

(सूरः निसा १३८-१३९)

"मुनाफ़िक़ों (कप्टाचारियों) को खुशख़बरी सुना दीजिए "कि उनके लिए दुःख देने वाला अ़ज़ाब है"

जो ईमान वालों को छोड़ कर काफ़िरों को अपना दोस्त (राज़दार) बनाते हैं, क्या यह उनके पास इ़ज़्ज़त तलाश रहे हैं? इ़ज़्ज़त तो सारी की सारी अल्लाह ही के लिए है।"

युद्ध के आदेश के बाद सतर्कता

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है,

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الْيَهُوْدَ وَالنَّصٰرٰٓى اَوْلِيَآءَ ۘ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ۭ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاِنَّهٗ مِنْهُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ۝ فَتَرَى الَّذِيْنَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ يُّسَارِعُوْنَ فِيْهِمْ يَقُوْلُوْنَ نَخْشٰٓى اَنْ تُصِيْبَنَا دَاۗىِٕرَةٌ ۭ فَعَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّاْتِيَ بِالْفَتْحِ اَوْ اَمْرٍ مِّنْ عِنْدِهٖ فَيُصْبِحُوْا عَلٰي مَآ اَسَرُّوْا فِيْٓ اَنْفُسِهِمْ نٰدِمِيْنَ ۝

(सूरः अल् माइदः ५१-५२)

ऐ ईमान वालो! तुम यहूद और नसारा (ईसाइयों) को अपना दोस्त न बनाओ, ये आपस में एक-दूसरे के दोस्त हैं, और जो व्यक्ति उन्हें अपना दोस्त बनाएगा, वह उन्हीं लोगों में से होगा, बेशक अल्लाह ज़ालिमों को हिदायत नहीं देता;

तो तुम देखते हो कि जिन लोगों के दिलों में रोग है, वह उनमें दौड़-दौड़ कर मिल जाते हैं; कहते हैं, "हमें डर है कि हम कहीं किसी मुसीबत में न पड़ जाएँ," तो

उम्मीद है कि अल्लाह जल्द ही फ़त्ह़ (विजय) दे या अपनी ओर से कोई हुक्म दे, तो यह लोग जो कुछ अपने जी में छिपाये हुए हैं, उस पर शर्मिन्दा होंगे;

बिना भेद-भाव सत्य के साथ

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है,

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوْٓا اٰبَآءَكُمْ وَ اِخْوَانَكُمْ اَوْلِيَآءَ اِنِ اسْتَحَبُّوا الْكُفْرَ عَلَى الْاِيْمَانِ ؕ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝

ऐ ईमान वालो! अगर तुम्हारे (माँ) बाप और (बहन) भाई ईमान के मुक़ाबले में कुफ़्र को पसंद करें, तो उनसे दोस्ती (राज़दार) न रखो, और तुममें से जो उन से दोस्ती रखेगा तो ऐसे ही लोग ज़ालिम हैं। **(सूरः अत्तौबः २३)**

जुल्म के ख़िलाफ़

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है,

لَا تَجِدُ قَوْمًا يُّؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ يُوَآدُّوْنَ مَنْ حَآدَّ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَلَوْ كَانُوْٓا اٰبَآءَهُمْ اَوْ اَبْنَآءَهُمْ اَوْ اِخْوَانَهُمْ اَوْ عَشِيْرَتَهُمْ ؕ

(सूरः अल् मुजादलाः २२)

"तुम उन लागों को ऐसा कभी नहीं पाओगे, जो अल्लाह और अन्तिम दिन (क़ियामत) पर ईमान रखते हैं, कि वे उन लोगों से मुहब्बत करते हों जिन्होंने अल्लाह और उसके रसूल का विरोध किया हो, चाहे वे उनके बाप या बेटे, या भाई, या उनके खानदान के लोग हों;"

इस आयत में मुश्रिकीन के साथ दोस्ती (अर्थात भेदी बनाने) की मुमानिअ़त इसलिए की गई है कि कुफ़्फ़ार मुश्रिकीन ने रसूलुल्लाह (सल्ल०) और मोमिनीन को उन के वतन से नाह़क़ निकाला था।

दोस्ती उन से नहीं जो ज़ालिम हैं

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है,

اِنَّمَا يَنْهٰىكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِيْنَ قٰتَلُوْكُمْ فِى الدِّيْنِ وَاَخْرَجُوْكُمْ مِّنْ دِيَارِكُمْ وَ ظٰهَرُوْا عَلٰٓى اِخْرَاجِكُمْ اَنْ تَوَلَّوْهُمْ ۚ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝

(सूरः मुम्तहिना-९)

अल्लाह तो तुम्हें केवल उन्हीं लोगों से दोस्ती करने से रोकता है, जिन्होंने दीन के मामले में तुमसे जंग की, और तुम को तुम्हारे अपने घरों से निकाला और तुम्हारे निकालने में औरों की मदद की, और जो लोग उनसे दोस्ती करेंगे, वही ज़ालिम हैं।

इस तरह की आयात से कुछ लोग यह मतलब निकालने की कोशिश करते हैं कि इस्लाम ने ग़ैर मुस्लिमों के साथ सम्बन्ध न रखने और नफ़रत व नापसंदीदगी की दअ़वत दी है चाहे यह ग़ैर मुस्लिम उन के साथ रहने वाले और उन के साथ मुख़्लिस ही क्यों न हों। लेकिन जो भी इस तरह की आयतों पर गहराई से ग़ौर करेगा और इन आयतों के नाज़िल होने के कारणों पर ग़ौर करेगा उस पर यह बात साफ़ हो जाएगी।

क़ुर्आन की हर आयत के नाज़िल होने के समय को भी ध्यान में रखना अनिवार्य होता है कि यह बात किस भाव में कही गई है। जब तक यह मालूम न होगा उस वक़्त तक किसी आयत का सही अनुवाद समझना आसान नहीं होता। जैसा कि हम पहले बता चुके हैं।

अम्न पसन्द ग़ैर मुस्लिमों से नहीं-

ऊपर की इन आयतों में भी अल्लाह तआ़ला ने जिस दोस्ती(भेदी बनाने) से मना किया है वह उन लोगों के साथ है जिन्होंने अल्लाह और उस के रसूल से दुश्मनी मोल ली और मुसलमानों को तकलीफ़ पहुँचाते रहे। अम्न पसन्द ग़ैर मुस्लिमों के साथ नहीं। जैसा कि नीचे दी गई आयतों से स्पष्ट होता है।

अल्लाह और रसूल के दुश्मन

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

لَا تَجِدُ قَوْمًا يُّؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ يُوَآدُّوْنَ مَنْ حَآدَّ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ

(सूरः मुजादला २२)

"तुम उन लागों को ऐसा कभी नहीं पाओगे, जो अल्लाह और अन्तिम दिन (क़ियामत) पर ईमान रखते हैं, कि वे उन लोगों से मुह़ब्बत करते हों जिन्होंने अल्लाह और उसके रसूल का विरोध किया हो,"

ज़ाहिर है कि अल्लाह और उस के रसूल (सल्ल०) के साथ दुश्मनी का मतलब केवल उन्हें न मानना नहीं है बल्कि उन के साथ विरोध करना है, उन की राह में रुकावट डालना और उस के मानने वालों की कष्ट पहुँचाना है।

ग़ैर मुस्लिमों के साथ इन्साफ़ का हुक्म

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

لَا يَنْهٰىكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِيْنَ لَمْ يُقَاتِلُوْكُمْ فِي الدِّيْنِ وَلَمْ يُخْرِجُوْكُمْ مِّنْ دِيَارِكُمْ اَنْ تَبَرُّوْهُمْ وَتُقْسِطُوْٓا اِلَيْهِمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُقْسِطِيْنَ ۝

"अल्लाह तुम्हें उनके साथ अच्छा व्यवहार और इन्साफ करने से नहीं रोकता, जिन्होंने दीन के मामले में तुम से जंग नहीं की, और न तुम्हें तुम्हारे घरों से निकाला, अल्लाह इन्साफ़ करने वालों को पसंद करता है।"

केवल जंग करने वालों से दुश्मनी-

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

اِنَّمَا يَنْهٰىكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِيْنَ قٰتَلُوْكُمْ فِي الدِّيْنِ وَاَخْرَجُوْكُمْ مِّنْ دِيَارِكُمْ وَ ظٰهَرُوْا عَلٰٓى

अल्लाह तो तुम्हें केवल उन्हीं लोगों से दोस्ती करने से रोकता है, जिन्होंने दीन के मामले में तुमसे जंग की, और तुम को

اِخْرَاجِكُمْ اَنْ تَوَلَّوْهُمْ ۚ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ۝

(सूरः मुम्तहिना-६)

तुम्हारे अपने घरों से निकाला और तुम्हारे निकालने में औरों की मदद की, और जो लोग उनसे दोस्ती करेंगे, वही ज़ालिम हैं।

ऊपर की आयतों का सम्बन्ध मक्का निवासियों से है जो मदीने पर आक्रमण कर रहे थे और युद्ध की स्थिति उत्पन्न हो चुकी थी जो मुसलमान मक्का त्याग करके मदीना चले आये थे उनमें से कुछ के सम्बन्धी मक्का में रह गये थे, मदीने के ऐसे ही मुसलमानों के सम्बन्ध में यह आयत है जिसकी व्याख्या इस प्रकार है।

"चूंकि अब निर्णय का समय आ गया है इसलिए इस्लाम के अनुयाईयों को सम्बोधित करके कहा गया है कि वह कार्यरत हो जाएँ और दुर्बलता न दिखाएँ इस सन्दर्भ में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अपने व्यक्तिगत सम्बन्धों को सामूहिक सम्बन्धों पर प्रधानता न दें तथा शत्रुओं को अपना सहायक और मित्र न बनायें।

युद्ध क्षेत्र गर्म हो चुका है, मित्र और शत्रु की दो पंक्तियां अलग-अलग खड़ी हो गई हैं, अतः हर व्यक्ति के लिए आवश्यक है कि अपने लिए कोई पंक्ति का चुनाव कर ले और जिसे ग्रहण कर ले उसका हो रहे यह न हो कि एक का होकर दूसरे से भी गुप्त सम्बन्ध रखे।

पवित्र कुर्आन की आयतों का उद्देश्य

पवित्र कुर्आन में जिहाद की या ग़ैर मुस्लिमों से दोस्ती न करने की जितनी आयतें हैं, जितने आदेश और जितनी आज्ञाएँ हैं, वह सब उन्हीं बहुदेव वादियों, ग़ैर मुस्लिमों से सम्बन्धित हैं जो इस्लाम के शत्रु हों इस्लाम के प्रसार में बाधक हों और इस्लाम को समाप्त कर देना चाहते हों।

ऊपर की इन आयतों पर आक्षेप किया जाता है, परन्तु इनको इस परिस्थिति में रखकर मान्य पाठक देखें, जिसमें यह उतरीं और न्याय करें कि क्या कोई आदेश या आज्ञा भी ऐसे शत्रुओं के प्रति अनुचित है?

कुर्आन का आदेश तमाम इन्सानों के ह़ित में

कुछ संस्थाओं और लोगों ने यह झूठा प्रचार किया है और निरन्तर किए जा

रहे हैं कि कुर्आन ग़ैर-मुस्लिमों को सहन नहीं करता। उन्हें मार डालने और जड़ से ख़त्म कर देने की शिक्षा देता है।

ज़मीन पर फ़साद न मचाओ

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है

وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ لَا تُفْسِدُوا فِي الْأَرْضِ

अनुवाद-

"ज़मीन (मुल्क) में फ़साद न मचाओ।" (सूरः बकरः-११)

अल्लाह फ़साद करने वालों को पसंद नहीं करता

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता हैः

وَابْتَغِ فِيمَا آتَاكَ اللَّهُ الدَّارَ الْآخِرَةَ وَلَا تَنْسَ نَصِيبَكَ مِنَ الدُّنْيَا وَأَحْسِنْ كَمَا أَحْسَنَ اللَّهُ إِلَيْكَ وَلَا تَبْغِ الْفَسَادَ فِي الْأَرْضِ ۖ إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ الْمُفْسِدِينَ ﴿٧٧﴾

अनुवाद-

"और जो कुछ अल्लाह ने तुझे दिया है, उसके ज़रिये आख़िरत का घर बना, और दुनिया में से अपना हिस्सा न भूल, और भलाई कर, जैसा कि अल्लाह ने तेरे साथ भलाई की है; और धरती में फ़साद पर न तुल, क्यों कि अल्लाह फ़साद करने वालों को पसंद नहीं करता।" (सूरः क़सस-७७)

ज़मीन में फ़साद न फैलाओ

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता हैः

وَيَا قَوْمِ أَوْفُوا الْمِكْيَالَ وَالْمِيزَانَ بِالْقِسْطِ وَلَا تَبْخَسُوا النَّاسَ أَشْيَاءَهُمْ وَلَا تَعْثَوْا فِي الْأَرْضِ مُفْسِدِينَ ﴿٨٥﴾

अनुवाद-

"ऐ मेरी क़ौम ! इन्साफ़ के साथ नाप और तौल को पूरा किया करो,

और लोगों को उनकी चीज़ें कम न दिया करो, और ज़मीन में फ़साद न फैलाते फिरो;" (सूरः हूद- ८५)

न ज़मीन पर बड़ाई न फ़साद

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता हैः

تِلْكَ الدَّارُ الْآخِرَةُ نَجْعَلُهَا لِلَّذِينَ لَا يُرِيدُونَ عُلُوًّا فِي الْأَرْضِ وَلَا فَسَادًا ۚ وَالْعَاقِبَةُ لِلْمُتَّقِينَ ﴿٨٣﴾

अनुवाद-

आख़िरत का घर 'हम' उन लोगों के लिए ख़ास कर देंगे जो न तो ज़मीन पर अपनी बड़ाई चाहते हैं और न फ़साद। और परहेज़गारों का आख़िरी अंजाम भला है। (सूरः क़सस-८३)

दुश्मनों से न्याय और इन्साफ़ करने का आदेश

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُونُوا قَوَّامِينَ لِلَّهِ شُهَدَاءَ بِالْقِسْطِ ۖ وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَآنُ قَوْمٍ عَلَىٰ أَلَّا تَعْدِلُوا ۚ اعْدِلُوا هُوَ أَقْرَبُ لِلتَّقْوَىٰ ۖ وَاتَّقُوا اللَّهَ ۚ إِنَّ اللَّهَ خَبِيرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ ﴿٨﴾

अनुवाद-

ऐ ईमान वालो! अल्लाह के लिए इन्साफ़ की गवाही देने के लिए खड़े हो जाया करो और लोगों की दुश्मनी तुमको इस बात पर तैयार न करे कि इन्साफ छोड़ दो; इन्साफ किया करो, यही परहेज़गारी की बात है; और अल्लाह से डरते रहो, बेशक जो कुछ तुम करते हो, अल्लाह उसकी ख़ूब ख़बर रखता है।

(सूरः माइदा-८)

बुराई को अच्छे ढंग से दूर करो

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَلَا تَسْتَوِي الْحَسَنَةُ وَلَا السَّيِّئَةُ ۚ ادْفَعْ بِالَّتِي هِيَ أَحْسَنُ فَإِذَا الَّذِي بَيْنَكَ وَبَيْنَهُ عَدَاوَةٌ

كَاَنَّهٗ وَلِيٌّ حَمِيْمٌ ﴿۳۴﴾

अनुवाद-

और भलाई और बुराई बराबर नहीं हो सकती, तुम बुराई को उस तरह दूर करो जो सब से बेहतर हो, उस सूरत में तुम देखोगे कि तुम्हारे और जिस (व्यक्ति) के बीच दुश्मनी थी, गोया वह गहरा दोस्त बन गया है; (सूरः हामीम-३४)

भले कामों में ग़ैर मुस्लिमों के साथ सहयोग

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحِلُّوْا شَعَآئِرَ اللّٰهِ وَلَا الشَّهْرَ الْحَرَامَ وَلَا الْهَدْيَ وَلَا الْقَلَآئِدَ وَلَآ آٰمِّيْنَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ يَبْتَغُوْنَ فَضْلًا مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرِضْوَانًا ۭ وَاِذَا حَلَلْتُمْ فَاصْطَادُوْا ۭ وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ اَنْ صَدُّوْكُمْ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اَنْ تَعْتَدُوْا ۘ وَتَعَاوَنُوْا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى ۠ وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ۠ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ﴿۲﴾

अनुवाद-

ऐ ईमान वालो! अल्लाह की निशानियों की बेहुर्मती (अनादर) न करना; न अदब वाले महीने (अर्थात रजब, ज़ीकअ़दः, ज़िल्हिज्जः, और मुहर्रम) की न क़ुर्बानी के जानवरों की, और न उन जानवरों की जिनकी गर्दनों में पट्टे पड़े हों, और न उन लोगों की जो अपने रब के फ़ज़्ल और उसकी ख़ुशनूदी की चाह में इ़ज़्ज़त वाले घर (कअ़बः) को जा रहे हों, और जब एह़राम की ह़ालत से बाहर हो जाओ तो शिकार करो, और ऐसा न हो कि एक गिरोह की दुश्मनी, जिसने तुम्हारे लिए इ़ज़्ज़त वाले घर का रास्ता बन्द कर दिया था, तुम्हें इस बात पर उभार दे कि तुम उन पर ज़्यादती करने लगो; और नेकी और परहेज़गारी के कामों में एक-दूसरे की मदद किया करो; और गुनाह और ज़ुल्म की बातों में मदद न किया करो, और अल्लाह से डरते रहो, कुछ शक नहीं कि अल्लाह का अ़ज़ाब बहुत सख़्त है। (सूरः माइदा-२)

किसी एक इन्सान को क़त्ल करना जैसे तमाम इन्सानों को क़त्ल करना है

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

مِنْ اَجْلِ ذٰلِكَ ۚ كَتَبْنَا عَلٰي بَنِيْٓ اِسْرَاۗءِيْلَ اَنَّهٗ مَنْ قَتَلَ نَفْسًۢا بِغَيْرِ نَفْسٍ اَوْ فَسَادٍ فِي الْاَرْضِ فَكَاَنَّمَا قَتَلَ النَّاسَ جَمِيْعًا ۭ وَمَنْ اَحْيَاهَا فَكَاَنَّمَآ اَحْيَا النَّاسَ جَمِيْعًا ۭ وَلَقَدْ جَاۗءَتْهُمْ رُسُلُنَا بِالْبَيِّنٰتِ ۡ ثُمَّ اِنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ بَعْدَ ذٰلِكَ فِي الْاَرْضِ لَمُسْرِفُوْنَ ﴿۳۲﴾

अनुवाद-

"इसी वजह से हमने बनी इस्राईल के लिए लिख दिया था कि जिसने किसी व्यक्ति को, किसी के ख़ून का बदला लेने या धरती में फ़साद फैलाने के अ़लावा किसी और वजह से क़त्ल कर डाला, तो मानों उसने सारे ही इन्सानों को क़त्ल कर दिया और जिसने उसे ज़िन्दगी दिया, 'उसने मानो सारे इन्सानों को ही ज़िन्दगी दिया, और उन लोगों के पास 'हमारे' रसूल खुली दलीलें ला चुके हैं, फिर भी उनमें बहुत से लोग ज़मीन में ज़्यादती करने वाले ही हैं।"

(सूरः माइदा-३२)

व्याख्या-

क़ुर्आन ने सदा के लिए यह नियम बना दिया कि किसी भी इन्सान को चाहे उसका सम्बन्ध किसी धर्म या समुदाय से हो मृत्युदंड नहीं दिया जा सकता। हाँ कुछ ख़ास लोगों के साथ ऐसा जिनके पूरे गवाहों के साथ जुर्म साबित हो गया जैसे-:

"एक हत्यारे को मृत्युदंड दिया जा सकता है। दूसरे उस व्यक्ति को मृत्युदंड दिया जा सकता है जो समाज या देश की शान्ति और सुरक्षा भंग करने पर तुला हो और उसने धरती में तबाही मचा रखी हो और उसको ख़त्म करने के अलावा कोई दूसरा रास्ता न हो।"

कुर्आन की इस आयत में यह भी स्पष्ट रूप से बता दिया गया है कि किसी व्यक्ति की अकारण और अन्यायपूर्ण हत्या एक व्यक्ति की हत्या नहीं, बल्कि वह सम्पूर्ण मानव-जाति की हत्या करने जैसी है। इसी प्रकार किसी व्यक्ति के प्राण बचाना सम्पूर्ण मानव-जाति के प्राणों की रक्षा करना है।

कुर्आन में तो जगह-जगह यह बात कही गई है कि इस दुनिया में इन्सान को सोच-विचार एवं कार्य की स्वतंत्रता देकर परीक्षा के लिए भेजा गया है और बलपूर्वक किसी विशेष धारणा को अपनाने पर विवश नहीं किया गया है। इस दुनिया (कर्म-क्षेत्र) में वह जो भी नीति अपनाएगा मृत्यु के बाद आने वाले पारलौकिक जीवन में उसके अनुसार वह इनाम या सज़ा पाएगा। शक्ति या तलवार के द्वारा किसी को अपनी धारणा अपनाने पर विवश करने की शिक्षा और आदेश अगर कुर्आन देता तो फिर इस दशा में परीक्षा का वह उद्देश्य ही समाप्त हो जाता जिसका उल्लेख कुर्आन में बार-बार किया गया है।

भलाई के कामों में एक दूसरे से आगे बढ़ो

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

وَاَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ الْكِتٰبِ وَمُهَيْمِنًا عَلَيْهِ
فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَآءَهُمْ عَمَّا جَآءَكَ مِنَ الْحَقِّ ؕ لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنْكُمْ
شِرْعَةً وَّمِنْهَاجًا ؕ وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَجَعَلَكُمْ اُمَّةً وَّاحِدَةً وَّلٰكِنْ لِّيَبْلُوَكُمْ فِيْ مَآ اٰتٰىكُمْ فَاسْتَبِقُوا
الْخَيْرٰتِ ؕ اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيْعًا فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ فِيْهِ تَخْتَلِفُوْنَ ۙ﴿۴۸﴾

अनुवाद-

और 'हमने' आप की ओर यह किताब ह़क़ के साथ उतारी है, जो उस किताब की तस्दीक़ करती है जो इसके पहले से मौजूद है और जो उसकी मुह़ाफ़िज़ (संरक्षक) है; और उनके बीच मामलों में आप वही फ़ैसला कीजिए जो अल्लाह ने उतारा है; और जो हक़ तुम्हारे पास आ चुका है उसे छोड़ कर उनकी इच्छाओं के पीछे न चलिएगा, 'हमने' तुममें से हर एक के लिए

एक दस्तूर और एक तरीक़ा मुक़र्रर किया है, और अगर अल्लाह चाहता तो तुम सब को एक ही उम्मत (समुदाय) बना देता; लेकिन जो कुछ 'उसने' तुम्हें (हुक्म) दिया है उसमें वह तुम्हारा इम्तिह़ान लेना चाहता है, तो तुम भलाई के कामों में एक-दूसरे से आगे बढ़ो; तुम सब को अल्लाह ही की ओर लौट कर जाना है, फिर 'वह' तुम्हें बता देगा, जिसमें तुम इख़्तिलाफ़ करते थे; (सूरः माइदा- ४८)

दुनिया इम्तिह़ान हाल है

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

فَلَعَلَّكَ بَاخِعٌ نَّفْسَكَ عَلٰٓى اٰثَارِهِمْ اِنْ لَّمْ يُؤْمِنُوْا بِهٰذَا الْحَدِيْثِ اَسَفًا ۝
اِنَّا جَعَلْنَا مَا عَلَى الْاَرْضِ زِيْنَةً لَّهَا لِنَبْلُوَهُمْ اَيُّهُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا ۝

अनुवाद-

"तो शायद, आप उनके पीछे अगर वह ईमान न लाएँ, तो अफ़सोस के मारे (क्या) अपनी जान दे देंगे। जो चीज़ ज़मीन पर है उसको 'हमने' उसके लिए ज़ीनत (शोभा) बनाया ताकि लोगों को आज़माएं, कि उनमें बेहतर अमल करने वाला कौन है?"

(सूरः कहफ़- ६-७)

अच्छा अ़मल किसका

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

تَبٰرَكَ الَّذِيْ بِيَدِهِ الْمُلْكُ ۖ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرُ ۝ الَّذِيْ خَلَقَ الْمَوْتَ وَالْحَيٰوةَ لِيَبْلُوَكُمْ
اَيُّكُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا ۚ وَهُوَ الْعَزِيْزُ الْغَفُوْرُ ۝

अनुवाद-

"बड़ी बरकत वाला है, जिसके हाथ में सारी बादशाही है, और 'वह' हर चीज़ पर क़ादिर है; 'जिसने' पैदा किया मौत और

ज़िन्दगी को, ताकि तुम्हें आज़माए, कि तुम में से कौन अच्छा अ़मल करने वाला है? और 'वह' बड़ी ताक़त वाला, माफ़ करने वाला है।" (सूरः मुल्क- १-२)

इसी विषय की बहुत-सी आयतें कुर्आन में मौजूद हैं, जिनमें इस तथ्य का पता चलता है कि इन्सान को इस दुनिया में चिन्तन और कर्म की स्वतंत्रता देकर उसकी परीक्षा ली जा रही है। इन शिक्षाओं के होते हुए यह निष्कर्ष कैसे निकाला जा सकता है कि किसी को तलवार या शक्ति के ज़ोर से एक ही धारणा ग्रहण करने पर विवश करने का आदेश कुर्आन देता है।

जिन लोगों से युद्ध करने की बात कुर्आन में कही गई है वह उनके ग़ैर-मुस्लिम होने के कारण नहीं, बल्कि इस कारण कही गई है कि वे इस्लाम और उसके अनुयायियों पर घोर अत्याचार करते थे, उन्हें ख़त्म करने के लिए साज़िशें करते थे, मुसलमानों पर खुद बढ़-चढ़ कर हमले करते थे, और मुसलमानों को इस्लाम पर अ़मल करने से रोकते थे, जिसके कुछ विवरण ऊपर दिये जा चुके हैं।

अ़मल का बदला

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

وَلَا تَسُبُّوا الَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ فَيَسُبُّوا اللّٰهَ عَدْوًۢا بِغَيْرِ عِلْمٍ ؕ كَذٰلِكَ زَيَّنَّا لِكُلِّ اُمَّةٍ عَمَلَهُمْ ۪ ثُمَّ اِلٰى رَبِّهِمْ مَّرْجِعُهُمْ فَيُنَبِّئُهُمْ بِمَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝

अनुवाद-

और जिन लोगों को यह मुश्रिक अल्लाह के सिवा पुकारते हैं, उनको बुरा न कहना! यह भी कहीं अल्लाह को बेअदबी से बिना समझे-बूझे बुरा न कह बैठें; इस तरह 'हमने' हर फ़िर्क़े (गिरोह) के आ़माल (उनकी नज़रों में) अच्छे कर दिखाए हैं, फिर उनको अपने रब की ओर लौट कर जाना है, तब 'वह' उनको बताएगा कि वे क्या-क्या किया करते थे? (सूरः अनाम- १०८)

इन्सानी अधिकार

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

اِنَّا هَدَيْنٰهُ السَّبِيْلَ اِمَّا شَاكِرًا وَّاِمَّا كَفُوْرًا ۝

अनुवाद-

'हमने' और उसे राह दिखाया, तो वह (चाहे) शुक्रगुज़ार हो या नाशुक्रा हो। (सूरः दह्र-३)

अपने-अपने धर्म पर अ़मल करने का अधिकार

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

قُلْ يٰۤاَيُّهَا الْكٰفِرُوْنَ ۝ لَاۤ اَعْبُدُ مَا تَعْبُدُوْنَ ۝ وَلَاۤ اَنْتُمْ عٰبِدُوْنَ مَاۤ اَعْبُدُ ۝ وَلَاۤ اَنَا عَابِدٌ مَّا عَبَدْتُّمْ ۝ وَلَاۤ اَنْتُمْ عٰبِدُوْنَ مَاۤ اَعْبُدُ ۝ لَكُمْ دِيْنُكُمْ وَلِيَ دِيْنِ ۝

अनुवाद-

कह दीजिए, ''ऐ काफ़िरों (दीन का इन्कार करने वालो), न मैं उनकी इबादत (उपासना) करता हूँ, जिन (देवी, देवताओं) की तुम इबादत करते हो, और न तुम 'उस' (अल्लाह) की इबादत करने वाले हो, जिसकी इबादत मैं करता हूँ। और न मैं उनकी इबादत करने वाला हूँ, जिनकी इबादत तुम करते हो। और न तुम 'उसकी' इबादत करने वाले हो जिसकी इबादत मैं करता हूँ। तुम अपने दीन पर, मैं अपने दीन पर!'' (अर्थात तुमको तुम्हारे कर्मो का बदला मिलेगा और मुझ को मेरे कर्मो का बदला मिलेगा)।

(सूरः काफ़िरून-१-६)

कुर्आन की यह सूरः उस समय की है जब ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) लोगों को एक ईश्वर की उपासना और बन्दगी की ओर बुला-बुलाकर थक गए थे और कुछ लोगों ने मानकर नहीं दिया और उनसे कोई उम्मीद भी बाक़ी नहीं रह गई थी कि वे एक ईश्वर की उपासना के लिए तैयार होंगे। इन परिस्थितियों में

ईशदूत के मुख से एलान कराया गया और इन्कार करने वालों से कह दिया गया कि अगर तुम अपनी नीति पर अडिग रहना चाहते हो तो रहो।

उपर्युक्त क़ुर्आनी शिक्षाएँ मनुष्य की धार्मिक स्वतंत्रता का खुला एलान हैं। जो धर्म और जो किताब यह एलान ख़ुद करती हो उसके बारे में यह दुष्प्रचार करना कि उसकी यह शिक्षा है कि " जो उस पर ईमान न लाए तो उसे क़त्ल कर दिया जाए," कितना बड़ा अत्याचार व अन्याय है। (**क़ुर्आन पर अनुचित आक्षेप**)

इस्लाम की नैतिकता क़ुर्आन की दृष्टि में

क़ुर्आन के नैतिकतापूर्ण आदेश-

इस्लामी क़ानून की रूपरेखा में ग़ैर मुस्लिमों के साथ बर्ताव के मामले में इस्लाम अत्यन्त सहिष्णुता की शिक्षा देता है। इस सम्बन्ध में क़ुर्आन की शिक्षाएँ अत्यन्त सहानुभूति सहिष्णुता, उदारता और विशाल हृदयता पर आधारित हैं। जीवन के सही एवं ग़लत रास्तों की हक़ीक़त स्पष्ट होने के बावजूद घोषित किया जाता है:

لَآ اِكْرَاهَ فِي الدِّيْنِ ۙ

"धर्म के विषय में कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं है।" (सूरः बकरः-२५६)

अपशब्द तक नहीं-

यहाँ तक कि बहुदेववादी ईश्वर के अतिरिक्त जिन देवताओं की पूजा करते हैं उन्हें अपशब्द कहने से भी मना किया जाता है-

وَلَا تَسُبُّوا الَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ

"और जिन लोगों को यह मुश्रिक अल्लाह के सिवा पुकारते हैं, उनको बुरा न कहना!" (सूरः अनआ़म १०८)

एकता

फिर किताबवाले अर्थात् यहूदियों और ईसाईयों से अपील की जाती है कि वे मुसलमानों के साथ एक ऐसी बात पर सहमत हो जाएँ जो सबके विश्वास में समान है।

قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ تَعَالَوْا اِلٰى كَلِمَةٍ سَوَآءٍ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ اَلَّا نَعْبُدَ اِلَّا اللّٰهَ وَلَا نُشْرِكَ بِهٖ شَيْـًٔا وَّلَا يَتَّخِذَ بَعْضُنَا بَعْضًا اَرْبَابًا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ ؕ

"कह दीजिए, "ऐ अहले किताब! ऐसी बात की ओर आ जाओ, जो हमारे और तुम्हारे बीच समान है वह यह कि हम सिवाय अल्लाह के और किसी की इ़बादत न करें और न उसका किसी को साझीदार ठहराएँ और न हममें से कोई किसी को अल्लाह के सिवा रब बनाए," (सूरः आले इ़मरान-६४)

नेकी के कामों में सहयोग

सब से बढ़कर यह कि मुसलमानों के विरुद्ध विधर्मियों की अत्यन्त धार्मिक दुश्मनी और उनके द्वारा इ़बादत में प्रतिरोध के बावजूद मुसलमानों को निर्देश दिया जाता है कि वे दूसरों की शत्रुता से उत्तेजित होकर न्याय-मार्ग न छोड़ें। लोगों के हर प्रकार के विरोधों के बीच भी नेकी के कामों में उनके साथ सहयोग करें और बुरी बातों में किसी के साथ सहयोग न करें:-

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحِلُّوْا شَعَآئِرَ اللّٰهِ وَلَا الشَّهْرَ الْحَرَامَ وَلَا الْهَدْيَ وَلَا الْقَلَآئِدَ وَلَآ آٰمِّيْنَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ يَبْتَغُوْنَ فَضْلًا مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرِضْوَانًا ؕ وَاِذَا حَلَلْتُمْ فَاصْطَادُوْا ؕ وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ اَنْ صَدُّوْكُمْ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اَنْ تَعْتَدُوْا ۘ وَتَعَاوَنُوْا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى ۪ وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ۪ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝

"ऐ इमान वालो! अल्लाह की निशानियों की बेहुर्मती (अनादर) न करना; न अदब वाले महीने (अर्थात रजब, ज़ीकअ़दः ज़िल्हिज्ज; और मुह़र्रम) की न क़ुर्बानी

के जानवरों की, और न उन जानवरों की जिनकी गर्दनों में पट्टे पड़े हों, और न उन लोगों की जो अपने रब के फ़ज़्ल और उसकी ख़ुशनूदी की चाह में इ़ज़्ज़त वाले घर (कअ़बः) को जा रहे हों, और जब एह़राम की ह़ालत से बाहर हो जाओ तो शिकार करो, और ऐसा न हो कि एक गिरोह की दुश्मनी, जिसने तुम्हारे लिए इ़ज़्ज़त वाले घर का रास्ता बन्द कर दिया था, तुम्हें इस बात पर उभार दे कि तुम उन पर ज़्यादती करने लगो; और नेकी और परहेज़गारी के कामों में एक-दूसरे की मदद किया करो; और गुनाह और ज़ुल्म की बातों में मदद न किया करो, अल्लाह से डरते रहो, कुछ शक नहीं कि अल्लाह का अ़ज़ाब बहुत सख़्त है।" (सूरः माइदा-२)

धर्म का प्रचार

धर्म का प्रचार भी ह़िकमत (सूझ-बूझ) के साथ करने की ताकीद की गई है-

اُدْعُ اِلٰى سَبِيْلِ رَبِّكَ بِالْحِكْمَةِ وَ الْمَوْعِظَةِ الْحَسَنَةِ وَجَادِلْهُمْ بِالَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ ؕ

"लोगों को अपने 'रब' की राह की ओर बुलाइए, हिक्मत से और अच्छी नसीह़त से, और उनके साथ नसीह़त कीजिए तो अच्छे तरीक़े से,"

(सूरः नह़ल-१२५)

आरोपो का जवाब

अनुचित आक्षेपों और आरोपों का जवाब भी सहनशीलता और क्षमा एवं शुभचिन्तन से देने का महत्व बताया गया है।

وَلَا تَسْتَوِي الْحَسَنَةُ وَلَا السَّيِّئَةُ ؕ اِدْفَعْ بِالَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ فَاِذَا الَّذِيْ بَيْنَكَ وَبَيْنَهٗ عَدَاوَةٌ كَاَنَّهٗ وَلِيٌّ حَمِيْمٌ ۝

"और भलाई और बुराई बराबर नहीं हो सकती, तुम बुराई को उस तरह दूर करो जो सब से बेहतर हो, उस सूरत में तुम देखोगे कि तुम्हारे और जिस (व्यक्ति) के बीच दुश्मनी थी, गोया वह गहरा दोस्त बन गया है;"

(सूर-ए-हामीम् सज्दः-३४)

विधर्मियों के साथ अच्छे बर्ताव

संधि और मैत्री चाहने वाले विद्यर्मियों एवं मुश्रिकों के साथ सामान्यतः अच्छे बर्ताव की अनुमति एवं महत्व है-

لَا يَنْهٰىكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِيْنَ لَمْ يُقَاتِلُوْكُمْ فِي الدِّيْنِ وَلَمْ يُخْرِجُوْكُمْ مِّنْ دِيَارِكُمْ اَنْ تَبَرُّوْهُمْ وَتُقْسِطُوْٓا اِلَيْهِمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُقْسِطِيْنَ ۝

"अल्लाह तुम्हें इस बात से नहीं रोकता कि तुम उन लोगों के साथ नेकी और इंसाफ़ का बर्ताव करो, जिन्होंने धर्म के मामले में तुमसे युद्ध नहीं किया है और तुम्हें तुम्हारे घरों से नहीं निकाला। अल्लाह इंसाफ़ करने वालों को पसन्द करता है।" (सूरः मुम्तिह़ना-८)

ग़ैर मुस्लिमों की दो क़िस्में

ग़ैर मुस्लिमों की दो क़िस्में हुईं एक वह जो मुसलमानों के साथ अम्न के साथ रहते थे उन्होंने दीन की वजह से न उन के साथ जंग की और मुसलमानों को उन के घरों से निकाला ऐसे लोगों के साथ नेकी व भलाई का सुलूक करना मुसलमानों पर उन का ह़क़ है।

दूसरे वह जिन्होंने मुसलमानों के साथ दुश्मनी व अ़दावत का तरीक़ा अपनाया उन से जंग की और मुसलमानों को उन के घरों से निकाला और उन के ख़िलाफ़ हर मुहिम में शरीक रहे उन्हीं लोगों के साथ दोस्ती मना की गई है जैसे मुश्रिकीने मक्का जिन के हाथों मुसलमानों ने बेपनाह तकलीफ़ें झेलीं।

अहले किताब से शादी

इस्लाम ने मुसलमान मर्दो को अहले किताब के यहां शादी करने की इजाज़त दी है ज़ाहिर है इज्दिवाजी ज़िन्दगी बग़ैर मुहब्बत और ज़ेहनी व नफ़्सियाती सुकून व इत्मिनान के क़ायम नहीं रह सकती जैसा कि खुद कुर्आन करीम में है।

ऊपर की मुख्य आयतों पर आक्षेप

ऊपर दी गई सूरः माइदा ५१ और सूरः आले इमरान २८ नं० की आयतों पर कुछ लोग बहुत आक्षेप करते हैं, परन्तु अपने शास्त्र को भूल जाते हैं जैसे- कुर्आन की इन आयतों पर भी लोग आक्षेप करते हैं।

يَاأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَتَّخِذُوا الْيَهُودَ وَالنَّصَارَىٰ

"ऐ ईमान वालो! तुम यहूद और नसारा (ईसाईयों) को अपना दोस्त न बनाओ।" **(सूरः माइदा आयत ५१)**

لَا يَتَّخِذِ الْمُؤْمِنُونَ الْكَافِرِينَ أَوْلِيَاءَ مِن دُونِ الْمُؤْمِنِينَ ۖ

"ईमान वालों को चाहिए, कि वे ईमान वालों के सिवा काफ़िरों (इन्कार करने वालों) को दोस्त (राज़दार) न बनाएँ;" **(सूरः आले इमरान आयत २८)**

यह आयतें भी शत्रुओं के विषय में है परन्तु कुछ लोगों ने इन आयतों के सम्बन्ध में इस तरह भ्रष्ट प्रचार किया है-

आक्षेप-

"अब अल्लाह मियाँ के इन आदेशों पर मुसलमान लोग चलें तो संसार से अलग पड़ें और यह अलग रहना उनको क्या से क्या कर देगा? मुसलमानों के सब कारोबार ठप पड़ जायेगे, सब लोगों से बैर बढ़ जायेगा.....इन आदेशों के बदले में ग़ैर मुस्लिम भी वही नीति अपनायें जो कुर्आन मजीद ने मुसलमानों की बताई है, तो मुसलमानों को प्रिय लगेगी।"

खण्डन-

(१) जैसा कि हम बताते आ रहे हैं कि इस प्रकार के सब आदेश धर्म भेद के कारण सब यहूदियों, ईसाईयों और ग़ैर मुस्लिमों के विषय में नहीं है उपरोक्त दोनों आयतें भी शत्रु यहूदियों ईसाइयों और मक्का निवासियों के विषय में नहीं है इसलिए लोगों ने इन आयतों को लेकर आरोप लगाया है।

(२) न अल्लाह मियाँ ने मुसलमानों को सब ग़ैर मुस्लिमों से शत्रुता रखने और लड़ते रहने का आदेश दिया है और न मुसलमान धर्म भेद के कारण सबसे लड़े और न लड़ते हैं। अंग्रेज़ों ने द्वेषपूर्ण प्रचार करके हिन्दू मुसलमानों के बीच कटुता उत्पन्न करने का दुष्ट प्रयास किया है।

आक्षेप-

"यह आदेश यदि रसूल (सल्ल०) के समय के लिए ही थे तो ठीक थे, सम्भव है उस समय ऐसी ही परिस्थिति रही हो कि ऐसे आदेश देने पड़े, परन्तु आजकल की परिस्थिति में इस सभ्यतापूर्ण वातावरण में क्या उपयोगी है? यह अशान्ति कारक द्वेष प्रसारक आदेश क्या धार्मिक पुस्तकों में शोभा देते हैं?"

खण्डन- क्यों शोभा नहीं देते? क्या इस सभ्यतापूर्ण वातावरण में असभ्य, दुष्ट तथा अत्याचारी नहीं है? हम बराबर सिद्ध करते आ रहे हैं कि यह सब आदेश दुष्टों तथा अत्याचारियों के विषय में है। अब स्वयं देखिए शास्त्र क्या बताते हैं-

"दुष्ट, दुराचारी, दस्यु जनता को पीड़ित करने वाले राक्षसों से लड़ा जाये तो यह जनहित में है जैसा कि गीता में श्रीकृष्ण भगवान कहते हैं-

परित्राणाय साधूनाम् विनाशााय च दृष्कृताम्।

"सज्जन और दुर्जन प्रत्येक मत जाति और देश में होते हैं।"

यह है पवित्र कुर्आन की सत्यता का प्रमाण, जो बात हम आरम्भ से बताते आ रहे हैं यहाँ स्वयं स्वीकार करना पड़ा कि दुष्टों और दुराचारियों के विषय में वही आदेश है जो पवित्र कुर्आन ने दिया है, कुर्आन की आयतें दुष्टों और दुराचारियों ही के विषय में है! लोगों नें तो अपनी अज्ञानता से उसे सब ग़ैर मुस्लिमों के विषय में समझ लिया है या जानते बूझते भ्रष्ट प्रचार किया है जो

वास्तव में दुराचार ही है।

क्या कुर्आन के कुछ आदेश निकाल देने चाहिए

हमें कुछ लोगों की बुद्धि पर दया आती है उनके अनुसार इस सभ्यता पूर्ण वातावरण में धार्मिक पुस्तकों से वह आदेश निकाल देने चाहिए जो दुष्टों और दुराचारियों से सम्बन्धित है। पवित्र कुर्आन के विरोध के आवेग में उनकी बुद्धि इतनी भ्रष्ट हो गई कि उन्होंने इतना भी विचार न किया कि दुष्टों और दुराचारियों से सम्बन्धित वेदों में भी मन्त्र हैं, मनुस्मृति और गीता में भी श्लोक हैं। क्या वेदों से यह मन्त्र और मनुस्मृति से यह श्लोक निकाल चुके हैं?

वास्तव में पारिवारिक एवं सामाजिक नियम कुछ होता है और सामाजिक नियम कुछ, तनिक भी बुद्धि हो और उद्देश्य भ्रष्ट प्रचार करके लोगों की बुद्धि भ्रष्ट करना न होता तो दृष्टिगत आयत के नीचे ऊपर की आयतों को देख लेते उनको मालूम हो जाता कि इस आयत का सम्बन्ध विचार विभिन्नता से नहीं बल्कि सामरिक नियम से है।

शत्रुओं से मित्रता-

जब धर्म और अधर्म में संघर्ष हो रहा हो तब जो बाप भाई या बेटे शत्रुओं से मित्रता का सम्बन्ध रखते हों वह विश्वास के पात्र कैसे हो सकते हैं? धर्म का सम्बन्ध तो ईश्वर और परलोक जीवन से होता है। क्या भारत का राजनैतिक और सामाजिक नियम शत्रु से मित्रता का सम्बन्ध रखने वाले बाप, भाई, बेटे से सम्बन्ध रखने की अनुमति देता है? देखिये वेद क्या कहते है-

वेदों के अनुसार दोस्ती

"ऐ इन्द्र! हमको वीरातापूर्ण प्रतिभा प्रदान कर, अभ्यासपूर्ण तथा प्रति दिन उन्नति होने वाली शक्ति के साथ जो युद्ध सामग्री प्राप्त करती है, तेरी सहायता से हम युद्ध शत्रु पर विजयी हों। ऐ वीर! हम तेरी सहायता से दोनों

प्रकार के शत्रुओं की हत्या करके समृद्धशाली हो, वह बड़े धन के साथ।"

(ऋग्वेद ६:१६:७-१३)

देखा मान्य पाठकों ने अपने और पराए दोनों प्रकार के शत्रुओं को पराजित करने और उन पर विजय प्राप्त करके समृद्धशाली होने की प्रार्थना की गई है।

मनुस्मृति के अनुसार दोस्ती

शत्रुओं से मित्रता रखने वाले विषय में मनुस्मृति का एक श्लोक भी देख लीजिए-

"जो दुष्ट मित्र छुपे छुपे शत्रु की सेवा करता हो तथा जो नौकर पहले मालिक से रूठ कर दूसरे की सेवा करने चला गया हो पीछे आया हो उनसे बहुत ही सावधान रहे। यह प्रबल शत्रु हुआ करते हैं।" (७:१७६)

आगे देखिए, श्रीकृष्णजी ईश्वर के अवतार माने जाते हैं, महाभारत के युद्ध में उनका आचरण क्या रहा है? हम श्रीमद्भागवत गीता से इसका वर्णन उपस्थित कर रहे हैं-

श्रीमद्भागवत गीता

"दोनों ओर की सेनायें रणक्षेत्र में आमने सामने खड़ी हो गईं तो अर्जुन ने धृतराष्ट्र के बेटों को देखकर कृष्णजी से कहा-

मेरे रथ को दोनों सेनाओं के बीच में खड़ा कर दीजिए ताकि मैं देख लूँ कि इस युद्ध में मुझे किन लोगों से लड़ना है। दुर्योधन की ओर से जो राजा लड़ने आए है मैं उनको भी देखना चाहता हूँ।

श्री कृष्ण जी और अर्जुन

श्री कृष्णजी ने अर्जुन के रथ को दोनों सेनाओं के बीच में खड़ा कर दिया। अर्जुन ने विपक्षी सेना में द्रोणाचार्य और भीष्म को देखा और दोनों ही सेनाओं में देखा, पिता के भाईयों को, आचार्यो को, मामाओं को, पुत्रो को, पौत्रों को तथा

मित्रों को श्वसुरों और सहृदयों को, इस प्रकार सब सम्बन्धियों और मित्रों को देखकर अर्जुन ने अत्यन्त करुणा तथा शोक के साथ कहा-

अर्जुन की उदारता

"हे कृष्ण! युद्ध की इच्छा से खड़े स्वजन समुदाय को देखकर मेरे अंग शिथिल हुए जाते हैं और मुख सूखा जाता है, मेरे शरीर में कम्पन तथा रोमांच हो रहा है, हाथ से धनुष छूटा जा रहा है।"

हे कृष्ण! मैं विजय नहीं चाहता, राज्य और सुखों को भी नहीं चहता, हमें राज्य से क्या प्रयोजन, भोगों और जीवन से भी क्या प्रयोजन? क्योंकि हमें जिनके लिए राज्य भोग सुखादि की इच्छा है वे ही सब धन और जीवन की आशा को त्याग कर युद्ध में खड़े हैं। जो गुरुजन, ताऊ, चाचे, लड़के, दादा, मामा, श्वसुर, पोते, साले तथा और भी सम्बन्धी लोग हैं। इसलिए मुझे मारने पर भी अथवा तीन लोक के राज्य के लिये भी मैं इन सबको मारना नहीं चाहता, पृथ्वी की तो बात ही क्या है अपने बांघव धृतराष्ट्र के पुत्रों को भी मारना हमारे लिए योग्य नहीं है क्योंकि अपने कुटुम्ब को मारकर हम कैसे सुखी होंगे?

यह लोभ से भ्रष्ट चित्त के नाश कृत दोष और मित्रों के साथ विरोध करने के पाप को नहीं देखते परन्तु कुल को नाश करने के दोष को जानने वाले हम लोगों को इस पाप से बचाने के लिए क्यों न विचार करना चाहिए? क्योंकि कुल के नाश होने से सनातन कुल धर्म नष्ट हो जाते हैं धर्म के नाश होने से सम्पूर्ण कुल को पाप भी दबा लेता है पाप के अधिक बढ़ जाने से कुल सी स्त्रियां दूषित हो जाती हैं और स्त्रियों के दूषित हो जाने से वर्णसंकर उत्पन्न हो जाता है।

अहो शोक है कि हमलोग बुद्धिमान होकर भी महान पाप करने को तैयार हैं। राज्य और सुख के लिए अपने कुल को मारने के लिए बेचैन हैं। यदि मुझ शस्त्र रहित सामना न करने वाले को शस्त्रधारी धृतराष्ट्र पुत्र मारें तो वह मरना भी मेरे लिए अति कल्याणकारी होगा।" **(भगवद्गीता अध्याय १, श्लोक २१ से ४६ तक)**

श्री कृष्ण जी का उत्तर

देखा आपने अर्जुन का उद्गार, उनकी सहायता, उदारता तथा त्याग भाव, परन्तु कृष्णजी पर उनकी किसी बात का प्रभाव नहीं हुआ, उन्होंने किस प्रकार अर्जुन को युद्ध के लिए प्रवृत किया, अब श्री कृष्णजी का उत्तर सुनिए-

"हे पार्थ! अपने आप प्राप्त हुए और खुले हुए स्वर्ग के द्वार स्वरूप इस प्रकार के युद्ध को भाग्यवान क्षत्री लोग ही पाते हैं, और यदि तू इस धर्म युक्त संसार को नहीं करेगा तो स्वधर्म और कीर्ति को खोकर पाप को प्राप्त होगा, और सब लोग तेरी बहुत ज़माने तक रहने वाली अपकीर्ति को भी कथन करेंगे। और वह अपकीर्ति माननीय पुरुष के लिए मरने से भी अधिक बुरी होगी, और तेरे बैरी लोग तेरे सामर्थ्य की निन्दा करते हुए बहुत से न कहने योग्य वचनों को कहेंगे फिर इसमें अधिक दुःख क्या होगा? इस लिए युद्ध करना तेरे लिए सब प्रकार से अच्छा है क्योंकि या तू मर कर स्वर्ग प्राप्त होगा अथवा जीत कर पृथ्वी को भोगेगा। इसलिए हे अर्जुन! युद्ध के लिए निश्चय वाला होकर खड़ा हो।"

(श्रीमद्गीता, अध्याय २, श्लोक ३२ से ३७ तक)

और देखिए अर्जुन के एक प्रश्न के उत्तर में कृष्णजी ने कहा

"हे अर्जुन! मैं लोकों का नाश करने वाला बढ़ा हुआ महा काल हूँ इस समय इन लोगों को नष्ट करने के लिए प्रवृत्त हुआ हूँ। इसलिए जो प्रतिपक्षियों की सेना में स्थित हुए योद्धा लोग हैं वह सब तेरे बिना नहीं रहेंगे। अर्थात् तेरे युद्ध न करने से भी उन सबका नाश हो जाएगा। अतः तू खड़ा हो और यश को प्राप्त कर तथा शत्रुओं को जीत कर धन्धान्य से सम्पन्न राज्य को भोग और यह सब शूर वीर पहले ही से मेरे द्वारा मारे हुए हैं। **(अध्याय ११, श्लोक ३२)**

ऐसे ही कितने साहसजनक और लोभप्रद उपदेश करके कृष्णजी ने अर्जुन को अपने ही कुल-कुटुम्ब जनों से लड़ा दिया। फलस्वरूप लाखों व्यक्ति मारे गए,

कुल का नाश हो गया भारत की शक्ति नष्ट हो गई।

यह है धार्मिक इतिहास! इसको विचार में न रखते हुए पवित्र कुर्आन पर आक्षेप कितना अन्यायपूर्ण है?

अल्लाह तआ़ला पवित्र कुर्आन में फ़रमाता है

अनुवाद-

ऐ लोगो! 'हमने' तुमको एक ही मर्द और एक ही औ़रत से पैदा किया और तुम्हें बिरादरियों और क़बीलों का रूप दिया, ताकि तुम एक-दूसरे को पहचानो; अल्लाह के नज़दीक़ तुममें सबसे इ़ज़्ज़त वाला वह है, जो तुममें सबसे ज़्यादा मुत्तक़ी (परहेज़गार) हो, बेशक अल्लाह जानने वाला, ख़बर रखने वाला है। **(सूरः हुजरात-१३)**

ह़ज़रात मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया ख़ुदा की क़सम, जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है कोई बन्दा (मनुष्य) वास्तविक रूप से विश्वासधारी (मुसलमान) न होगा जब तक वह अपने भाई के लिए वही न चाहे जो स्वयं अपने लिए चाहता है।

एक और आयत पर आक्षेप

ऐ मुसलमानों! मुश्रिक निरे गन्दे हैं, अतः वह कअ़बे की मस्जिद के पास न आने पायें।

आक्षेप-

"हम तो अब तक हिन्दू पंडे पुजारियों को ही कोसते थे कि यह अपने मन्दिरों में सबको क्यों नहीं जाने देता, परन्तु अल्लाह तो इनसे बढ़कर छूत मानने वाला है।"

मानव प्रेम की वास्तविकता-

पवित्र कुर्आन पर तो युद्ध हत्या लूट मार के बड़े-बड़े दोष लगाए हैं

और वेदों के प्रति दिखाया है कि वह सारे मनुष्यों से प्रेम करने की शिक्षा देते हैं। यह दस्यु आर्यों के शत्रु कौन हिंसक प्रणाली है ? उनको मनुष्य तो नहीं होना चाहिए। परन्तु स्वामी दयानन्दजी तो हमें बताते हैं कि आर्यवर्त के अतिरिक्त दूसरे सभी देशों के मनुष्य दस्यु हैं और अपनी ओर से नहीं वेद शास्त्र ही द्वारा बताते हैं, देखिए-

ऋग्वेद में-

(ऐ प्रकाशमान अग्नि!) तू आर्यो और दस्युओं के बीच भेद कर जो धर्मी हैं उनको दण्ड दे.....। **(ऋग्वेद १ः ५१ः ७)**

"ऐ दस्युओं के प्रति सबसे अधिक विनाश करने वाली (अग्नि) तुझको पाथ्या ने जलाया है तू हर युद्ध में धन सामग्री प्राप्त करती है।"

(यजुर्वेद ११ः ३४)

ऐ इन्द्र! ख़ज़ानों के खज़ान्ची! हमने धनकोषों की इच्छा से तेरा सीधा हाथ थाम लिया है, क्योंकि हम तुझको जानते हैं। ऐ वीर! पशुओं के स्वामी! हमको भारी दिव्य धन दौलत प्रदान कर, विख्यात ऋषियों के साथ हमारे शत्रुओं को पराजित करके हमे भारी प्रकाशमय धन दौलत प्रदान कर। सच्चे इन्द्र! दुर्गों को नष्ट करके दस्युओं का वध करके हमको प्रकाशमान माल धन प्रदान कर। (४-३:४७:१०)

विजानी ह्यर्यान्ये च दस्य वो बर्हिष्मते रन्धया शासद व्रतान्।

(ऋ० म०१ । सू० ५१। मं० ७)

इस मन्त्र का अर्थ स्वामी दयानन्द ने यह किया है-

"आर्य नाम धार्मिक विद्वान आप्त पुरुषों का और इनसे विपरीत जनों का नाम दस्यु अर्थात डाकू, दुष्ट अधार्मिक और अविद्वमान है।"

म्लेच्छ वाचश्चार्य वाचः सर्वेते दस्यवः स्मत। (मनु० १० । ४५)

म्लेच्छ देशस्तवतः परः। (मनु० २ । २३)

मनुस्मृति के यह वाक्य देकर स्वामी दयानन्द जी ने लिखा है-

जो आर्यवर्त देश से भिन्न विदेश हैं वे दस्यु देश हैं और म्लेच्छ देश कहलाते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि आर्यवर्त से भिन्न पूर्व देश से लेकर

ईशान उत्तर वायव्य और पश्चिम देशों में रहने वालों का नाम दस्यु और म्लेच्छ तथा असुर है और दक्षिण तथा आग्नेय दिशाओं में आर्यवर्त देश से भिन्न में रहने वाले मनुष्यों का नाम राक्षस था। (**'सत्यार्थ प्रकाश' समुल्लास ७**)

यह है धर्म की मानव समता तथा मानव प्रेम की वास्तविकता।

आर्यवर्त से भिन्न विदेशी

आर्यवर्त के अतिरिक्त सारे देशों के मनुष्य डाकू और दुष्ट हैं अधार्मिक और अविद्वान हैं, म्लेच्छ और असुर तथा राक्षस हैं।

यह स्थिति तो है आर्य धर्म में उन मनुष्यों की जो आर्यवर्त के बाहर संसार के देशों में बसते हैं चाहे वह धर्मात्मा हों ईश्वर भक्त हों विद्वान हों सदाचारी हों दार्शनिक हों साधु सन्त हों।

भविष्य पुराण के अनुसार म्लेच्छ

भविष्य पुराण में ह़ज़रत आदम हव्वा उनकी सन्तान के ईशदूतों अन्तिम ईशदूत ह़ज़रत मुह़म्मद का वर्णन है इन सबको भी म्लेच्छा ही कहा गया है।

१- ब्राह्मण को चाहिए कि शूद्र को कोई युक्ति न बनाए, शूद्र को उच्छिष्ट और हवों का शेषांश न देवे। उसे धर्म और व्रत करने का भी उपदेश न करें, यदि ब्राह्मण उसे धर्म का उपदेश तथा व्रत का आदेश करता है तो उस शूद्र के साथ वह असंवृत नामक घोर नरक में जाता है। (**अध्याय ४, श्लोक ७०। ७१**)

२- मरे हुए शूद्र को नगर के दक्षिण द्वार से वैश्य को पश्चिम, क्षत्रिय को उत्तर तथा ब्रह्मामण को पूर्व द्वार से श्मशान में ले जाना चाहिए।

(**अध्याय ५, श्लोक ६२**)

३ - स्वजनों में रहते हुए मृतक ब्रह्मामण को शूद्र से न उठवाए क्योंकि शूद्र से छू जाने पर दूषित हो जाने के कारण मृतक का वह दह्म शरीर स्वर्गनिमित्तक नहीं हो सकता। (**अध्याय ५ श्लोक १०४**)

४- ईश्वर ने सब शूद्र के लिए केवल एक ही कर्म बतलाया है और वह यह है

कि उन तीनों वर्गो (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) की ईष्यारहित होकर सेवा करें।

(**अ० १, श्लोक ६१**)

५- शूद्र यदि ब्रह्माण आदि द्वजातियों का नाम तथा जाति कहता हुआ बुरी बात कहे तो जलती हुई दस अंगुल की लौह श्लाका उसके मुँह में डाले।

(**अध्याय ७, श्लोक २७२**)

६- कोई आवश्यक काम आ पड़ने पर शूद्र का धन ब्रह्माण बे रोक टोक ले सकता है, कारण कि उसका निजी धन कुछ भी नहीं है, सब धन उसके प्रभु का है।

(**अध्याय ७, श्लोक ४१७**)

७- सदा चण्डाल और श्वपच गाँव के बाहर रहें, काँसे पीतल का बर्तन न रखकर मिट्टी के बर्तन रखें, कुत्ते और गदहे यही उनके धन हैं। मुर्दो को शरीर से उतारे हुए वस्त्र ही उनके पहनने के वस्त्र हैं। टूटे-फूटे मिट्टी के बर्तनों में भोजन करें लोहे का गहना पहनें, नित एक ही स्थान में जाएँ, यही उनका धर्म है। (**अ० १०, श्लोक ५१-५२**)

यह है इस्लाम पर कुछ आक्षेप करने वालों की मानव प्रतिष्ठा तथा मानव प्रेम की शिक्षा! भ्रष्ट प्रचार करते हुए लोगों को याद नहीं रहता कि उनका शास्त्र अपने ही समाज के एक वर्ग के विषय में क्या शिक्षा देता है। आर्य समाज वर्ण-व्यवस्था को जंग से नहीं कर्म से मानता है। परन्तु वर्ण-व्यवस्था को मानता तो है।

इस्लामी समानता

इसके विपरीत इस्लाम में न कोई वर्ण भेद है और न कोई वर्ग भेद, सब मुसलमान समान हैं, सबका धार्मिक और साामाजिक नियम समान है सबके अधिकार समान हैं, सब कुर्आन और ह़दीस की शिक्षा प्राप्त करते हैं, सब मस्जिद में समान रूप से नमाज़ पढ़ते हैं, एक साथ बैठकर खाते हैं, सब समान रूप से स्वतंत्र है कि जो उद्योग और धन्धा चाहें, किसी पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं, यह है ईश्वरीय धर्म।

ग़ैर मुस्लिमों के साथ ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सन्धियाँ

इस्लामी हुकमत में ग़ैर मुस्लिमों के साथ जो सन्धियाँ हुईं उससे अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि इस्लाम कितना मानवतापूण धर्म है।

ग़ैर मुस्लिमों से सन्धियाँ

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और उनके उत्तराधिकारियों के समय में ग़ैर मुस्लिमों से बहुत सी सन्धियाँ हुईं और उनके लिए प्रतिज्ञा पत्र लिखे गए हम उनके धार्मिक स्वतंत्रता सम्बन्धी अंश उपस्थित कर रहे हैं।

माह दीनदार के निवासियों को जो प्रतिज्ञा पत्र लिखा गया उसमें था कि- "न उनका धर्म बदला जाएगा और न उनके धार्मिक कार्यो में हस्तक्षेप किया जाएगा।"

जुर्जान निवासियों के प्रतिज्ञा पत्र में था-

"उनके प्राण, धन, धर्म, शास्त्र सबके लिए सुरक्षा है, उनकी किसी चीज़ में परिवर्तन न किया जाएगा।"

लूक़ाफ़ और आज़र बाईजान निवासियों के प्रतिज्ञा पत्र में था-

"ग़ैर मुस्लिमों के प्राण, धन, धर्म और शास्त्र सबके लिए रक्षा हैं-

(यह अंश शिब्ली की पुस्तक "अल्फ़ारुक़" से उद्धत किए गए हैं-)

ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) की उपस्थिति में ईलिया (शाम) के निवासियों को जो प्रतिज्ञा पत्र लिखा गया उसमें है-

"यह वह सुरक्षा है जो ईश्वर के दास और मुसलमानों के अधिकारी (ख़लीफ़ा) उमर ने ईलिया निवासियों को दी। यह सुरक्षा उनके प्राण, धन, उपासना, गृह, सलीब, स्वस्थ्य, रोगी तथा उनके समस्त सह धर्मियों के लिए है। वह इस प्रकार कि न उनके उपासनागृहों में निवास किया जाएगा न उनको ढाया जाएगा, न उनके अहाते को किसी प्रकार की हानि पहुँचाई जाएगी और न उनके सलीबों

और माल में कोई कमी की जाएगी, और न उनके धर्म के सम्बन्ध में उन पर कोई दबाव डाला जाएगा।"

मिस्र की विजय

यह कुछ विशेष उदारता नहीं है। धार्मिक स्वतन्त्रता और धार्मिक रक्षा इस्लामी शासन की स्थायी नीति थी जो पवित्र कुर्आन के इस आदेश पर आधारित थी- **लाइक्राह फ़िद्दीन** (धर्म के विषय में कोई ज़ोर दबाव नहीं)।

ह़ज़रत उ़मर के शासन काल में मिस्र विजित हुआ युद्ध में बहुत से सैनिक बन्दी बने, मिस्र के विजेता ह़ज़रत अ़म्र बिन आ़स ने ह़ज़रत उ़मर से लिख कर पूछा कि बन्दियों के सम्बन्ध में क्या किया जाए? ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने उत्तर में लिखा कि बन्दियों को इसका अधिकार दे दिया जाए कि वह चाहें तो इस्लाम ग्रहण कर लें और चाहें तो जिज़्या देना स्वीकार करेके अपने धर्म पर रहें।

एक दास-

ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) का एक दास ईसाई था एक बार उन्होंने दास से मुसलमान हो जाने का प्रस्ताव किया उसने अस्वीकार कर दिया। ह़ज़रत उ़मर का शासन, ईरान, शाम और मिस्र तक फैला हुआ था परन्तु आप ने उसका उत्तर सुन कर कहा- **'लाइक्राह फ़िद्दीन'** (धर्म के विषय में कोई ज़बरदस्ती नहीं) इतना ही नहीं आप उससे अप्रसन्न भी नहीं हुए। अपने प्रलोक गमन के समय दास को गले लगाया और उसे स्वतंत्र कर दिया।

शाम के अंताकिया नगर का याकूबी सम्प्रदाय का पीटरयार्कमीकाईल लिखता है कि जब ख़ुदा ने रूमियों का उत्पात देखा कि वह जहां कहीं अधिकार पाते हैं हमारे गिरजाओं को अशुद्ध कर देते हैं और हम पर अत्याचार करते हैं तो उसने प्रवेश में इस्माईल की संतान (मुसलमानों को नियुक्त किया कि वह) हमें रूमियों से मुक्ति दिलायें।

एक नस्तूरी उस्कुफ़ (धर्म नेता) कहता है कि "अ़रब मुसलमान ईसाईयों के मज़हब से नहीं लड़ते, वह हमारे पादरियों और मज़हबी बुज़ुर्गों का सम्मान तथा

हमारे मज़हब की रक्षा करते हैं वह बड़े उदार हैं।"

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के तीसरे उत्तराधिकारी ह़ज़रत उ़स्मान के शासन काल में (Gesujah) जो मरू का पीटरयार्क था उसने ईरान के लार्ड बिशप साईमन को लिखा कि-

अ़रब जिनको ख़ुदा ने इस समय देशों की बादशाहत दी है। ईसाई मज़हब पर आक्रमण नहीं करते बल्कि उसके विपरीत वह हमारे मज़हब की सहायता करते हैं और हमारे गिर्जाओं और ख़ानक़ाहों को अनुदान करते हैं।

(हुक़ूक़े ज़्ज़िम्मीयीन, शिब्ली)

महत्वपूर्ण विभाग युद्ध-

डा० ई० एक क्रासवेल इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध विद्वान और लेखक हैं वह अपने एक लेख में लिखते हैं-

"मानव जीवन का एक महत्वपूर्ण विभाग युद्ध भी है और जीवन के इस क्षेत्र में नैतिक आदर्श को स्थापित रखना कठिन हो जाता है। परन्तु इस्लाम ने मानव जीवन के इस क्षेत्र में भी केवल उच्चकोटि की नैतिक शिक्षा ही उपस्थित नहीं की है बल्कि व्यवहारिक रूप में भी मुसलमान इस आदर्श को सम्मुख रखते रहे हैं।

इस्लाम ने आक्रमणात्मक युद्ध की हर अवस्था को निषिद्ध ठहराया है और मुसलमानों को केवल प्रतिरक्षात्मक युद्ध की अनुमति दी है। परन्तु ऐसे युद्ध में भी नैतिकता एवं मानवता के सीमोल्लंघन से कठोरता के साथ मनाही कर दी है। और केवल उन्हीं लोगों पर हथियार उठाने की अनुमति दी है जो मुसलमानों से लड़ें और पराजित होने के बाद भी हथियार डालने से इन्कार कर दें। इसी के साथ उसने जीविका सम्बन्धी सामग्री को नष्ट करने की भी सर्वथा मनाही कर दी है।

युद्ध के विषय में संसार की कोई जाति नैतिकता का इतना ऊँचा आदर्श उपस्थित नहीं कर सकती जितना इस्लाम ने उपस्थित किया है सारांश यह है कि इस्लाम को जिस ओर से भी देखा जाए वह उच्चकोटि की नैतिक शिक्षा का संग्रह सिद्ध होता है। उसकी शिक्षा का सबसे बड़ा गुण यह है कि उससे मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम दोनों समान रूप से लाभान्वित हो सकते हैं।"

(बलात धर्म परिवर्तन नहीं, अबू मुह़म्मद इमामुद्दीन)

जुर्जान निवासियों से प्रतिज्ञा पत्र

"उनके प्राण, धर्म, धन इत्यादि की सुरक्षा की जाएगी और कोई चीज़ परिवर्तित नहीं की जाएगी।"

इसी प्रकार आज़रबाईजान निवासियों के प्रतिज्ञा पत्र में थाः

"ग़ैर मुस्लिमों की जान, माल, धर्म और शास्त्र सबके लिए रक्षा है।"

(अलफ़ारूक़ मौलाना शिबली नोमानी)

इसी प्रकार पहले ख़लीफ़ा ह़ज़रत अबूबक्र (रज़ि०) ने भी जब शाम की ओर फ़ौज भेजी तो उस के नाम यह फ़रमान जारी किया कि "शत्रुओं से मुआ़हदों (सन्धियों) में झूठ या धोखा न हो, हर मामले में ईमानदारी रखो ताकि तुम्हारी सत्यता और उदारता सिद्ध हो जाए अपने वादों और अपनी बातों की पाबन्दी करो धर्म प्रचारकों और सन्यासियों के सुकून में बाधा न डालो और उनके घरों को न गिराओ। **(तबरी भाग २)**

इस फ़रमान के विषय में प्रसिद्ध अंग्रेज़ (Bosworth Smith) लिखते हैं "अबूबक्र ने शाम में अपनी फ़ौजों को आदेश दिये कि न तो लोगों के चेहरे बिगाड़ें न बूढ़ों, औ़रतों, और बच्चों को क़त्ल करें, न फलदार पेड़ों को काटें और न उनके जानवरों को मारें।" (Islam and Civilisation)

शाम के साथ प्रतिज्ञा

दूसरे ख़लीफ़ा ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) के शासन काल में जो प्रतिज्ञा पत्र ईलिया (शाम) निवासियों को लिखा वह इस प्रकार है।

"यह वह सुरक्षा है जो अल्लाह के बन्दे और मुसलानों के अधिकारी (ख़लीफ़ा) उ़मर ने ईलिया निवासियों को दी। यह सुरक्षा उनके प्राण, धन उपासना गृह, सलीब स्वस्थ, रोगी तथा उनके समस्त सहधर्मियों के लिए है वह इस प्रकार कि न उनके उपासना गृहों में निवास किया जाए न उनको ढाया जाए न उनके अहाते को किसी प्रकार की हानि पहुंचाई जाए और न उनके सलीबों, और माल में कोई कमी की जाएं और न उनके धर्म के सम्बन्ध में उन पर कोई दबाव डाला

जाए।" ('अल्फ़ारूक़' शिब्ली नोमानी)

इस्लाम के विषय में जो भ्रम और सन्देह था वह इन प्रमाणों से भली भांति सिद्ध हो गया कि इस्लाम में ज़बरदस्ती मुसलमान बनाने की कहीं अनुमति नहीं है परन्तु मानव जीवन का क्रासवेल के अनुसार "युद्ध एक महत्वपूर्ण विभाग है।" जिसे इस्लाम ने मानव जीवन के इस क्षेत्र में भी केवल उच्चकोटि की नैतिक शिक्षा ही नहीं बल्कि सद्व्यवहार की भावना के साथ अनुमति दी है। जिसमें आक्रमणात्मक युद्ध की हर अवस्था को निषिद्ध ठहराया है और जो ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के जीवन की घटनाएं इस शान्ति प्रियता का समर्थन करती हैं। जैसे-

सुलह़ हुदैबिया

हुदैबिया की सन्धि के अवसर पर शत्रुओं (मक्का निवासियों) ने बड़ी कड़ी शर्त रखीं जिसे मुसलमानों को स्वीकार करते हुए हिचकिचाहट मह़सूस हो रही थी परन्तु रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने झगड़े को समाप्त करने के लिए सन्धि कर ली जिस पर सारे मुसलमान भी राज़ी हो गये।

फ़तेह़ मक्का

इसी प्रकार फ़तेह़ मक्का के अवसर पर जब आप (सल्ल०) अपनी सेना के साथ मक्का वापस गए तो आपने हुक्म दिया कि यथा सम्भव कम से कम रक्त पात हो इसलिए आप की सेना किसी प्रकार की हिंसा या युद्ध के बिना मक्के में प्रविष्ट हो गई, यह वही नगर था जहाँ से आप इतने अत्याचार सहन कर के निकाले गये थे, किन्तु फिर भी आप को शांति और दया का इतना ध्यान था कि स्वयं आप ने फ़रमाया आज तो रह़मत (दया) का दिन है। इसी दया के कारण आप ने फ़रमाया, जो अबू सुफ़यान (उस समय तक कट्टर विरोधी थे) के घर में दाख़िल हो जाएगा उस से हम जंग नहीं करेंगे इतना सुनते ही ह़ज़रत अबूसुफ़ियान और तमाम विरोधियों के दिल में यह बात उत्पन्न हो गई हम इनका विरोध करते हैं और यह हम पर दया करते जा रहे हैं। इसलिए यह निः सन्देह

अल्लाह के ईशदूत हैं यह सब देखकर मक्का निवासियों ने तुरन्त इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया।

इस्लाम की तलवार-

यह है वास्तव में इस्लाम धर्म की तलवार, सद्व्यवहार और अच्छे आचरण जिससे इस्लाम विश्वव्यापी रूप में फैलता गया न कि रक्तपात से यहां प्रश्न उठ सकता है कि फिर इतनी लड़ाइयाँ क्यों हुईं। निः सन्देह आपने प्रत्येक लड़ाई रक्षात्मक, शान्तिप्रिय और निर्दोष लोगों को हिंसा और अत्याचार से बचाने के लिए ही की। जो आप के आदेशों से स्पष्ट होता है कि अपनी सेना को रणक्षेत्र में जाते समय यह आदेश देते।

भाग-11

इस्लामी शासन में जिज़्या, ख़िराज और ग़ैर मुस्लिमों के अधिकार

इस्लामी शासन में ग़ैर मुस्लिमों के अधिकार

इस्लामी समाज में रहने वाले दूसरे मज़ाहिब के मानने वालों को इस्लाम ख़त्म नहीं करना चाहता बल्कि नेकी व रहमदिली और इन्साफ़ की मज़बूत बुनियादों पर मुसलमानों और ग़ैर मुस्लिम शहरियों के दर्मियान सम्बन्ध करवाता है। इन बुनियादों को इन्सानियत ने न इस्लाम से पहले कभी जाना और न इस्लाम के बाद मज़हब, क़ौम और रंग की बुनियादों पर तंग नज़री और अनानियत परस्ती व ख़ुदग़र्ज़ी का दौर दौरा नज़र आता है और इन्सानियत परेशानियों का शिकार है।

ग़ैर मुस्लिमों के साथ सम्बन्ध

इस्लाम ने ग़ैर मुस्लिमों के साथ सम्बन्ध की बुनियाद नेकी व इन्साफ़ परस्ती पर रखी है और यह सारी दुनिया के ग़ैर मुस्लिमों के साथ है जो ग़ैर मुस्लिम दारुस्सलाम यानी मुसलमानों के देश में रहते हैं उन के ख़ास हुक़ूक़ हैं जिन्हें ज़िम्मी या अहले ज़िम्मा कहा जाता है।

दारुस्लाम में ज़िम्मियों के साथ मामले का पहला उसूल यह है कि चन्द बातों को छोड़कर उन के हुक़ूक़ वही होते हैं जो मुसलमानों के होते हैं इसी लिए उन की ज़िम्मेदारियाँ भी वैसी ही होती हैं।

इस्लामी समाज की हिमायत-

इन हुक़ूक़ में सब से पहला हक़ यह है कि उन्हें इस्लामी देश और इस्लामी समाज की पूरी हिमायत व हिफ़ाज़त हासिल हो जिस में हर प्रकार के जुल्म व सितम से हिफ़ाज़त शामिल है ताकि वह पूरे अम्न व सुकून के साथ ज़िन्दगी गुज़ार सकें।

बह्य आक्रमण से सुरक्षा उसी तरह उन का हक़ है जिस तरह मुसलमानों

का इमाम या जो भी मुसलमानों का अधिकारी हो उस के लिए अपनी शरअ़ी हैसियत और फ़ौजी ताक़त की बिना पर यह ज़रुरी होगा कि वह ज़िम्मियों की हिफ़ाज़त करे। जैसे-

"इमाम के लिए ज़रुरी है कि वह ज़िम्मियों की हिफ़ाज़त करे, जो उन्हें तकलीफ़ पहुँचाए उसकी रोकथाम करे, क़ैद व बन्द में हों तो उन्हें आज़ाद कराए, और जो उन को तकलीफ़ दे, उसे पीछे ढ़केल दे। चाहे पूरे मुल्क में एक ही ज़िम्मी क्यों न हो, क्योंकि ज़िम्मियों के बारे में इस्लाम के अहकाम नाफ़िज़ हो चुके हैं और उन के साथ मुआ़हिदा हमेशा के लिए होता है इसलिए मुसलमानों की तरह उन के हुक़ूक़ भी वाजिब हैं।" **(मतालिब भाग-२, ६०२-६०३)**

इमाम कराफ़ी मालिकी अपनी किताब 'अल्फ़िरक़' में इमाम इब्ने हज़्म ज़ाहिरी का क़ौल उन की किताब "मरातिबुल् इजमाअ़" से नक़्ल करते हैं।

"अगर अहले हर्ब हमारे मुल्क में किसी ज़िम्मी को पकड़ने आयें तो हमारे ऊपर वाजिब होगा कि हम पूरी ताक़त के साथ उन से जंग के लिए निकल पड़ें, और उस ज़िम्मी की हिफ़ाज़त के लिए जिस की ज़िम्मेदारी अल्लाह व रसूल (सल्ल०) ने ले रखी है अपनी जान दे दें, क्योंकि उस के बग़ैर ज़िम्मी को उन के सुपुर्द कर देना ज़िम्मेदारी के मुआ़हिदे से पहलू बचाना समझा जाएगा और इस पर उम्मत का इजमअ़ (सहमत) है।" **(अल्फ़िरक़ भाग ३, १४-१५)**

अ़ल्लामा कराफ़ी ने इस पर लिखा है कि "जिस मुआ़हिदे के ज़ाया होने से बचाने के लिए जान व माल तक क़ुर्बान कर देना पड़े यक़ीनन उस की ज़बरदस्त अहमियत है।"

इन्सानी उसूलों पर अ़मल

इस इस्लामी उसूल पर अ़मल की एक रौशन मिसाल हमें शेखुल इस्लाम इब्ने तैमिया (रह०) के यहाँ मिलती है जब शाम पर तातारियों का ग़ल्बा व तसल्लुत हो गया तो शेख़ुल इस्लाम तातारियों के कमान्डर, क़त्लूशाह के पास क़ैदियों की रिहाई के लिए गये। क़त्लू शाह ने मुसलमान क़ैदियों की रिहाई मंज़ूर

कर ली लेकिन ज़िम्मी क़ैदियों की रिहाई से इन्कार कर दिया। शेखुल इस्लाम ने तुरन्त कहा कि हम तमाम यहूदी व ईसाई क़ैदियों की रिहाई के बिना नहीं मान सकते क्योंकि वह हमारी ज़िम्मेदारी में हैं हम किसी भी क़ैदी को नहीं छोड़ सकते न ज़िम्मियों में से न मुसलमानों में से। क़त्लू शाह ने शेख़ुल् इस्लाम के सख़्त रवैये व इसरार को देखते हुए सब को रिहा कर दिया।

ज़ुल्म से ज़िम्मियों की ह़िफ़ाज़त

अन्दुरुनी ज़ुल्म व सितम से ज़िम्मियों की ह़िफ़ाज़त करना इस्लाम ने ज़रुरी क़रार दिया है और उस में बड़ी सख़्ती बरती है वह मुसलमानों को आगाह करता है कि वह ज़िम्मियों की तरफ़ का अत्याचार नहीं कर सकते न उन्हें ज़बान ही से कोई तकलीफ़ पहुँचाए क्योंकि अल्लाह तआ़ला ज़ालिमों को नापसंद करता है, यह उन्हें हिदायत ही नहीं देता बल्कि उन्हें दुनिया में भी अ़ज़ाब देता है और आख़िरत में तो उन्हें कई गुना अ़ज़ाब से दो चार होना पड़ेगा।

ज़ुल्म को ह़राम और दुनिया व आख़िरत में उस के बुरे अन्जाम के बारे में बहुत सी आयतें और ह़दीसें मौजूद हैं और ज़िम्मियों और मुआ़हिदे वाले ग़ैर मुस्लिमों के ख़िलाफ़ ख़ुसूसी ह़दीसें भी मिलती हैं।

मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया-

"रसूलुल्लाह (सल्ल०) फ़रमाते हैं कि "जिस ने किसी ज़िम्मी व मुआ़हिद पर ज़ुल्म किया या उस का ह़क़ मारा और उस की ताक़त से ज़्यादा उस पर बोझ डाला या उस की इजाज़त के बिना उस से कोई चीज़ ले ली तो क़ियामत के दिन वह उस की तरफ़ से दावेदार होगा।" **(अबूदाऊद बैहक़ी-सुनने कुबरा भाग-५-२०५)**

एक दूसरी ह़दीस में आता है-

"जिस ने किसी ज़िम्मी को तकलीफ़ पहुँचाई मैं उस के ख़िलाफ़ मुद्दई हूँगा और मैं जिस के ख़िलाफ़ मुद्दई हूँगा उस के ख़िलाफ़ क़ियामत के दन दावा कर दूँगा"। **(रवाहुल् ख़तीब)**

एक और ह़दीस में है-

"जिस ने किसी ज़िम्मी को तकलीफ़ दी उस ने मुझे तकलीफ़ दी और जिस ने मुझे तकलीफ़ दी उस ने अल्लाह को तकलीफ़ पहुँचाई।" **(तबरानी)**

ख़ुल्फ़-ए-राशिदीन और ज़िम्मी

यही वजह है कि ख़ुलफ़-ए-राशिदीन के ज़माने से मुसलमान इस पर बहुत तवज्जोह देते रहे हैं कि ज़िम्मियों पर कोई ज़ुल्म न होने दें, उन्हें हर तकलीफ़ से बचाएँ और उन की तरफ़ से जो भी शिकायत मिले उस की पूरी छानबीन कर लें।

"ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) मुख़्तलिफ़ इलाक़ों से आने वाले गिरोह से ज़िम्मियों की ह़ालत ख़ासतौर पर दर्याफ़्त फ़रमाया करते थे कि कहीं किसी मुसलमान की तरफ़ से उन्हें कोई तकलीफ़ न पहुँच जाए और वह यही बताते थे।

"जहाँ तक हम जानते हैं ज़िम्मियों के साथ पूरी दयानतदारी का मामला हो रहा है" यानी ज़िम्मियों और मुसलमानों के दर्मियान मुआ़हिदा पर पूरा-पूरा अ़मल हो रहा है और दोनों फ़रीक़ इस की पाबन्दी कर रहे हैं।

(तारीख़ तबरी भाग-४-२१८)

ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) फ़रमाया करते थे कि-

"वह जिज़या इसलिए देते हैं कि उन के जान व माल की ह़ुरमत हमारी जान व माल की तरह हो जाए"। **(अलमुग़नी भाग ४४५, अल्बिदाया भाग-७-१११)**

ज़ुल्म की संगीनी

तमाम फ़ुक़हा (धर्म ज्ञाता) इस बात को वाज़ेह कर चुके हैं कि यह मुसलमानों का फ़र्ज़ है कि वह ज़िम्मियों को ज़ुल्म व सितम से बचायें और उन की ह़िफ़ाज़त करें क्योंकि ज़िम्मेदारी का अ़हद व पैमान करने के बाद मुसलमान उन्हें ज़ुल्म व सितम से बचाने के पाबन्द हैं और इस अ़हद व पैमान के बाद उन की वही हैसियत हो जाती है जो दारुस्सलाम के दीगर मुसलमान बाशिन्दों की है।

बल्कि बाज़ फ़ुक़हा ने तो यह राय ज़ाहिर की है कि ज़िम्मी पर ज़ुल्म व

सितम किसी मुसलमान पर ज़ुल्म व सितम से कहीं ज़्यादा संगीन समझा जाएगा। जैसे इब्ने आ़ब्दीन अपने ह़ाशिये में उस की यह बुनियाद बताते हैं कि दारुस्सलाम में चूँकि ज़िम्मी आ़म तौर से कम ताक़त वाला होता है इसलिए कमज़ोर पर ताक़तवर की ओर से ज़ुल्म ज़्यादा संगीन समझा जाएगा।

ज़िम्मियों की ह़िफ़ाज़त में उन की जान व माल और इ़ज़्ज़त व आबरु की ह़िफ़ाज़त शामिल है। इस पर मुसलमानों की सहमति है कि उन का क़त्ल ह़राम है।

जन्नत से दूरी

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया-

"जिस ने किसी ज़िम्मी को क़त्ल किया वह जन्नत की ख़ुशबू नहीं पाएगा जबकि जन्नत की ख़ुशबू ४० साल की मुसाफ़त जितनी दूरी से मह़सूस होने लगती है। **(अह़मद, बुख़ारी, नसई, अबूदाऊद, तिर्मिज़ी)**

इमाम अबू हनीफ़ा (रह़०) इमाम शाबीई (रह़०) इमाम नख़्ई(रह़०) इब्ने अबी लैला (रह़०) और इमाम अबू हनीफ़ा (रह़०) के अस्ह़ाब की यह राय है कि ज़िम्मी के क़त्ल के बदले मुसलमान को क़त्ल किया जाए क्योंकि किताब व सुन्नत से क़िसास की अ़मूमियत साबित है और ख़ून की ह़ुरमत दाईमी क़रार दी गई है।

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) से रिवायत है कि आप ने एक ज़िम्मी के क़त्ल पर एक मुसलमान को क़त्ल की सज़ा दी थी और यह फ़रमाया था कि-

"अ़हद की पासदारी मुझ से ज़्यादा कौन करेगा।"। **(अ़ब्दुर्रज़्ज़ाक़ व बैहक़ी)**

ग़ैर मुस्लिमों के ख़ून का बदला ख़ून

ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) के बारे में रिवायत है "कि उन के पास एक मुसलमान लाया गया जिस ने एक ज़िम्मी को क़त्ल कर दिया था और उस का सबूत मिल गया तो आप ने उस के क़त्ल का ह़ुक्म दिया। मक़्तूल का भाई आया और उस ने कहा कि मैंने माफ़ कर दिया है। ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) ने फ़रमाया

कि शायद उन लोगों ने तुम्हें डराया धमकाया है उस ने कहा नहीं बल्कि उस के क़त्ल से मुझे मेरा भाई तो वापस मिलने से रहा इस के अ़लावा उन्होंने मुझे बदला भी दिया है इसलिए मैं रज़ामंद हो गया हूँ। ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) ने फ़रमाया कि तुम बेहतर समझ सकते हो बहरहाल जो हमारी ज़िम्मेदारी में है उस के ख़ून की ह़ुरमत हमारे ख़ून ही की तरह़ है और उस की दियत(ख़ून बदला) भी हमारी दियत ही जैसी है। **(तबरानी व बैह़क़ी)**

एक दूसरी रिवायत में ह़ज़रत अ़ली का यह क़ौल है कि उन्होंने जिज़्या इसी लिए दिया है कि उन की जान व माल की ह़ुरमत हमारी जान व माल की तरह़ हो जाए।

मुसलमान का ज़िम्मी के बदले क़त्ल

ह़ज़रत उ़मर बिन अ़ब्दुल अ़ज़ीज़ से रिवायत है "कि उन्होंने उस मुसलमान के बारे में जिस ने एक ज़िम्मी को क़त्ल कर दिया था अपने एक गवर्नर को ह़ुक्म दिया कि उसे ज़िम्मी के वली के ह़वाले कर दिया जाए वह चाहे तो उसे क़त्ल कर दे और चाहे तो माफ़ कर दे, अतः उसे उस के ह़वाले कर दिया गया और उस ने उस की गर्दन उड़ा दी। **(मुसन्नफ़ अ़ब्दुर्रज़्ज़ाक़)**

धर्मज्ञाता कहते हैं कि इसी बुनियाद पर ज़िम्मी के माल की चोरी पर मुसलमान का भी हाथ काटा जाएगा क्योंकि माल जान से हल्की चीज़ है।

इसी मस्लक पर कई सदियों तक उ़स्मानी ख़िलाफ़त अ़मल करती रही यहाँ तक कि दुश्मने इस्लाम की कोशिशों से उस का चिराग़ ही गुल कर दिया गया।

ज़िम्मी को जिस्मानी सुरक्षा

यही नहीं कि इस्लाम ने केवल ज़िम्मियों की जानों की सुरक्षा प्रदान की बल्कि इस की भी ज़मानत दी है कि उन्हें कोई जिस्मानी तकलीफ़ न पहुँचाई जाए। वह अगर जिज़्या व ख़िरज जैसे माली वाजिबात की अदायगी में देर भी कर दें या रोक भी दें तब भी उन्हें जिस्मानी तकलीफ़ नहीं दी जा सकती, जबकि अगर मुसलमान ज़कात की अदायगी रोक दें तो पूरी सख़्ती की जाएगी। फ़ुक़हा ने

वाजिबात की अदायगी रोक देने वाले ज़िम्मियों के लिए सिर्फ़ इतनी गुंजाईश दी है कि उन्हें क़ैद कर दिया जाए लेकिन क़ैद में न कोई तकलीफ़ दी जाए न मशक़्क़त दी जाए। इमाम अबू यूसुफ़ ने लिखा है कि-

एक सह़ाबी ह़कीम (रज़ि०) बिन हिशाम ने ह़िम्स के वाली को देखा कि जिज़्या की अदायगी के सिलसिले में उवैस में कुछ लोगों को धूप में खड़ा कर रखा है तो उन्होंने फ़रमाया कि-

"यह क्या है? मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) को फ़रमाते हुए सुना है कि जो लोग दुनिया में लोगों को तकलीफ़ देंगे अल्लाह तआ़ला उन्हें आख़िरत में अ़ज़ाब से दो चार करेगा। **(मुस्लिम)**

(देखिए किताबुल ख़िराज १२५ व सुनन बैहक़ी भाग- २०५)

ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) की हिदायत-

ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) ने अपने ख़िराज के एक अफ़सर को लिखित हिदायत दी कि-

"जब तुम उन के पास पहुँचो तो उन के सर्दी व गर्मी के कपड़े और खाने की चीज़ें न बेच लेना न उन की ज़रुरत वाले जानवरों को लेना न उन में से किसी को एक कोड़ा भी लगाना न मुतालबात के लिए उन्हें पैरों पर खड़ा करना न ख़िराज के सिलसिले में उन के किसी सामान को बेचना क्योंकि हमें हुक्म दिया गया है कि उन के ज़रुरत से ज़ायद माल में से लें।

अगर तुम ने इस हुक्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी की तो मुझ से पहले अल्लाह तआ़ला तुम्हें पकड़ेगा और अगर मुझ तक उस की ख़िलाफ़वर्ज़ी की बात पहुँची तो मैं तुम्हें मअ़ज़ूल (सस्पेन्ड) कर दूँगा, अफ़सर ने कहा तब तो मैं इसी तरह़ (खाली हाथ) लौटूँगा जैसे जा रहा हूँ। आप ने फ़रमाया चाहे खाली हाथ इसी तरह़ लौट आना पड़े।"

(किताबुल्ख़िराज १५-१६ व सुनन बैहक़ी, भाग-६, २०५)

माल के ह़िफ़ाज़त की ज़िम्मेदारी

जान व जिस्म की ह़िफ़ाज़त ही की तरह़, माल के ह़िफ़ाज़ की भी ज़मानत दी गई है इस पर हर इलाक़े और हर ज़माने में हर गिरोह के मुसलमानों की सहमति रही है।

इमाम अबू यूसुफ़ (रह़०) ने अहले नजरान के सिलसिले में हुज़ूर (सल्ल०) के दौर का वाक़िआ़ लिखा है कि-

"बह़रैन और उस के आस पास के इलाक़े के लिए अल्लाह और उस के रसूल मुह़म्मद (सल्ल०) का ज़िम्मा है, उन के माल के बारे में, उन के मज़हब के बारे में, उन की ख़रीद व फ़रोख़्त के बारे में और जो कुछ कम या ज़्यादा उन के क़ब्ज़े में है उस के बारे में।" (किताबुल ख़िराज ७२)

ह़ज़रत उमर फ़ारुक़ (रज़ि०) की हिदायत-

ह़ज़रत उ़मर फ़ारूक़ (रज़ि०) के अ़हद में कमान्डर इन चीफ़ ह़ज़रत अबू उबैदह (रज़ि०) बिन जर्राह को हिदायत भेजी गई कि-

"मुसलमानों को ज़िम्मियों पर ज़ुल्म व सितम करने, उन्हें तकलीफ़ पहुँचाने और नाजायज़ तौर पर उनका माल हथियाने की हरगिज़ इजाज़त न दी जाए"-

ह़ज़रत अ़ली (रज़ि०) का यह क़ौल ऊपर ही गुज़र चुका है कि "ज़िम्मियों ने जिज़्या इसलिए दिया है कि उन की जान व माल की ह़ैसियत मुसलमानों की जान व माल जैसी हो जाए।"

मुसलमानों का अ़मल-

"मुसलमानों का हमेशा अ़मल भी इस पर रहा है। अगर किसी ने ज़िम्मी का माल चुराया तो उस का हाथ काट लिया गया जिस ने उस का माल लिया उसे सज़ा भी दी गई और माल भी लौटाया गया, जिस ने ज़िम्मी से क़र्ज़ लिया उसे क़र्ज़ वापस करना पड़ा और अगर क़र्ज़ लेने वाला अदायगी पर क़ादिर है यानी दीवालिया नहीं है और नहीं दे रहा है तो क़ाज़ी उसे जेल में डाल देगा यहाँ तक

कि वह क़र्ज़ की रक़म लौटा दे।"

शराब व ख़िंज़ीर और मुसलमान

ज़िम्मियों के माल व ज़ायदाद की हुरमत की रिआ़यत इस्लाम ने इतनी की, कि उस माल का एह़तिराम भी किया जो उन के दीन के ह़िसाब से है ह़ालाँकि मुसलमानों की नज़र में वह माल नहीं समझा जाता शराब व ख़िंज़ीर मुसलमानों के नज़दीक माल नहीं समझा जाता इसलिए अगर किसी मुसलमान के पास यह चीज़ें हों और कोई व्यक्ति उन्हें तबाह व बर्बाद कर दे तो उस पर न कोई जुर्माना होगा न कोई कार्रवाई की जाएगी बल्कि उसे सवाब ही मिलेगा किसी मुसलमान के लिए जायज़ नहीं कि वह उन चीज़ों को अपने पास रखे चाहे अपने लिए या बेचने की नियत से।

ग़ैर मुस्लिमों की शराब व ख़िंज़ीर का बदला

लेकिन यही शराब व ख़िंज़ीर ग़ैर मुस्लिम के क़ब्ज़े में हो तो वह उन का माल समझा जाएगा बल्कि फ़ुक़हा-ए-अह़नाफ़ के नज़दीक उन का क़ीमती माल समझा जाएगा और अगर किसी ने उसे तबाह व बर्बाद कर दिया तो पूरी क़ीमत जुर्माना में वसूल की जाएगी।

इ़ज़्ज़त व आबरू की ह़िफ़ाज़त

इस्लाम ज़िम्मी की इ़ज़्ज़त व आबरु के रक्षा की ज़मानत उसी तरह देता है जिस तरह मुसलमान के इ़ज़्ज़त व आबरु की ह़िफ़ाज़त का ज़ामिन है। किसी को भी इस की इजाज़त नहीं है कि वह ज़िम्मी को बुरा भला कहे, उस पर ग़लत इल्ज़ाम लगाए, उस पर आरोप लगाए, उस की ग़ीबत करे या उस की शख़्सियत नाम व नस्ब, जिस्मानी ह़ालत, अख़्लाक़ व आ़दात वग़ैरह के बारे में इस तरह की बातें करे जो उसे नापसंद हो। मालिकी फ़ुक़हा के शहाबुद्दीन कराफ़ी लिखते हैं:

"ज़िम्मेदारी लेने का मुआ़हिदा, हमारे ऊपर ज़िम्मियों के हुक़ूक़ वाजिब

करता है क्योंकि वह हमारे पास और हमारी ह़िफ़ाज़त में और अल्लाह तआ़ला, उस के रसूल (सल्ल०) और इस्लाम की ज़िम्मेदारी में हो जाते हैं जिस ने उन पर ज़्यादती की चाहे उन्हें बुरा भला कह कर, या उन की ग़ीबत करके उस ने अल्लाह तआ़ला उस के रसूल (सल्ल०) और इस्लाम की ज़िम्मेदारी को ज़ाया व बर्बाद किया हो।" **(अलफ़िरक़ भाग- ३-१४)**

मशहूर किताब दुर्रे मुख़्तार में है:-

"ज़िम्मी से तकलीफ़ को दूर करना वाजिब है और मुसलमान ही की तरह़ उस की ग़ीबत करना ह़राम है।"

अ़ल्लामा इब्ने आ़ब्दीन इस पर लिखते हैं कि ऐसा इसलिए कि ज़िम्मेदारी के मुआ़हिदे के साथ ही ज़िम्मी के वही हुक़ूक़ वाजिब हो जाते हैं जैसा हमारे लिए मुसलमान की ग़ीबत ह़राम है तो ज़िम्मी की ग़ीबत भी ह़राम है बल्कि कहा जाता है कि ज़िम्मी पर जुल्म ज़्यादा संगीन है।

(देखिए दुर्रे मुख़्तार ह़ाशिया इब्ने आ़बदीन भाग-३ ३४४-३४६)

ग़ैर मुस्लिमों के लिए रोज़ी-रोटी का हुक्म

इस से भी बढ़कर यह कि इस्लाम अपने इलाक़ों में ग़ैर मुस्लिमों के लिए इस की ज़मानत देता है कि उन्हें मुनासिब रोज़ी ह़ासिल हो क्योंकि वह एक इस्लामी मुल्क के नागरिक हैं जो सारी रिआ़या के बारे में जवाबदेह है।

रसूलुल्लाह (सल्ल०) फ़रमाते हैं-

"तुम में से हर एक निगेहबान उस के बारे में जवाबदेह है जिस का वह निगेहबान है।" **(बुख़ारी)**

ख़ुलफ़-ए-राशिदीन (रज़ि०) और उन के बाद के दौर में इसी पर अ़मल रहा है। ह़ज़रत ख़ालिद (रज़ि०) बिन वलीद ने इराक़ में अहले ह़ीरह के लिए जो ईसाई थे मुआ़हिदे में यह भी लिखा था कि-

बूढ़ों को पेंशन

"उन में से जो शख़्स भी बूढ़ा होकर काम के क़ाबिल न रह जाए या किसी माज़ूरी या मुसीबत का शिकार हो जाए या मालदार से मुफ़्लिस हो जाए और उस के मक़रूज़ इस पर सदक़ः करने लगें तो उस का जुर्माना ख़त्म कर दिया जाएगा और उस की और उस के अहलो अ़याल की परवरिश मुसलमानों के बैतुल माल से की जाएगी। **(किताबुल ख़िराज-१४४)**

यह वाक़िआ़ ह़ज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि०) के दौर का है और बड़ी संख्या में सह़ाबा (रज़ि०) की मौजूदगी में हुआ। ह़ज़रत ख़ालिद (रज़ि०) ने इस के बारे में ह़ज़रत अबूबक्र (रज़ि०) को लिखा और किसी ने भी इस से इख़्तिलाफ़ नहीं किया। इस तरह का अ़मल इज्मअ़ कहलाता है।

ग़ैर मुस्लिम बूढ़ों की मदद

ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने एक यहूदी बूढ़े शख़्स को लोगों के सामने माँगते देखा तो उस के बारे में मालूम किया तो मालूम हुआ कि बुढ़ापे और ज़रुरतमंदी की वजह से वह इस पर मजबूर हुआ है आप ने उसे अपने साथ लिया और बैतुल माल के ख़ज़ाने के पास ले गये और हिदायत फ़रमाई के इसे और इस जैसे लोगों को बैतुल माल से इतनी रक़म दी जाए, जिस से इन के ह़ालात दुरुस्त हो जायें और इन की ज़रुरियात पूरी हो जायें।

आप ने यह भी फ़रमाया कि अगर हम उस से जवानी में जिज़्या लें और बुढ़ापे में ज़लील व ख़्वार होने के लिए छोड़ दें तो यह इन्साफ़ नहीं होगा।

(किताबुल् ख़िराज १२६)

ग़ैर मुस्लिम बीमारों की मदद

ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) जब शाम के इलाक़े जाबिया से गुज़र रहे थे तो आप ने कुछ ईसाई कोढ़ियों को देखा आप ने हुक्म दिया कि सद्क़ात में से इन्हें दिया जाए और इन का रोज़ाना मुक़र्रर कर दिया जाए यानी हुकूमत पूरे तौर पर इन

के रोज़ी की ज़िम्मेदारी ले। **(फ़ुत्हुल बुलदान लिल्बलाज़री-१७७)**

हर इन्सान की बुनियादी ज़रुरत की ज़िम्मेदारी

इस तरह़ इस्लाम में सोशल इन्शोरेंस को एक आ़म उसूल की ह़ैसियत से तस्लीम किया गया है, जो समाज के हर व्यक्ति पर आधारित है, चाहे वह मुसलमान हो या ग़ैर मुस्लिम, इस तरह उस का कोई जवाज़ बाक़ी नहीं रह गया कि मुस्लिम समाज में कोई भी इन्सान खाने कपड़े, मकान और इलाज से मह़रूम रह जाए क्योंकि हर इन्सान से परेशानी दूर करना एक दीनी फ़रीज़ा है चाहे वह मुसलमान हो या ज़िम्मी।

सर्दी गर्मी के कपड़े डाक्टरों की फ़ीस

अ़ल्लामा शम्सुद्दीन रमल्ली शाफ़ई ने अपनी किताब "निहायतुल मोह़ताज इलश्शरहुल मिन्हाज" में लिखा है कि-

ज़िम्मी इस सिलसिले में मुसलमानों ही की तरह़ हैं इसलिए उन से परेशानी दूर करना वाजिब है।

आगे चलकर अ़ल्लामा रमल्ली परेशानी दूर करने के माने व मफ़्हूम पर बह़स करते हुए लिखते हैं कि इस से क्या मुराद है कि इतनी रोज़ी फ़राहम की जाए जिस से जिस्म व जान का रिश्ता बरक़रार रहे या इतनी कि पूरी तरह़ काफ़ी हो? ज़्यादा सह़ी क़ौल यह है कि इतनी किफ़ायत की जाए जो खाने कपड़े के लिए किफ़ायत करे इस में सर्दी व गर्मी के कपड़े भी शामिल हैं। डाक्टर की फ़ीस और दवाओं की क़ीमत और एक ख़ादिम भी शामिल है।

इसी तरह़ मुसलमान व ज़िम्मी क़ैदियों को रिहा कराना भी परेशानी दूर करने में शामिल है। **(देखिए निहायतुल मोह़ताज अला शरहुल् मोह़ताज)**

ग़ैर मुस्लिम को पूरी मज़हबी आज़ादी

ज़िम्मियों के जिन हुकूक़ की ज़मानत दी गई है उन में आज़ादी भी शामिल है और सब से अहम आज़ादी एतिक़ाद व इ़बादत की आज़ादी है। हर शख़्स का

अपना दीन व मज़हब होता है उसे बदलने पर न मजबूर किया जा सकता है न अपना मज़हब छोड़ कर इस्लाम कुबूल करने के लिए किसी तरह का दबाव डाला जा सकता है। इस की बुनियाद अल्लाह तआ़ला का यह है।

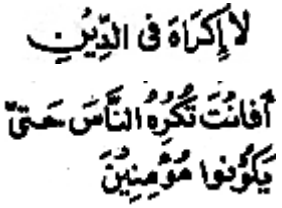
لَا إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ
أَفَأَنتَ تُكْرِهُ النَّاسَ حَتَّىٰ
يَكُونُوا مُؤْمِنِينَ

दीन के मामले में कोई ज़ोर ज़बरदस्ती नहीं। हिदायत गुमराही से अलग हो चुकी है।

क्या तू लोगों पर ज़बरदस्ती करेगा कि वह बेईमान हो जायें।

व्याख्या-

'इब्ने कसीर' पहली आयत की तफ़्सीर में लिखते हैं कि किसी को दीने इस्लाम में दाख़िल होने के लिए मजबूर न किया जाए क्योंकि यह बिल्कुल वाज़ेह है और इस के लिए दलीलों की बिल्कुल ज़रुरत नहीं कि किसी को कुबूल करने के लिए मजबूर किया जाए।

इब्ने अ़ब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि दौरे जिहालत में अन्सार की औ़रतें अगर औलाद से महरूम या क़लील औलाद होती थीं तो मन्नत मानती थीं कि अगर उन का कोई लड़का ज़िन्दा रहेगा तो उसे यहूदी बना देंगे। जब बनू नज़ीर मदीना मुनव्वरा से जिला वतन किये गये तो उन में अन्सारियों के कई लड़के भी थे उन के बाप ने कहा कि हम अपने बेटों को नहीं छोड़ेंगे। (यानी यहूदी मज़हब पर नहीं रहने देंगे कि वह भी जिलावतन हों) तब अल्लाह तआ़ला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई।

दीगर मोह़द्दिसिन ने भी इस आयत के शाने नुज़ूल में इसी तरह़ की रिवायतें नक़्ल की हैं। **(तफ़्सीर इब्ने कसीर भाग-१-३१०)**

ईसाईयों का जब्र-

इस के बावजूद जब्र की कोशिश उन बापों की तरफ़ से होती थी जो उस वक़्त पूरी दुनिया मे दीन व मस्लक के मुख़ालिफ़ीन पर जुल्म व सितम के पहाड़ टूटने का चलन था।

"जैसा कि रुसी सल्तनत में हो चुका था कि वहाँ रिआ़या को ईसाई मज़हब कुबूल करने या क़त्ल हो जाने में से एक बात का अख़्तियार दिया जाता। फिर जब सल्तनत का मज़हब मालिकाना हो गया तो उस के न मानने वाले याकूब ईसाइयों वग़ैरह का क़त्ल आ़म किया गया।)

इन सब के बावजूद कुर्आने ने इकराह व जब्र को ख़त्म कर दिया जिसे अल्लाह तआ़ला हिदायत दे और उस का सीना खोल दे वह इत्मिनाने क़ल्ब के साथ इस्लाम कुबूल करे और जिस का दिल न चाहे तो उसे जबरन इस्लाम में दाख़िल करने से क्या फ़ायदा।

इस्लाम कुबूल करने का मतलब दिल से कुबूल करना है, क्योंकि इब्ने कसीर के शब्द में ईमान मुसलमानों के नज़दीक उस का नाम नहीं कि ज़बान से एक कलिमा अदा कर दिया जाए और जिस्मानी तौर पर कुछ रुसूम अदा कर ली जायें बल्कि उस की बुनियाद तो क़ल्ब के इक़रार व यक़ीन व तस्लीम पर है।

यही वजह है कि तारीख़ में कोई ऐसी मिसाल नहीं मिलती कि किसी मुस्लिम ने ज़िम्मियों को इस्लाम कुबूल करने पर मजबूर किया हो जिसका एतिराफ़ ख़ुद पश्चिमी इतिहासकारों ने भी किया है।

ग़ैर मुस्लिमों के इ़बादतगाहों की रक्षा

इसी तरह़ इस्लाम ने ग़ैर मुस्लिमों की इ़बादातगाहों की रक्षा और उन के शआ़यर की ह़ुरमत की ज़मानत भी दी है बल्कि कुर्आन ने इ़बादात की आज़ादी की ह़िफ़ाज़त को भी जंग की इजाज़त के अस्बाब में शुमार किया है।

إِلَّذِينَ أُخْرِجُوا مِن دِيَارِهِم بِغَيْرِ حَقٍّ إِلَّا أَن يَقُولُوا رَبُّنَا اللَّهُ ۗ وَلَوْلَا دَفْعُ اللَّهِ النَّاسَ
بَعْضَهُم بِبَعْضٍ لَّهُدِّمَتْ صَوَامِعُ وَبِيَعٌ وَصَلَوَاتٌ وَمَسَاجِدُ يُذْكَرُ فِيهَا اسْمُ اللَّهِ
كَثِيرًا ۗ وَلَيَنصُرَنَّ اللَّهُ مَن يَنصُرُهُ ۗ إِنَّ اللَّهَ لَقَوِيٌّ عَزِيزٌ ﴿٤٠﴾

अनुवाद-

(यह वे लोग हैं) जो अपने घरों से नाह़क़ निकाले गये, केवल इस बात

पर कि वे कहते हैं, ''हमारा 'रब' अल्लाह है,'' अगर अल्लाह लोगों को एक - दूसरे से न हटाता रहता, तो खानक़ाहें (मठ), और गिरजा, और यहूदी प्रार्थना भवन, और मस्जिदें जिनमें अल्लाह का खूब नाम लिया जाता है, सब ढ़ा दिये जाते, और अल्लाह उसकी ज़रूर मदद करेगा, जो 'उसकी' मदद करेगा; बेशक अल्लाह बड़ा ज़बर्दस्त, ताक़त वाला है; **(सूरः ह़ज आयत ४०)**

हम पहले लिख चुके हैं कि मुह़म्मद (सल्ल०) के दौर में अहले नजरान को किस तरह़ उन के दीन व मज़हब और माल व दौलत के आज़ादी की ज़मानत दी गई और उसे अल्लाह और उस के रसूल (सल्ल०) की ज़िम्मेदारी क़रार दिया गया था।

ईलिया के ग़ैर मुस्लिमों के साथ मुआ़हिदा (सन्धि)

ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) बिन ख़त्ताब के दौर में अहले ईलिया (कुदुस) के लोगों के साथ जो मुआ़हिदा हुआ था उस के शब्द यह हैं:-

"ख़ुदा के बन्दे उ़मर अमीरुल मोमिनीन ने ईलिया के नागरिकों को अमान दी, जान व माल की अमान, उन के कलीसाओं और सलीबों और दीन के ह़िफ़ाज़त की ज़मानत, उन के कलीसाओं में कोई दख़्ल अन्दाज़ नहीं होगा न उन्हें गिराया और नुक़सान पहुँचाया जाएगा न उन की सलीब ली जाएगी न उन का कोई माल छीना जाएगा न मज़हब के सिल्सिले में उन पर कोई जब्र किया जाएगा न उन में से किसी को तकलीफ़ दी जाएगी।

(तारीख़ तबरी, भाग-३- ६०६)

ह़ज़रत ख़ालिद (रज़ि०) के मुआ़हिदा में नाक़ूस बजा सकते थे

ह़ज़रत ख़ालिद (रज़ि०) बिन वलीद ने आ़नात के लोगों के साथ जो मुआ़हिदा किया उस में यह शब्द शामिल थे"।

नमाज़ के अवक़ात के अ़लावा वह रात व दिन में जब चाहें नाक़ूस बजा

सकते हैं और अपने जश्न के दिनों में जुलूस निकाल सकते हैं।

(किताबुल् ख़िराज १४६)

इस्लाम ग़ैर मुस्लिमों से केवल इतना चाहता है कि वह मुसलमानों के जज़्बात का थोड़ा सा ख़याल रखें और उन के मज़हब की हुरमत को पामाल न करें वह किसी मुस्लिम आबादी में इस तरह़ का मुज़ाहिरा न करें जिस से मुसलमानों के जज़्बात टूटते हों और फ़ित्ना व फ़साद की आग भड़क उठे।

ग़ैर मुस्लिम इ़बादतगाहें बना सकते हैं

बहुत से फ़ुक़हा ने इस की इजाज़त दी है कि ज़िम्मी मुस्लिम इलाक़ों में इ़बादतगाहें तअ़मीर कर सकते हैं। उन मुमालिक में जिन्हें जंग व जिदाल के बाद फ़तेह़ किया गया है और वहाँ के लोगों ने ख़ूब लड़ाईयों के बाद हथियार डाला है वहाँ भी ह़ाकिम को ह़क़ है कि वह ग़ैर मुस्लिमों की इ़बादतगाहें तअ़मीर करने की इजाज़त दे। मज़हब व एतिक़ाद की आज़ादी भी पूरी होगी ही।

यही राय ज़ैदियों और इमाम इब्ने क़ासिम की भी है।

(अह़कामुल् ज़िम्मीन व मुस्तामिनीन ६६-६६)

गिरजाघरों की तअ़मीर

मुसलमानों का इतिह़ास बताता है कि शुरु ही से इस पर अ़मल हो रहा है कि पहली सदी हिजरी में मिस्र में बहुत से गिरजाघर तअ़मीर हुए। इस्कन्दरिया का मशहूर गिरजाघर "मारमर्क़स" ३६ हि० से ५६ हि० के दर्मियान तअ़मीर हुआ। अ़ब्दुल अ़ज़ीज़ बिन मरवान ने जब ह़ल्वान शहर बसाया तो एक गिरजाघर बनाने की भी इजाज़त दी इसी तरह़ पादरियों को दो इ़बादतगाहें बनाने की भी इजाज़त दी।

इस तरह़ की बहुत सी मिसालों का ज़िक्र इतिह़ासकार मक़रीज़ी ने अपनी किताब "अल्ख़त्तुत" में किया है और यह कह कर अपनी बात ख़त्म की है कि क़ाहिरा के तमाम गिरजाघर इस्लाम के दौर ही में तामीर हुए।

{देखिए डाक्टर अ़ली ह़सन ख़रबोतली की किताब इस्लाम और अहले ज़िम्मा १३६ और थाम्स आरनल्ड की किताब दअ़वते इस्लाम ८४-८६}

रहे वह गांव और इलाक़े जो मुसलमानों की बस्ती नहीं समझे जाते उन में तो उन्हें अपने दीनी शआयर के मुज़ाहिरे की पूरी आज़ादी ह़ासिल ही होती है वह अपनी ज़रुरत के मुताबिक़ जैसे चाहें करें।

दीन के विरोधियों के साथ बर्ताव

उस क़ौम की तरफ़ से, जिस के ज़िन्दगी की पूरी बुनियाद ही दीन पर हो और दीन ही के ज़रिए जिस ने कामियाबी व ग़ल्बा ह़ासिल किया हो, अपने दीन के मुख़ालिफ़ीन के साथ इस तरह़ की रवादारी की कोई मिसाल दूसरे मज़ाहिब के इतिह़ास में नहीं मिलती जिसे पश्चिम ने भी इस का एतिराफ़ किया है।

मशहूर फ्रांसीसी लेखक मुसन्निफ़ लोबोन लिखते हैं

"क़ुर्आन की जिन आयात का अभी हम ने ज़िक्र किया है उन से पता चलता है कि यहूदियों और ईसाईयों के साथ (ह़ज़रत) मुह़म्मद (सल्ल०) की रवादारी कितनी अ़ज़ीम थी। इस तरह की बात आप से पहले के मज़ाहिब ख़ासतौर पर यहूदियत व ईसाईयत में नहीं मिलती।

हम देखते हैं कि आप (सल्ल०) के ख़ुलफ़ा आप ही की सुन्नत पर चले इस रवादारी का एतिराफ़ योरोप के शक्की लोगों ने भी किया है और उन लोगों ने जिन्होंने इतिह़ासे अ़रब का गहरा अध्ययन किया है, उन में से बहुत से ह़ज़रात की किताबों से लिये गये पैराग्राफ़ साबित करते हैं कि इस बारे में तन्हा हमारी राय ही ऐसी नहीं है। जैसे- **रोबर्टसन** अपनी किताब "तारीख़ शारलकन" में लिखता है कि "मुसलमान तन्हा वह क़ौम हैं जिस ने अपने अन्दर अपने दीन के साथ ग़ैरत और दीगर मज़ाहिब के मानने वालों के साथ रवादारी को जमा किया और बावजूद यह कि वह अपने दीन को फैलाने के बारे में बड़े पुरजोश थे जो लोग इस्लाम से रग़बत नहीं रखते थे उन्हें अपनी दीनी तअ़लीमात पर बरक़रार रहने के लिए उन्होंने आज़ाद छोड़ दिया। **(ह़ाशिया अ़रब तहज़ीब १२८)**

ग़ैर मुस्लिमों को तिजारत की आज़ादी

इस्लाम ग़ैर मुस्लिमों को रोज़गार और तिजारत की पूरी आज़ादी की ज़मानत देता है वह आज़ादाना कोई भी काम कर सकता है चाहे मुसलमानों के साथ शरीक होकर कोई काम करे या अपने से जो भी पेशा चाहे अख़्तियार करें और मुसलमानों की तरह़ जैसे चाहें मुख़्तलिफ़ क़िस्म के तिजारती कामों में ह़िस्सा ले सकता है।

सूदी कारोबार पर रोक

फ़ुक़हा का क़ौल है कि ख़रीद व फ़रोख़्त, तिजारत और माली मामलात में ज़िम्मी मुसलमान एक ही ह़ैसियत रखते हैं और सूदी कारोबार उनसे अलग नहीं मुसलमानों की तरह उन के लिए भी मना है ख़ुद रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने ह़िज्र के मजूसियों को लिखा था कि सूदी कारोबार छोड़ दो अल्लाह और उस के रसूल (सल्ल०) की मुख़ालिफ़त का सामना करने के लिए तैयार हो जाओ।

ग़ैर मुस्लिमों की दीनी काम के अ़लावह हर पद पर नियुक्ति

जिन पदों पर दीनी छाप होती थी जैसे इमामत, सत्ता की सरबराही फ़ौज की सिपहसालारी, मुसलमानों के मामलात, फ़ैसला करने वाले क़ाज़ी, और ज़कात व सद्क़ात के निज़ाम की निगरानी, इन के अ़लावा दूसरे तमाम सरकारी पदों पर मुसलमानों ही की तरह ग़ैर मुस्लिमों को नियुक्त भी किया जाता था।

ज़िम्मेदारी का ह़क़-

इस्लाम में इमामत व ख़िलाफ़त का मन्सब दीनी व दुनयावी दोनों ह़ैसियत रखता है इसलिए इस पर किसी ग़ैर मुस्लिम की नियुक्ति नहीं हो सकती थी

क्योंकि इस्लामी अह़काम से वाक़िफ़ कोई मुसलमान ही इस ज़िम्मेदारी का ह़क़ अदा कर सकता है। इसी तरह फ़ौज की सिपेहसालारी को केवल दुनियवी काम नहीं समझा जाता है, बल्कि इस्लाम में उसे इ़बादात का जुज़ समझा जाता है क्योंकि इस्लामी इ़बादात में जिहाद का बड़ा दर्जा है।

इसी तरह़ क़ाज़ी का मतलब इस्लामी शरीअ़त के मुताबिक़ फ़ैसला करना था और जो इस्लामी शरीअ़त को मानता ही न हो उस से इस ज़िम्मेदारी को पूरा करने की आशा कैसे की जा सकती थी। ज़कात व सद्क़ात के निज़ाम की निगरानी आदि भी दीनी काम थे।

इन के अ़लावा हुकूमत के सारे पदों पर ग़ैर मुस्लिमों को नियुक्त किया जा सकता था, बशर्ते कि उन में योग्यता भी हो और मुमलिकत के साथ वफ़ादारी व दियानतदारी भी। ज़ाहिर है अहलियत, दियानत और मन्सब के मुताबिक़ वफ़ादारी हर समाज में ज़रुरी चीज़ समझी जाती है इसी तरह क़ुर्आन की इस आयत में इशारा किया गया है।

रवादारी का सिल्सिला यहाँ तक बढ़ा कि बड़े-बड़े फ़ुक़हा ने वाज़हे तौर पर लिखा है कि ज़िम्मी को अ़मल करवाने की विज़ारत सौंपी जा सकती है वज़ीरे तन्फ़ीज़ का मन्सब होता है कि वह इमाम व ख़लीफ़ा के अह़काम को नाफ़िज़ करे और उन पर अ़मल कराए इस तरह एक मन्सब वज़ीर तन्फ़ीज़ का होता था यानी इमाम व ख़लीफ़ा सियासी इन्तिज़ाम और इक़्तिसादी उमूर की देखभाल की ज़िम्मेदारी किसी मंत्री को सौंपता था।

ईसाईयों को मन्त्रालय के पद

ईसाईयों को कई बार मन्त्री के पद पर नियुक्त किया गया। जैसे नस्र बिन हारुन ३५६ हि० में और ईसा बिन नस्तूरस ३८० हि० में ख़ुद ह़ज़रत मुआ़विया (रज़ि०) बिन अबी सुफ़्यान का एक सेक्रेट्री सर जॉन नामी ईसाई था।

इस सिल्सिले में मुसलमानों की सहिष्णुता अक्सर तो इस ह़द तक बढ़ जाती थी कि मुसलमानों के हुकूक़ प्रभावित होने लगते होते थे और मुसलमान बिन ह़क़ व अहलियत के यहूदियों और ईसाईयों के प्रभावी होने की शिकायत करने

लगते थे, आदम मुतय्यिज़ लिखते हैं।

"जिन मामलात पर हमें तअ़ज्जुब होता है उन में से एक इस्लामी मुमालिक में ग़ैर मुस्लिम ओ़हदेदारों और सीनियर हुक्काम की कसरत थी ह़क़ीक़त तो यह लगती है कि इस्लामी शासन में मुसलमानों पर हुकुमत वास्तव में ईसाई कर रहे थे। ग़ैर मुस्लिमों को सर चढ़ाने की मुसलमानों की शिकायत बहुत पुरानी है।"

(इस्लामी तहज़ीब चौथी सदी हिजरी में भाग १०५)

जिज़्या क्या है

जिज़्या एक ऐसा सालाना टैक्स है जो साह़िबे ह़ैसियत व तन्दुरुस्त मर्दों पर एक मामूली रक़म की सूरत में लगाया जाता है मुफ़्लिस व नादार लोग, औ़रतों, बच्चों, बूढ़ों और माज़ूर इस दायरे में नहीं आते।

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता हैं:

لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا مَآ اٰتٰهَا

(सूरः तलाक़-७)

अनुवाद-

"अल्लाह किसी पर बोझ नहीं डालता मगर उसी क़दर जो उस को दिया।"

जिज़्या की कोई मुक़र्ररह मिक्दार नहीं है बल्कि इमाम या ख़लीफ़ा को ह़क़ है कि वह अदायगी करने वालों को परेशानी में डाले बिना उन की ह़ैसियत का लिह़ाज़ करते हुए मुक़र्रर करे।

जिज़्या की मिक़्दार

ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने साह़िबे इस्ताअ़त लोगों में ज़्यादा ख़ुशह़ाल लोगों पर ४८ दिरहम। दर्मियानी (सामान्य) लोगों पर २६ दिरहम। और कम ख़ुशहाल लोगों पर १२ दिरहम सालाना जिज़्या मुक़र्रर किया था।

(इस तरह वह कुव्वते अदायगी के अन्तर के साथ टैक्स के अन्तर के

उसूल के बानी भी समझे जाते हैं) खुद रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने जब हज़रत मुआज़ (रज़ि०) को यमन भेजा था तो-

हर बालिग़ साहिबे इस्ताअ़त व्यक्ति से एक दीनार की हिदायत फ़रमाई थी। चूंकि यमन में ज़्यादा खुशहाली नहीं थी इसलिए आप (सल्ल०) ने वहां के लोगों की हालत की रिआयत फ़रमाई इसलिए आप (सल्ल०) के फ़रमान और हज़रत उमर (रज़ि०) के हुक्म में कोई इख़्तिाफ़ नहीं है।

सुन्नत यह भी है कि आप ने बहरैन के मजूसियों से जिज़्या लिया। इसी तरह खुलफ़-ए-राशिदीन (रज़ि०) ने तमाम मफ़तूहा इलाक़ों में अहले किताब-और जो भी उन के हुक्म में थे। सबसे जिज़्या लिया और इसी पर अमल होता रहा और उसे इजमाअ़ (सहमति) की सूरत हासिल हो गई।

ख़िराज किसे कहते हैं

ख़िराज उस मालगुज़ारी को कहते हैं जो जंग के बाद मफ़तूहा इलाक़ों की क़ाबिले काश्त आराज़ी पर लगाया जाता था। यह ज़मीनें उन के अस्ल मालिकों के क़ब्ज़े में रहने दी गई थीं और उन पर उन की पैदावार की मुनासिबत से एक मुक़र्ररह मिक़दार (मस्लन चौथाई) या मुक़र्ररह वज़न या नाप से ग़ल्ला या क़ीमत बतौर ख़िराज वसूल की जाती थी।

इस ख़िराज की हैसियत यह थी कि चूंकि मुसलमानों पर खेत की पैदावार पर ज़कात फ़र्ज़ है और ग़ैर मुस्लिमों पर नहीं है इसलिए ग़ैर मुस्लिमों यानी ज़िम्मियों से खेत की पैदावार पर ज़कात के बजाए ख़िराज वसूल किया जाता था। अब अगर ऐसी ख़िराजी ज़मीन का ग़ैर मुस्लिम मालिक इस्लाम क़ुबूल कर लेता था या उस ज़मीन को कोई मुसलमान ख़रीद लेता था तो उसे भी ख़िराज देना पड़ता था।

इमाम अबू हनीफ़ा (रह०) उन के अस्हाब, इमाम लैस (रह०) बिन सअ़द, इमाम शअ़बी और इकरमा (रह०) से यही क़ौल मन्क़ूल है दीगर आइम्मा के नज़दीक ऐसी सूरत में ख़िराज के साथ मुसलमान पर ज़रई पैदावार की ज़कात

भी वाजिब है। **(देखिए अलूअमवाल ६१ और अस्सनफ़ भाग-३ २०१)**

वतन की हिफ़ाज़त के इख़राजात में शिरकत के लिए ग़ैर मुस्लिम शहरियों पर जो टैक्स लगाया गया है उसे इस्तलाह़न जज़्या कहते हैं। अतः जिज़्या की हक़ीक़त सिर्फ़ इतनी है कि वह फ़ौजी ख़िदमात का माली बदल है।

ज़िज़्या किससे लिया जाएगा

इस्लाम ने जिज़्या सिर्फ़ उन मर्दो पर वाजिब क़रार दिया है जो हथियार उठाने के लायक़ हों औरतों बच्चों और माज़ूरों पर कोई जिज़्या नहीं। हज़रत उमर (रज़ि०) का क़ौल मशहूर है कि "औरतों और बच्चों पर जिज़्या न लगाओ।"

फ़ुक़हा कहते हैं कि अगर कोई औरत जिज़्या अदा करके दारुलइस्लाम में दाख़िल होना चाहे तो उसे दाख़िल होने की इजाज़त दे दी जाएगी लेकिन जिज़्या वापस कर दिया जाएगा क्योंकि वह नाह़क़ लिया गया है अलूबत्ता अगर वह यह जानते हुए कि इस पर जिज़्या वाजिब नहीं बतौर चन्दा कुछ दे तो उसे लिया जा सकता है।

औरतों और बच्चों के हुक्म में बूढ़े, अंधे और अपाहिज भी दाख़िल हैं क्योंकि वह हथियार उठाने की सलाहियत नहीं रखते। इसी तरह उन राहिबों का भी जज़िया माफ़ है जो अपनी ख़ानक़ाहों में गोशा नशीन हों क्योंकि वह भी जंग करने वालों में शामिल नहीं समझे जाते। **(मतालिब भाग-२-६२)**

इस्लाम की इस सहिष्णुता पर एक ग़ैर मुस्लिम लिखता है-

आर्मिटेज़ लिखता है:-

"मुसलमानों की सहिष्णुता और हिफ़ाज़त में ज़िम्मी जिज़्या अदा करते थे। हर ज़िम्मी अपनी माली हालत के लिहाज़ से। यह जिज़्या क़ौमी व दिफ़ाअ़ के टैक्स के समान था और उसे वही शख़्स अदा करता था जो हथियार उठाने की सलाहियत रखता हो। अपाहिज व माज़ूर, राहिब व सूफ़ी ख़ानक़ाहों और इबादतगाहों के लोगों से नहीं।" **(इस्लामी तहज़ीब भाग- १-६२)**

जिज़्या लेने का कारण

ज़िम्मियों पर जिज़्या लगाने की एक दूसरी वजह भी थी और यह वही वजह है जिस का सहारा हर ज़माने में कोई भी हुकूमत टैक्स लगाते वक़्त लेती है यानी तमाम लोगों के फ़ाइदे के इख़राजात जैसे पुलिस और अ़दालत का निज़ाम सड़को की तामीर के काम जो आर्थिक बेहतरी के लिए ज़रुरी हैं और जिन से हर शहरी चाहे वह मुसलमान हो या ग़ैर मुस्लिम बराबर फ़ायदा उठाते हैं। मुसलमान ज़कात, सदक़-ए-फ़ित्र और दीगर टैक्सों की सूरत में इस तरह़ के इख़राजात में ह़िस्सा लेते हैं अगर ग़ैर मुस्लिम जिज़्या की सूरत में एक मामूली रक़म के ज़रिये उन में ह़िस्सा लें तो तअ़ज्जुब की क्या बात होगी।

यही वजह है कि फ़िक़ह मालिकी की किताबों में जिज़्या के अह़काम ज़कात के अह़काम के साथ बयान किये हैं।

(रिसाला इब्ने अबी ज़ैद मअ़ शरह़ भाग-३३१)

जिज़्या जमा करने का तरीक़ा-

जिज़्या जमा करने का तरीक़ा यह था कि साल में एक बार नक़्द या जिन्स व सामान की सूरत में लिया जाता था मगर शराब, मुरदार या ख़िन्ज़ीर को क़ुबूल नहीं किया जाता था। ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने ज़िम्मियों को इस सिलसिले में ढ़ील देने की हिदायत जारी कर रखी थी-

जिज़्या किन को माफ़ है-

"जो जिज़्या देने की सलाह़ियत न रखता हो उसे छोड़ दो। जो मजबूरी मह़सूस करें उस की मदद करो क्योंकि यह साल दो साल का मामला नहीं है।"

अतः जिज़्या की वसूली में कभी-कभी ताख़ीर कर दी थी ताकि फ़सल वग़ैरह तैयार हो जाए और लोग आसानी से अदा कर सकें।

(अह़काम सुल्तानिया-मावर्दी-१३८)

(तारीख़ दिमश्क-इब्ने अ़साकिर भाग-१-१७८ और अल् अमवाल ४४)

जिज़्या में नर्मी-

इस्लामी हुकूमत जिज़्या की वसूली में नर्म व रह़मदिली से काम लेती थी एक बार जब ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) के एक अफ़सर ने जिज़्या का माल आप के सामने पेश किया तो आप को वह ज़्यादा लगा आप ने फ़रमाया कि-

"लगता है तुमने लोगों को तबाह व बर्बाद कर डाला।"

अफ़सर ने कहा कि ख़ुदा की क़सम हम ने बड़ी नर्मी व रह़मदिली के साथ वसूल किया है। ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने फ़रमाया कि बग़ैर किसी सख़्ती और जबरदस्ती के?

अफ़सर ने कहा जी हाँ तब ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) ने इज़हारे इत्मिनान करते हुए फ़रमाया कि "ख़ुदा का शुक्र है कि उस ने न मेरे हाथ से कोई ज़ुल्म व ज़्यादती होने दी और न मेरे शासन काल में।" **(अल् अमवाल ७१०-७१२)**

इस में शक नहीं कि कुछ मुस्लिम बादशाह ऐसे भी गुज़रे हैं जिन्होंने ज़िम्मियों (ग़ैर मुस्लिमों) पर ज़ुल्म व सख़्ती की लेकिन उन की तअ़दाद बहुत ही कम है और ऐसे बादशाहों ने ग़ैर मुस्लिमों से ज़्यादा मुसलमानों पर मज़ालिम ढ़ाए। ज़ालिम किसी ह़द का पाबन्द नहीं होता, लेकिन अक्सर ज़ालिम हुक्काम मुसलमानों पर तो ज़ुल्म तोड़ते और ज़िम्मियों से नर्मी बरतते थे यहां तक कि मालिकी फ़िक़ह़ अ़ल्लामा दर-दर जो अपने वक़्त में मिस्र के उलमा के सरख़ेल थे एक जगह लिखते हैं कि उन के दौर के हुक्काम ने मुसलमानों के मुक़ाबले में ज़िम्मियों को सर चढ़ा रखा है काश वह मुसलमानों को ज़िम्मियों से कुछ कम दर्जा दे देते। मुसलमान अक्सर कहते हैं कि काश हुक्काम हम पर भी यहूदियों और ईसाईयों की तरह जिज़्या लगा देते और उन्हीं की तरह हमें भी आज़ाद छोड़ देते।

(शरह़ सग़ीर ह़ाशिया सादी भाग-१ ३६९)

शाँतिवादी धर्म

अब देखिए जिज़्या की वास्तविकता। ईसाईयों और मुसलमानों में युद्ध होता रहता था, यहूदी भी मुसलमानों के शत्रु थे। ईरानियों से भी सम्बन्ध कटुतापूर्ण

हो गया था, जो शत्रु अन्त तक युद्ध करते पराजित हो जाते थे नियमानुसार उनके जन धन सब पर विजेता का अधिकार हो जाता था।

इस्लाम शांति वादी धर्म है इसलिए ईश्वर की ओर से यह आदेश उतरा है कि यदि यहूदी अथवा ईसाई मुसलमानों से युद्ध कर रहे हों और पराजित होने से पहले पहले तक यदि जिज़्या देने की शर्त पर मुसलमानों की अधीनता स्वीकार करके युद्ध बन्द कर देने की याचना करें तो उनकी याचना स्वीकार कर ली जाए, इसके बाद मुसलमानों को युद्ध जारी रखने की अनुमति नहीं है और न मुसलमानों को यह अधिकार है कि उनके जन-धन को किसी प्रकार की हानि पहुँचाएँ चाहे मुसलमान नगर अथवा देश पर विजय प्राप्त करने की स्थिति ही में क्यों न हों।

शत्रुओं के प्रति उदारता

विचार करें यह नियम शत्रुओं के प्रति कितना उदारतापूर्ण है। अधीनता स्वीकार कर लेने के बाद तो ऐसे ग़ैर मुस्लिमों के प्राण, धन, धर्म तथा मान सम्मान सब की रक्षा इस्लामी शासन का धर्म बन जाता है। ऐसी ग़ैर मुस्लिम प्रजा ज़िम्मी कहलाती है, ज़िम्मियों पर देश रक्षा का भार डालने और उनसे सैनिक सेवा लेने का इस्लामी शासन का अधिकार नहीं है।

जिज़्या धर्म का नहीं इसी रक्षा का कर है परन्तु यदि ग़ैर मुस्लिम स्वयं देश रक्षा के कार्य में भाग लें तो उनसे जिज़्या लेने का अधिकार नहीं है। यह भी ज्ञात हो कि हर अवस्था में जिज़्या ही सन्धि का एकमात्र आधार नहीं है।

धन वापस-

महामान्य मुहम्मद साहब (सल्ल०) के दूसरे उत्तराधिकारी हज़रत उमर (रज़ि०) के समय में शाम में मुसलमानों और रुमियों में युद्ध हो रहा था। एक नगर पर मुसलमानों का अधिकार था-मुसलमान नगर निवासियों से जिज़्या ले चुके थे, सैनिको को आवश्यकता के अनुसार नगर छोड़ना पड़ा, नगर छोड़ते समय नगर निवासियों का जिज़्या धन लौटा दिया गया। इसका नगर निवासियों पर

ऐसा प्रभाव हुआ कि मुसलमान नगर छोड़ कर जाने लगे तो नगर निवासी कहने लगे-'रुमी होते तो वह लूट कर ले जाते' और हाथ उठा-उठाकर ईश्वर से प्रार्थना करने लगे कि ईश्वर फिर तुम्हें वापस लाये।

जिज़्या कब ख़त्म हो जाती है

जिज़्या दरअ़सल उस फ़ौजी रक्षा का बदला है जो इस्लामी हुकूमत अपने ज़िम्मियों (ग़ैर मुस्लिमों) की करती है। अगर हुकूमत यह रक्षा नहीं कर पाती तो जिज़्या का उस का हक़ बाक़ी नहीं रह जाता।

यही सूरत उस वक़्त पेश आई थी जब इस्लामी फ़ौजों के कमान्डर हज़रत अबू उ़बैदह(रज़ि०) को शाम के शहरों से उन के नाइबों ने यह ख़बर दी कि रूमी फ़ौजें बड़े पैमाने पर जमा हो रही हैं आप ने उन नाइबों को हुक्म दिया कि सारी इस्लामी फ़ौजें एक जगह इकट्ठा हों लेकिन उस से पहले जिन लोगों से जिज़्या लिया गया है उन्हें जिज़्या की रक़म वापस कर दें और यह आ़म एलान कर दें कि दुश्मनों की फ़ौजों के जमाव के पेशे नज़र हमारे लिए यह मुमकिन नहीं रह गया है कि वहां रहकर उन की हिफ़ाज़त कर सकें और चूंकि जिज़्या इसी शर्त पर किया गया था इसलिए हम ने शर्त के अनुसार जिज़्या की रक़म वापस कर दी। अल्लाह तआ़ला ने अगर हमें दुश्मन पर फ़तेह़याब किया तो फिर हम मुआ़हिदा के मुताबिक़ वापस लौटेंगे। **(किताबुल ख़िराज)**

ह़ज़रत ख़ालिद (रज़ि०) वग़ैरह मुस्लिम कमान्डरों ने बहुत से मुआ़हिदों में ज़िम्मियों को यह लिख कर लिया था कि "अगर हम आप की हिफ़ाज़त करते हैं तब तो हमें जिज़्या का ह़क़ होगा वरना नहीं। " **(तारीख़ तबरी)**

इसी तरह़ अगर ज़िम्मी मुसलमानों के साथ दुश्मने इस्लाम से दारुल इस्लाम को बचाने के लिए जंग में ह़िस्सा लेते हैं तब भी उन से जिज़्या नहीं लिया जाएगा।

ह़ज़रत उ़मर (रज़ि०) के ज़माने में मुसलमानों और ज़िम्मियों के दर्मियान जो मुआ़हिदे किये गये उन में कई में सराह़तन इस का ज़िक्र मौजूद है।

(देखिए अह़कामुज़्ज़िमीईन वल्मुस्तामिनीन-डाक्टर अ़ब्दुल करीम ज़ैदान-१५५)

ह़ज़रत अबू उबैदह (रज़ि०) के नुमाइन्दे ने जराजुमा के साथ जो ईसाई थे यह मुआ़हिदा किया था कि वह मुसलमानों की मदद करेंगे दुश्मनों की नक़्ल व ह़रकत से बाख़बर रखेंगे और उन से यह जिज़्या नहीं लिया जाएगा।

(देखिए फ़तूहुल् बलद लिल्बिलाज़री २१७)

दुश्मन की गिरफ़्तार औ़रतें

जहाँ तक औ़रतों का सम्बन्ध है, इस्लाम ने गुलामी और क़ैद की ह़ालत में भी उनके नारीत्व का आदर किया, हालांकि वह दुश्मन क़ौम से सम्बन्ध रखती थीं और लड़ाई में गिरफ़्तार होकर आती थीं। इस्लाम ने किसी मुसलमान को इस बात की इजाज़त नहीं दी कि वह उन्हें बे-आबरू करे और लड़ाई के मैदान में मिलने वाले लूट के माल का ह़िस्सा समझते हुए उन पर क़ब्ज़ा कर ले। उसने उन औ़रतों को संयुक्त संपत्ति भी नहीं समझा कि जो चाहे उन्हें वासना और पशुत्व का शिकार बनाता फिरे और कोई रोक-टोक करने वाला न हो।

इसके विपरीत इस्लाम ने उन औ़रतों को केवल उनके मालिकों के लिए मुख्य किया और केवल उन्हीं को उनके उपयोग का अधिकार दिया, जिस के बाद किसी दूसरे के लिए उन से काम-सम्बन्ध वैध न रहे। और यह कि उनके लिए भी 'मुकातबत' के बाद आज़ादी की राह खोल दी गयी, बल्कि इस से आगे बढ़कर यह तय कर दिया गया कि अगर कोई लौंडी अपने मालिक के वीर्य से बच्चे की माँ बन जाए, तो उसके साथ ही वह स्वतः आज़ाद औरत समझी जाएगी और उसका बच्चा भी आज़ाद इन्सान समझा जाएगा। इससे स्पष्ट है कि क़ैदी औ़रतों के साथ क़ैद के दौरान इस्लाम का बर्ताव कितना उदारतापूर्ण और पवित्र था।

अल्प संख्यकों के साथ हमदर्दी

यह एक ह़क़ीक़त है कि इन्सानी तारीख़ में इस्लामी भू-भाग ही ऐसे इलाक़े रहे हैं जिन में ख़ालिस रवादारी (सहिष्णुता) से काम लिया जाता रहा है और

अल्पसंख्यकों के साथ ख़ालिस इन्सानी रूह़ व जज़्बे की बुनियाद पर सुलूक किया जाता रहा है। इस्लामी समाज ने अल्पसंख्यकों के साथ ख़ालिस इन्सानी रूह़ व जज़्बे की बुनियाद पर सुलूक किया जाता रहा है। इस्लामी समाज ने अल्पसंख्यकों के लिए इ़बादत, मज़हब व एतिक़ाद, रोज़गार जैसी तमाम आज़ादियों की ज़मानत दी जिन से आज भी ग़ैर इस्लामी समाज दुनिया के मुख़्तलिफ़ ह़िस्सों में रंग व नस्ल से सम्बन्ध रखने वाले और दीगर मज़ाहिब के मानने वाले बाशिन्दों को मह़रूम रखे हुए हैं।

लेकिन सारी रवादारी (सहिष्णुता) और ह़ुस्ने सुलूक के बावजूद मुसलमानों पर तअ़स्सुब का इल्ज़ाम लगाया जाता है। ह़ालांकि इस बीसवीं सदी में भी दुनिया में चारों तरफ़ मुसलमानों के साथ ग़ैर मुस्लिम जो सुलूक कर रहे हैं उस की मिसाल किसी भी ऐसे इलाक़े में पेश नहीं की जा सकती जहाँ मुसलमान ग़ालिब और सत्ता में हैं।

ह़क़ीक़त में मुसलमानों पर इल्ज़ाम और उन के ख़िलाफ़ प्रोपेगन्डा इस मुहिम का एक ह़िस्सा है जो इस्लाम और मुसलमानों को बद्नाम करने और आ़लमी तौर पर उन से दूर करने के लिए दुश्मने इस्लाम की ओर से मुनज़्ज़म और मन्सूबाबन्द तरीक़े पर चलाई जा रही है।

मुस्लिम देशों में फ़िर्क़ा वाराना कोई ज़ुल्म नहीं

इन्डोनेशिया मलेशिया से लेकर अफ़ग़ानिस्तान व ईरान तक और तुर्की से लेकर मिस्र व सूडान तक तमाम मुस्लिम देशों में अल्पसंख्यक सदियों से अम्न व इत्मिनान की ज़िन्दगी गुज़ार रही हैं। दूसरे देशों में अल्पसंख्यक के तह़फ़्फ़ुज़ पर इतना ध्यान हरगिज़ नहीं दिया जा सकता। मुस्लिम मुमालिक फ़िर्क़ा वाराना तअ़स्सुब के नाम से भी वाक़िफ़ नहीं। यह सूरत आज ही नहीं बल्कि इस्लाम की पूरी तारीख़ में बरक़रार रही हैं। ख़ासतौर से उस दौर में जब इन देशों में इस्लामी शरीअ़त थी, अ़द्ल व इन्साफ़ का दौर दौरा था।

इन्सानी तारीख़ में केवल इस्लामी दुनिया ही विभिन्न अक़ीदा रखने वालों

को तमाम हुक़ूक़ और ज़मानतों से फ़ाइदा उठाने का मौक़ा देती रही है। यह इस्लाम ही है जो अपने मानने वाले से पहले दूसरों की आज़ादी आस्था व इबादात की हिफ़ाज़त करवाता है क़ुर्आने करीम मुसलमानों को अक़ीदा के आज़ादी की हिफ़ाज़त के लिए जंग की इजाज़त देते हुए कहता है:

अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है-

وَلَوْلَا دَفْعُ اللّٰهِ النَّاسَ بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ لَّهُدِّمَتْ صَوَامِعُ وَبِيَعٌ وَّ صَلَوٰتٌ وَّمَسٰجِدُ يُذْكَرُ فِيْهَا اسْمُ اللّٰهِ

"अगर ख़ुदा लोगों को एक दूसरे से दिफ़ा न करता तो गिरजा घर इबादतगाहें और मसाजिद ढ़ा दी जातीं जिन में अल्लाह का नाम कसरत से लिया जाता है।"

क्या हक़ीक़त नहीं कि क़ुर्आन ने दीगर क़ौमों की इबादतगाहों के बाद ही मुसलमानों की मसाजिद का ज़िक्र किया है। लेकिन मुसलमान इन सब के बावजूद दहशतगर्द समझा जाता हैं।

हम यहाँ इस बात का ज़ायज़ा लेंगे कि आज़ादी, तरक़्क़ी और समानता के बुलन्द दावे करने वाले दुनिया के विभिन्न मुल्कों में मुस्लिम अल्प संख्यक के साथ कैसा वह़शियाना सुलूक कर रहे हैं, दूसरी तरफ़ मुस्लिम मुल्कों में अल्प संख्यक किस आराम व सुकून से ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं।

इस्लामी हुकूमत में ग़ैर मुस्लिमों की जनसंख्या

११८५ में तन्हा ईराक़ में यहूदियों की तअ़दाद छः लाख के क़रीब हो गई थी। चुनांचे दमिश्क, ह़ल्ब, दजला व फ़ुरात के किनारों पर, जज़ीरा इब्ने उ़मर में और मौसूल, हमदान, अस्फ़हान, और शीराज़, समरक़ंद आदि में काफ़ी यहूदी आबाद हो गये थे। इतिह़ासकार मुक़द्दसी लिखता है कि ख़ुरासान में यहूदियों की बड़ी तअ़दाद आबाद है।"

"स्याह बिनयामीन लिखता है कि ११६५ ई० में क़ाहिरा में सात हज़ार और स्कन्दरिया में तीन हज़ार यहूदी आबाद हैं।"

ईसाईयों की जनसंख्या

केवल बग़दाद में ईसाईयों की जनसंख्या ५० हज़ार के क़रीब थी और दोनों फ़िर्क़ों के लोग बड़े-बड़े सरकारी पदों पर थे, जिन में मन्त्रालय और गवर्नरी जैसे पद शामिल थे।

कोई भी इंसाफ़ पसंद व्यक्ति हमदर्दी के सम्बन्ध से इस्लाम की इंसानी ख़िदमत की क़द्रो क़ीमत का सह़ी अन्दाज़ा उस वक़्त तक नहीं कर सकता जब तक वह इस मैदान में दूसरों के दृष्टिकोण और सेकुलर आईडियालोजी और उन के दाईयों के अ़मल का जायज़ा न ले ले। उन के यहाँ ज़ुल्म व सितम, नस्लकुशी व दहशतगर्दी और लोगों को उजाड़ना और तबाह व बर्बाद करना कोई इक्का दुक्का वाक़िआ़त की हैसियत नहीं रखते बल्कि मुख़ालिफ़ीन के साथ यह तरीक़ा हमेशा की पालीसी का हिस्सा है।

भाग-12

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के संक्षिप्त सुकथनों का वर्णन

ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के संक्षिप्त सुकथनों का वर्णन

अच्छे व्यवहार

(१) ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया तुममें सबसे अच्छे वह लोग हैं जिन के व्यवहार अच्छे हैं। **(बुख़ारी व मुस्लिम)**

(२) ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आ़स (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) जानबूझ कर या अन्जाने में कभी भी बेहूदा बात न निकालते थे और फ़रमाते थे कि तुम में सब से बेहतर वह है जिस का व्यवहार अच्छा हो। **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

(३) ह़ज़रत अबूदर्दा (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया मोमिन (मुसलमान) बन्दे की नेकियों के तौलने के समय अच्छे व्यवहार से अधिक कोई वस्तु भारी न होगी और अल्लाह तआ़ला बकवास बकने वाले बदज़बान आदमी से घृणा करते हैं। **(तिर्मिज़ी)**

(४) ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) से पूछा गया कि किस कारण लोग जन्नत में जाएंगे आप (सल्ल०) ने फ़रमाया अल्लाह के भय और एह़तियात और सद् व्यवहार से और पूछा गया दोज़ख़ में अधिकतर किस वजह से लोग जाएंगे फ़रमाया ह़रामख़ोरी और बद्कारी से।

(५) ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कि संपूर्ण ईमान उसका है जिसके व्यवहार अच्छे हों और तुम से अच्छा वह है जो अपने पत्नियों से सुन्दर व्यवहार से पेश आये। **(तिर्मिज़ी)**

(६) ह़ज़रत आ़इशा (रज़ि०) फ़रमाती हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) से सुना है कि मोमिन (मुसलमान) सद्व्यवहार के कारण लगातार रोज़े रखने वाले और

आ़बिद (संयमी) का दर्जा प्राप्त कर लेता है।

(७) ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि एक आदमी हुज़ूर (सल्ल०) की ख़िदमत में ह़ाज़िर हुआ और कहा कि, मेरे रिश्तेदार हैं, मैं उन से रिश्ता जोड़ता हूँ। वह काटते हैं। मैं उनके साथ भलाई करता हूँ, वह मेरे साथ बुराई करते हैं। मैं अच्छे आचरण पेश करता हूँ वह मुझ पर सख़्ती करते हैं। आपने फ़रमाया जो कुछ तुम कहते हो यदि वह सही है तो तुम उन के मुँह में ख़ाक डालते हो। जब तक तुम्हारा यह रवैया रहेगा अल्लाह की मदद तुम्हारे साथ रहेगी। **(मुस्लिम)**

अल्लाह की मख़्लूक़ पर दया

(१) ह़ज़रत ज़रीर बिन अ़ब्दुल्लाह (रज़ि०) कहते हैं कि रसूलल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया जो इन्सानों पर दया नहीं करता अल्लाह उस पर दया नहीं करता। **(बुख़ारी व मुस्लिम)**

(२) अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर (रज़ि०) कहते हैं कि रसूलल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया दया करने वालों पर, बड़ा दयावान अल्लाह दया करेगा। ज़मीन पर रहने वाली मख़लूक़ (समस्त प्राणियों) पर तुम दया करो तो आसमान वाला तुम पर दया करेगा। **(अबूदाऊद व तिर्मिज़ी)**

(३) अनस बिन मालिक (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि एक बार एक देहाती ने मस्जिद में पेशाब कर दिया सह़ाबा (रज़ि०) उनकी तरफ़ दौड़े लेकिन रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया इसके पेशाब को मत रोको फिर आप ने पानी का डोल मंगाया और पेशाब की जगह पर पानी बहा दिये। **(बुख़ारी शरीफ़)**

(४) ह़ज़रत अनस (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि मैंने दीबा और रेशम रसूलुल्लाह (सल्ल०) की मुबारक हथेली से ज़्यादा नर्म नहीं छुआ और कभी कोई ख़ुशबू रसूलल्लाह (सल्ल०) की ख़ुशबू से अधिक अच्छी नहीं सूंघी और मैंने आप की दस वर्ष सेवा की आपने कभी उफ़ भी नहीं कहा और न किसी काम के करने या न करने पर आपने कभी फ़रमाया कि ऐसा क्यों किया या क्यों न

किया। **(बुख़ारी मुस्लिम)**

(५) ह़ज़रत आ़इशा (रज़ि०) फ़रमाती हैं कि मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) को फ़रमाते हुए सुना है कि जिस चीज़ में नर्मी होती है वह उसको सुन्दर बनाती है और जिस चीज़ से निकल जाती है उसको बुरा कर देती है। **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

(६) ह़ज़रत अनस (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया आसानी पैदा करो सख़्ती न करो, बशारत दो, नफ़रत न दिलाओ। **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

(७) ह़ज़रत जरीर बिन अ़ब्दुल्लाह (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से सुना है कि जो नर्मी से महरूम (वंचित) रहा वह हर भलाई से महरूम रहा। **(मुस्लिम)**

(८) ह़ज़रत आ़इशा (रज़ि०) फ़रमाती हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने किसी को अपने हाथ से नहीं मारा, न किसी औ़रत को और न ग़ुलाम को, अपितु इसके कि अल्लाह की राह में और आप को कभी किसी से तकलीफ़ पहुँचती तो तकलीफ़ पहुँचाने वाले से बदला न लेते परन्तु जब अल्लाह के हुक्म से कोई बेहुरमती करता तो आप अल्लाह के लिए बदला लेते। **(मिश्कात)**

(९) ह़ज़रत अनस (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि मैं रसूलुल्लाह (सल्ल०) के साथ एक बार जा रहा था कि आप मोटे किनारे की नज़रानी चादर ओढ़े हुए थे एक देहाती आप से मिला और चादर पकड़कर आप को बड़े ज़ोर से खींचा, (मैंने देखा कि आपके कंधे पर चादर के खींचने के निशान पड़े गये थे) और कहा ऐ मुह़म्मद मुझे उस माल से दीजिए जो आप (सल्ल०) को अल्लाह ने दिया, आप ने उस की ओर देखा और मुस्कुराए फिर उसको देने का हुक्म दिया। **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

(१०) ह़ज़रत अनस (रज़ि०) और ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कि अल्लाह की समस्त प्राणी एक कुटुम्ब के समान है अतः जो उसकी सृष्टि से अधिक से अधिक भलाई

करता है वही अल्लाह का प्रिय पात्र बनता है। **(बैहक़ी)**

(११) अ़ब्दुल्लाह बिन जाफ़र (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि एक बार रसूलुल्लाह (सल्ल०) एक अन्सारी सह़ाबी के बाग़ में तशरीफ़ ले गये, वहां एक ऊँट था जब उस ऊँट ने आप को देखा, तो ऐसा डकरा और ऐसी दर्द भरी आवाज़ उसने निकाली (जैसी बच्चे के जुदा हो जाने पर ऊँटनी की आवाज़ निकलती है) और उस की आंखों से आंसू भी जारी हो गये।

रसूलल्लाह (सल्ल०) उसके पास गये और आप ने उस पर हाथ फेरा तो वह शान्त हो गया। फिर आपने पूछा यह ऊँट किसका है? इस का मालिक कौन है? एक अन्सारी नौजवान आए और उन्होंने कहा ह़ज़रत यह ऊँट मेरा है। आपने फ़रमाया, इस बेचारे बेज़बान जानवर के बारे में तुम उस अल्लाह से डरते नहीं जिस ने तुम को इसका मालिक बनाया है। इसने मुझ से शिकायत की है कि तुम इसको भूखा रखते हो और ज़्यादह काम लेकर तुम इसको बहुत कष्ट पहुंचाते हो। **(अबू दाऊद)**

(१२) अब्दुर्रह़मान (रज़ि०) कहते हैं कि हमने अपने वालिद से सुना है कि एक सफ़र में रसूलुल्लाह (सल्ल०) के साथ थे आप क़ज़ा-ए-ह़ाजत (लैट्रीन) के लिए गये थे कि उसी समय हमारी नज़र एक छोटी सी सुर्ख़ (लाल) चिड़िया पर पड़ी, जिसके साथ छोटे-छोटे उस के दो बच्चे भी थे। हमने उन बच्चों को पकड़ लिया, वह चिड़िया आई और हमारे सरों पर मण्डलाने लगी, इतने में रसूलुल्लाह (सल्ल०) तशरीफ़ ले आए आपने फ़रमाया-

"किसने इसके बच्चे पकड़ कर इसे सताया है? इस के बच्चे इस को वापस कर दो और आप ने चींटियों की एक बस्ती देखी हम ने वहां आग लगा दी थी आपने फ़रमाया-

किसने इन को आग में जलाया है? हमने अ़र्ज किया या रसूलल्लाह हमने ही यह आग लगाई है। आपने फ़रमाया- आग के पैदा करने वाले खुदा के सिवा किसी के लिए यह सज़ा देने का अधिकार नहीं है कि वह किसी जानदार को आग का अ़ज़ाब दें। **(अबूदाऊद)**

(१३) ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कि एक बेदर्द और बेरह़म औ़रत इसलिए जहन्नम में गिराई गई कि उसने एक बिल्ली को बांध कर भूखा मार डाला न तो उसे खुद कुछ खाने को दिया और न उसे छोड़ा कि वह ज़मीन के कीड़े मकोड़े से अपनी ग़िज़ा ह़ासिल कर लेती। **(बुख़ारी व मुस्लिम)**

(१४) ह़ज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कोई सामान ख़रीदते समय धोखा देकर दाम न बढ़ाओ। **(बुख़ारी, मुस्लिम)**

وَإِنَّ لَكَ لَأَجْرًا غَيْرَ مَمْنُونٍ ۝

अनुवाद–

"और आपके लिए ऐसा अज्र (बदला) है जो कभी ख़त्म न होगा।"

(सूरः क़लमः ४)

الَّذِينَ يُنفِقُونَ فِي السَّرَّاءِ وَالضَّرَّاءِ وَالْكَاظِمِينَ الْغَيْظَ وَالْعَافِينَ عَنِ النَّاسِ ۗ وَاللَّهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ ۝

अनुवाद–

"जो खुशह़ाली और तंगी हर हाल में खर्च करते हैं, और गुस्से को रोकते हैं, और लोगों को माफ़ करते हैं, और अल्लाह नेक लोगों को पसंद करता है।"

पड़ोसियों से अच्छा व्यवहार

(१५) ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, जो व्यक्ति अल्लाह पर ईमान (आस्था) रखता हो और आख़िरत पर, उसे चाहिए कि वह अपने पड़ोसी को कष्ट न दे। **(बुख़ारी व मुस्लिम)**

(१६) ह़ज़रत अबू शुरैह़ (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि अल्लाह की क़सम उसका ईमान (ईश्वर विश्वास) कदापि सम्पूर्ण नहीं, अल्लाह की क़सम उसका ईमान हरगिज़ सम्पूर्ण नहीं, अल्लाह की क़सम हरगिज़ हरगिज़ सम्पूर्ण नहीं। जिसकी बुराईयों से उसका पड़ोसी सुरक्षित न हो। **(बुख़ारी शरीफ़)**

जानवरों पर दया

(१७) ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया एक व्यक्ति रास्ता चल रहा था कि उसे बड़ी तेज़ प्यास लगी इतने में उसे एक कुंवा मिला और उसने उसमें उतर कर पानी पिया फिर जब बाहर निकला तो देखा कि एक कुत्ता हांफ़ रहा है और प्यास की वजह से तरी को चाट रहा है यह देखकर उस व्यक्ति ने कहा यह कुत्ता भी उतना ही ज़्यादा प्यासा मालूम होता है जितना मैं था अतः वह फिर कुएं में उतरा और अपने जूते में पानी भरने के बाद मुंह से पकड़ कर ऊपर लाया और कुत्ते को पानी पिलाया, अल्लाह तआ़ला ने उस के इस अ़मल को पसंद किया और उसकी मग़फ़िरत कर दी।

आप (सल्ल०) के साथियों ने कहा या रसूलल्लाह क्या हमें जानवरों के साथ अच्छा व्यवहार करने में भी सवाब (पुण्य) मिलता है ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया, हर जानदार (के साथ अच्छा व्यवहार करने) पर सवाब मिलता है। **(बुख़ारी)**

वृक्षारोपण में सवाब

(१८) ह़ज़रत अनस बिन मालिक (रज़ि०) कहते हैं कि रसूलल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया यदि कोई मुसलमान वृक्ष (पेड़) लगाता है और उस पेड़ से कोई इन्सान या जानवर खाता है तो पेड़ लगाने वाले के लिए वह सदकः हो जाता है। **(बुख़ारी)**

(१९) ह़ज़रत अबूशुरैह़ (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया, ख़ुदा की क़सम उस का ईमान (ईश्वर विश्वास) कदापि सम्पूर्ण नहीं है ख़ुदा की क़सम उसका ईमान हरगिज़ सम्पूर्ण नहीं है जिस की बुराइयों से उसका पड़ोसी सुरक्षित न हो। **(बुख़ारी शरीफ़)**

मज़दूर की मज़दूरी

(२०) ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया कि मज़दूर का पसीना सूखने से पहले उसकी मज़दूरी अदा कर दिया करो। **(सुनन इब्ने माजा)**

झूठ न बोले

(२१) ह़ज़रत अबूउमामा (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया मैं उस व्यक्ति के लिए जन्नत के सामने एक घर की ज़मानत लेता हूँ जिसने ह़क़ पर होते हुए भी झगड़ा छोड़ दिया और उस व्यक्ति के लिए जन्नत के अन्दर में एक घर की ज़मानत लेता हूँ जिसने झूठ छोड़ दिया चाहे वह मज़ाक़ ही में बोलता था और उस व्यक्ति के लिए जन्नत की बुलन्दी में एक घर की ज़मानत लेता हूं जिसके आचरण अच्छे हों। **(अबूदाऊद)**

चर्ब ज़बानी

(२२) ह़ज़रत जाबिर (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया क़यामत के दिन मुझे सबसे अधिक क़रीब वह होंगे जो अच्छे आचरण वाले हैं और मुझे सबसे अधिक नापसंद और सबसे अधिक मुझसे दूर वह होंगे जो ज़्यादह बातूनी, चर्ब ज़बान, और बनावटी व घमण्डी लोग होंगे।

(तिर्मिज़ी)

पहलवान कौन

(२३) ह़ज़रत अबूहुरैरा (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया पहलवान वह नहीं है जो किसी को पछाड़ दे पहलवान वह है जो ग़ुस्सा के समय अपने आप को क़ाबू में रखे। **(बुख़ारी मुस्लिम)**

न्याय

(२४) ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उ़मर बिन आ़स (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (सल्ल०) ने फ़रमाया न्याय करने वाले नूर के मेम्बर पर होंगे वह जो अपनी सत्ता में अपने घरों में, और जो काम उन के सुपुर्द हुआ हो उस में न्याय करें। **(मुस्लिम)**

(२५) ह़ज़रत अ़याज़ (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह (सल्ल०) से सुना है कि तीन आदमी जन्नत के ह़क़दार होंगे।

(१) न्यायी बादशाह जो न्याय करता हो। (२) ऐसा आदमी जो हर क़रीबी रिश्तेदार मुसलमान के लिए रह़मदिल और नर्म दिल हो। (३) वह आदमी जो सवाल (भिक्षा) से बचे यद्यपि कई औलादों वाला हो।

Writer at a glance

Mufti Muhammad Sarwar Farooqui Nadwi (*Aacharya*)

Name	:	**Muhammad Sarwar**
Father's name	:	**Mohd Haneef**

Educational Background.

Basic	:	**Intermediate,** (Allahabad)
Higher Education	:	**M.A.** (Lucknow)
Arabic	:	**Almiat, Fazeelat & Iftah,** (Darul-Uloom- Nadwatul Ulama Lucknow (U.P.) India.
Islamic Tadreebi Course	:	**Jamia Islamiya** **Madina Munawarah** (Saudi Arabia)
Urdu	:	**Adeeb Kamil & Mua'llim**
Sanskrit	:	**Aacharya** (Banaras).
Computer skill	:	**P.G.D.C.A**
Major Research	:	**Qur'an and Fiqah,** Darul-Uloom Nadwatul-Ulama, Lucknow, U.P. (India)

Present Posts

President	:	***Jamiat Payam-e-Amn,*** (Educational Society) lucknow, U.P. (India)
Manager	:	**Maulana Ali Miyan Memorial Manav Sewa Samiti,** Lucknow, U.P. (India)
Director	:	***Markaz Ul-Tawheed Al-Islami*** lucknow, U.P. (India)
Managing Director	:	**Jamia Dar-e-Arqam** Fatehpur, Haswa, U.P. (India)
Manager	:	**Jamia Dar-e-Arqam** (Educational Society) Allahabad (India)
Chairman	:	**Arqum Model School** Lucknow, U.P. (India)
Director	:	***Quran, Amn Research Academy,*** Lucknow, U.P. (India)
General Secretary	:	***All India, Jamiat Darul-Aml,*** lucknow, U.P. (India)

मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी द्वारा लिखित पुस्तकें

नाम	भाषा	मूल्य
1. क़ुर्आन का पैग़ाम *(क़ुर्आन मजीद का आसान हिन्दी अनुवाद)* साइज़ 20x30/8	हिन्दी	200 रू.
2. क़ुर्आन का पैग़ाम (क़ुर्आन मजीद का आसान हिन्दी अनुवाद) साइज़ 20x30/16	हिन्दी	140 रू.
3. क़ुर्आन का पैग़ाम (क़ुर्आन मजीद का आसान हिन्दी अनुवाद) साइज़-20x30/32	हिन्दी	75 रू.
4. तफ़्सीर फ़ारूक़ी (पारा अम्म अनुवाद और व्याख्या)	हिन्दी	100 रू.
5. तफ़्सीर फ़ारूक़ी *(क़ुर्आन मजीद की हिन्दी तफ़्सीर पारा नं० १ से ५ तक)*	हिन्दी	300 रू.
6. तफ़्सीर फ़ारूक़ी *(क़ुर्आन मजीद की हिन्दी तफ़्सीर पारा नं० ५ से १० तक)*	हिन्दी	300 रू.
7. इस्लाम धर्म क्या है? *(क़ुबूले हक़ के बाद इस्लामी कोर्स) कई भागो में*	हिन्दी	110 रू.
8. जिहाद, आतंकवाद और इस्लाम	हिन्दी	110 रू.
9. हिन्दी पत्रकारिता और मीडिया लेखन	हिन्दी	60 रू.
10. अन्तिम सन्देष्टा कब कहाँ और कौन Hard Bound	हिन्दी	110 रू.
11. अन्तिम सन्देष्टा कब कहाँ और कौन Paper Bound	हिन्दी	90 रू.
12. जन्नत के हालात और जन्नती (क़ुर्आन व सुन्नत की रोश्नी में)	हिन्दी	60 रू.
13. क़ुफ़्र और शिर्क की हक़ीक़त	हिन्दी	60 रू.
14. रसूलुल्लाह (सल्ल०) का हुलिया मुबारक और आप (सल्ल०) की सुन्नतें	हिन्दी	60 रू.
15. सह़ाबा का इस्लाम और उसके बाद	हिन्दी	50 रू.
16. अज़ान क्या है?	हिन्दी	20 रू.
17. आओ नमाज़ की ओर	हिन्दी	32 रू.
18. रोज़ः का हुक्म और उसके मसायल *(क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)*	हिन्दी	30 रू.
19. ह़ज और उ़मरा का आसान तरीक़ा *(क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)*	हिन्दी	20 रू.
20. ज़कात का हुक्म और उसके मसायल *(क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)*	हिन्दी	30 रू.
21. आपके सवालों का आसान ह़ल (भाग एक)	हिन्दी	30 रू.
22. झाड़, फूँक, जादू, टोना और तअ़वीज़,गंडे *(शरीअ़त की रोशनी में)*	हिन्दी	20 रू.
23. इस्लाम की बुनियादी मालूमात *(सवाल व जवाब की रोशनी में)*	हिन्दी	35 रू.
24. रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की सीरत *(सवाल व जवाब की रोशनी में)*	हिन्दी	30 रू.
25. रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की पाकीज़ह ज़िन्दगी	हिन्दी	30 रू.
26. बीवी-शौहर की ज़िम्मेदारियाँ *(शरीअ़त की रोशनी में)*	हिन्दी	30 रू.
27. आधुनिक हिन्दी व्याकरण और मीडिया लेखन	हिन्दी	90 रू
28. सूर-ए- फ़ातिह़ा की तफ़्सीर	हिन्दी	30 रू.
29. तौह़ीद की ह़क़ीक़त (क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)	हिन्दी	30 रू.
30. पवित्र क़ुर्आन का सन्देश इन्सानी दुनिया के नाम	हिन्दी	30 रू.
31. इस्लाम धर्म तलवार से फैला या सदाचार से	हिन्दी	40 रू.
32. मोबाईल से सम्बन्धित मसायल *(शरीअ़त की रोशनी में)*	हिन्दी	15 रू.
33. अल्लाह के प्यारे नबी (सल्ल०) एक नज़र में	हिन्दी	15 रू.
34. सृष्टि का सृष्टा और क़ुर्आन	हिन्दी	15 रू.
35. इस्लाम?	हिन्दी	05 रू.
36. आख़िरी रसूल कहाँ, कब और कौन?	उर्दू	90 रू.
37. ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) और जज़ीरे अ़रब	उर्दू	30 रू.
38. ग़ैर मुस्लिमों से तअ़ल्लुक़ात और मज़हबी आज़ादी	उर्दू	30 रू.

नाम	भाषा	मूल्य
39. इस्लाम में जिज़्या, ख़िराज और ज़िम्मियों के अख़्तियारात	उर्दू	25 रू.
40. क़ुर्आन के मिसाली नमूने और लाज़वाल मोअ़जिज़ा	उर्दू	30 रू.
41. क़ुर्आन में इन्सान का मक़ाम	उर्दू	30 रू.
42. आ़माल को बातिल करने वाली चीज़ें और नियत की अहमियत	उर्दू	30 रू.
43. इस्लामी क़ानून विरासत और मीरास की तक़्सीम	उर्दू	30 रू.
44. उम्मते मुह़म्मदिया की इ़ज़्ज़त का मेयार और मीरास की तक़्सीम	उर्दू	30 रू.
45. इस्लाम में ग़ैर मुस्लिमों के ह़ुक़ूक़	उर्दू	40 रू.
46. हिन्दू धर्म, फ़िर्क़े तन्ज़ीमें और इदारों का तआ़रूफ़	उर्दू	70 रू.
47. ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) का ज़िक्र और मूर्तिपूजा की मुमानियत वेदों की दुनिया में।	उर्दू	20 रू.
48. बौद्ध धर्म और इस्लाम	उर्दू	50 रू.
49. ग़ैर मुस्लिमों में तरीक-ए-दआ़वत उस्लूबे अंबिया की रोशनी में	उर्दू	60 रू.
50. क़ियामत तक के फ़ित्नें की {रसूल (सल्ल०) की पेशीनगोई की रोशनी में}	उर्दू	55 रू.
51. तलाक़ का इस्लामी तरीक़ा (क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)	उर्दू	30 रू.
52. अल्लाह की तरफ़ से रिज़्क़ की तक़्सीम और कमज़ोर तब्क़े की किफ़ालत	उर्दू	30 रू.
53. क़ुर्आन के मुताबिक़ दौलत का इस्तेमाल	उर्दू	60 रू.
54. ज़कात और मसारिफ़े ज़कात *(क़ुर्आन व सुन्नत की रोशनी में)*	उर्दू	15 रू.
55. रसलुल्लाह (सल्ल०) की मुख़्तसर सीरत *(मुस्तनद क़ुतुबे सीरत की रोशनी में)*	उर्दू	20 रू.
56. रसूलुल्लाह (सल्ल०) की सीरत के अनमोल मोती	उर्दू	18 रू.
57. रसूलुल्लाह (सल्ल०) का हुलिया मुबारक और आप (सल्ल०) की सुन्नतें	उर्दू	55 रू.
58. दाढ़ी की अहमियत (शरीअ़त की रोशनी में)	उर्दू	30 रू.
59. मदारिसे इस्लामिया के निसाब का तारीख़ी जायज़ा	उर्दू	30 रू.
60. रोज़ः, तरावीह़, सद्क़ः और एतिकाफ़ के एह़काम व मसायल *(शरीअ़त की रोशनी में)*	उर्दू	30 रू.
61. ह़ज और उ़मरा का मुकम्मल तरीक़ा *(शरीअ़त की रोशनी में)*	उर्दू	30 रू.
62. इस्लामी क्विज़ (सवाल व जवाब की रोशनी में)	उर्दू	35 रू.
63. तफ़्सीर का बुनियादी मअ़ख़ज़ और मुफ़स्सिर की ख़ुसूसियत	उर्दू	20 रू.
64. हिन्दुस्तान में क़ुर्आन के तर्जुमे व तफ़ासीर का मुख़्तसर तआ़रुफ़	उर्दू	20 रू.
65. इस्लाम में तिजारत का तरीक़ा	उर्दू	100 रू.
66. इस्लामी मआ़शियात का तक़ाबुली जायज़ा	उर्दू	20 रू.
67. इस्लाम का ज़रई निज़ाम	उर्दू	40 रू.
68. दौलत की पैदाईश और अत्यते क़ुदरत	उर्दू	30 रू.
69. मुसलमानों के फ़िर्क़े और उनके अ़क़ायद	उर्दू	60 रू.
70. ह़राम, ह़लाल और मुबाह चीज़ें	उर्दू	20 रू.
71. ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) की सिफ़ात (अह़ादीस की रोशनी में)	उर्दू	30 रू.
72. अल्हिन्दूसिया मुबादिओहा व अक़ाइदोहा, मुनज़्ज़िमातुहा व अह़दाफ़ुहा	अ़रबी	40 रू.
73. ज़िक्र मुह़म्मदिन (सल्ल०) फ़िल् वेद	अ़रबी	30 रू.
74. मुह़म्मद दी लास्ट प्रोफ़ेट अन्डर दी शेड ऑफ़ वेद, उपनिषद एण्ड पुराण	अंग्रेज़ी	40 रू.
75. मुह़म्मद (सल्ल०) एण्ड स्टेटस आफ़ वरशिप	अंग्रेज़ी	30 रू.
76. बेसिक टीचिंग आफ़ इस्लाम	अंग्रेज़ी	60 रू.
77. दी स्वॉड ऑफ़ इस्लाम	अंग्रेज़ी	30 रू.
78. अज़ान, ए कालिंग फ़ॉर ह्यूमेनिटी	अंग्रेज़ी	20 रू.
79. इस्लाम?	अंग्रेज़ी	07 रू.

हिन्दी में मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी की अनुवाद की हुई पुस्तकें

80. मुन्तख़ब अह़ादीस (लेखक- ह़ज़रत मौलाना मुह़म्मद यूसुफ़ कान्धलवी रह०)	(हिन्दी)	60 रू.
81. क़ादियानियत नुबूवते मुह़म्मदी के ख़िलाफ़ बग़ावत (लेखक- इमामे ह़रम अब्दुल्लाह बिन अस्सुबय्यिल)	(हिन्दी)	10 रू.
82. अक़ीदतुल् वास्तिया (लेखक- अह़मद बिन अ़ब्दुल ह़लीम इब्ने तैमिया रह़०)	(हिन्दी)	40 रू.
83. सलासिले अरबअ़ (लेखक- ह़ज़रत मौलाना सैय्यद अबुल ह़सन अ़ली नदवी रह़०)	(हिन्दी)	15 रू.
84. दारे अरक़म का एह़सान इन्सानी दुनिया के नाम पर (लेखक- ह़ज़रत मौलाना सैय्यद अबुल ह़सन अ़ली नदवी रह़०)	(हिन्दी)	20 रू.
85. मानवता आज भी उसी की चौखट की मुह़ताज़ है (लेखक-मौलाना मुह़म्मद ह़सनी रह़०)	(हिन्दी)	20 रू.
86. रमज़ान का तोह़फ़ा *(लेखक- मौलाना मुह़म्मद राबेअ़ ह़सनी नदवी)*	(हिन्दी)	20 रू.
87. यक्साँ सिविल कोड और महिलाओं के अधिकार *(लेखक- मौलाना मुह़म्मद राबेअ़ ह़सनी नदवी)*	(हिन्दी)	20 रू.
88. मालिक व मख़्लूक़ श्रेष्ठ कौन? *(विचारक- मुह़म्मद मुस्तफ़ा क़ादरी) (तस्ह़ीह़ व तर्तीब- मु० मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी)*	(हिन्दी)	20 रू.
89. यतीमों की किफ़ालत *(लेखक- मुह़म्मद आमिर सिद्दीक़ी नदवी) (तर्जुमः- मु० मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी)*	(हिन्दी)	20 रू.

Literary Works By Mufti Mohd Sarwar Farooqui

Book's Name	*Language*	*Rs.*
1. Quraan ka Paigham (Asan Hindi Tarjuma) Size 20x30/8	Hindi	200/-
2. Quraan ka Paigham (Asan Hindi Tarjuma) Size 20x30/16	Hindi	140/-
3. Quraan ka Paigham (Asan Hindi Tarjuma) Size-20x30/32	Hindi	75/-
4. Tafseer Farooqui *(Translation & Commentry of Para Amm)*	Hindi	100/-
5. Tafseer Farooqui *(Para 1 to 5)*	Hindi	300/-
6. Tafseer Farooqui *(Para 5 to 10)*	Hindi	300/-
7. Islam Dharm kya Hai? *(Qubule Haque ke Baad Islami Course)*	Hindi	110/-
8. Jihad, Atankwaad Aur Islam	Hindi	110/-
9. Hindi Patrkarita Aur Media lekhan	Hindi	60/-
10. Antim Sandeshta Kab, Kahan, aur Kaun Hard Bound	Hindi	110/-
11. Antim Sandeshta Kab, Kahan, aur Kaun Paper Bound	Hindi	90/-
12. Jannat Ke Halat Aur Jannati *(Quraan Aur Sunnat ki Roshni mein)*	Hindi	60/-
13. Kufr Aur Shirk ki Haqeeqat	Hindi	60/
14. Rasulullah (SAW) ka Huliya Mubarak aur Aap (SAW) ki Sunnten	Hindi	60/-
15. Sahaba ka Islam Aur Uske Baad	Hindi	50/-
16. Azan Kya Hai?	Hindi	20/-
17. Aao Namaz ki Our	Hindi	32/-
18. Roze ka Huqm Aur Uskay Masail	Hindi	30/-
19. Haj wa Umra ka Aasaan Tariqua	Hindi	20/-
20. Zakat ka Hukm Aur Uskay Masail	Hindi	30/-
21. Apke Sawalon ka Asan Hal (Part-1)	Hindi	30/-
22. Jhaad, Phook, Jadoo, Tona Aur Taweez Gande	Hindi	20/-
23. Islam ki Buniyadi Maloomat *(Sawal Wa Jawab ki Roshni Mein)*	Hindi	35/-
24. Rasoolullah *(SAW)* ki Seerat *(Sawal Wa Jawab ki Roshni Mein)*	Hindi	30/-
25. Rasoolullah *(SAW)* ki Pakiza Zindagi	Hindi	30/-
26. Biwi Shauhar Ke Huqooq	Hindi	30/-
27. Adhunik Hindi Vyakran Aur Media Lekhan	Hindi	90/-

Book's Name	Language	Rs.
28. Sooreh Fatiha ki Tafseer	Hindi	30/-
29. Tauheed Ki Haqeeqat *(QuranWa Sunnat ki Roshni Mein)*	Hindi	30/-
30. Pavitra Quraan ka Sandaish, Insani Duniyan ke Naam	Hindi	30/-
31. Islam Dharm Talwar Se Phiali Ya Sadachar Se	Hindi	40/-
32. Mobial Se Sambandhit Masail *(Shrait ki Roshni Mein)*	Hindi	15/-
33. Allah Ke Pyare Nabi *(Saw)* Ek Nazar Mein	Hindi	15/-
34. Srishtee Ka Srishta Aur Qur'an	Hindi	15/-
35. Islam?	Hindi	05/-
36. Akhri Rasool Kahan, Kab Aur Kaun	Urdu	90/-
37. Hazrat Muhammad (Saw) Aur Jazeeray Arab	Urdu	30/-
38. Gair Muslimoon Se Talluqat Aur mazhabi Azadi	Urdu	30/-
39. Islam Mein Jizya, Khiraj Aur Zimmiyou ke Aktiyarat	Urdu	25/-
40. Quran ke misali Namooney Aur Lazawal Mojizah	Urdu	30/-
41. Quran mein Insan ka Maqam Aur Us ka Aala Maqsad	Urdu	30/-
42. Amaal ko Batil karne wali Cheezeh Aur Niyat ki Ahmiyat	Urdu	30/-
43. Islami Qanoon Virasat Our Meeras ki Taqseem	Urdu	30/-
44. Ummate Muhammdia ki Izzat ka Meyar Our Bani Israeil	Urdu	30/-
45. Islam Mein Gair Muslimoon ke Huquq	Urdu	40/-
46. Hindu Dharm, Firke, Tanzeemun aur Idaron ka Taaruf	Urdu	70/-
47. Hazrat Muhammad (SAW) ka Zikr aur Murtipuja ki Mumaniyat Vaidon ki Duniya mein	Urdu	20/-
48. Baudh Dharm Aur Islam	Urdu	50/-
49. Ghair Muslimon mein Trique Dawat Uslube Ambiya ki Roshni mein	Urdu	60/-
50. Qiyamat tak ke Fitne *(Rasool Saw ki Peshangoin ki Roshni Mein)*	Urdu	55/-
51. Talaq ka Islami Tareeqah *(Quran Aur Sunnat ki Roshni Mein)*	Urdu	40/-
52. Allah ki Taraf se Rizq ki Taqseem *(Aur Kamzor Tabke ki kifalat)*	Urdu	35/
53. Quran ke Mutabik Daulat ka Istemal	Urdu	60/-
54. Zakat Aur Masarif-e-Zakat (Shariat ki Roshni Mein))	Urdu	15/-
55. Rasoolullah ki Muqhtasar Seerat *(Mustanad kutub seerat ki Roshni Mein)*	Urdu	20/-
56. Rasoolullah *(SAW)* ki Seerat Ke Anmol Moti	Urdu	18/-
57. Rasulullah *(SAW)* ka Huliya Mubarak aur Aap *(SAW)* ki Sunnten	Urdu	55/-
58. Dhadhi ki Ahmiyat *(Shriat ki Roshni Mein)*	Urdu	20/-
59. Madaris–e–Islamia ke Nisab ka Tariqhi Jayza	Urdu	18/-
60. Roza, Taraveeh, Sadqa Aur Etikaf ke Ahkam Wa Masail	Urdu	30/-
61. Haj Aur Umra ka Mukammal Tareeqa	Urdu	15/-
62. Islami Quiz *(Sawal Wa Jawab ki Roshni Mein)*	Urdu	35/-
63. Tafseer ka Buniyadi Makhaz	Urdu	20/-
64. Hindustan mein Quran ke tarjume wa tafaseer ka Mukhtasar Taruf	Urdu	20/-
65. Islami Mashiyat ka taqabuli jayza	Urdu	20/-
66. Islam Mein Tijarat Ka Tariqa	Urdu	100/-
67. Tafseer ka Buniyadi Makhaz Aur Mufassir ki Khusisyat	Urdu	40/-
68. Daulat ki paidaish Aur Atyate Qudrat	Urdu	30/-
69. Musalmoon ke firqe Aur Unke Aqaid	Urdu	60/-
70. Haram, Halal Aur Mibah Cheezein	Urdu	20/-
71. Hazrat Muhammad (Saw) ki Sifat (Ahadees ki Roshni Mein)	Urdu	20/-
72. Alhindusiya, Mabadioha wa Aquaiduha, Munazzimatuha wa Ahdafuha	Arbi	40/-
73. Zikr Muhammadin *(SAW)* Fil Almil	Arbi	30/-

Book's Name	Language	Rs.
74. Muhammad the last Under the shade of Veda, Upnishad & Puran	English	40/-
75. Muhammad (Saw) & Status of Worship	English	30/-
76. Basic Teaching of Islam	English	60/-
77. The Sword of Islam	English	30/-
78. Azan, A Calling for Humanity	English	20/-
79. Islam?	English	07/-

Translated into Hindi by: ***(Mufti Muhammmad Sarwar Farooqui)***

80. Muntakhab Ahadees *(Writer:- Hazrat Maulana Muhammad Yusuf kandhalwi Rah)*	Hindi	60/-
81.Quadiyaaniat Nuboowat ke Khilaf Baghawat *(Writer:- Imam-e-Haram Abdullah Assubayil Sb.)*	Hindi	10/-
82. Aqeedatul Vastia *(Writer: -Ahmad bin Haleem Ibne Taimiya (Rah)*	Hindi	40/-
83. Salasile Arbaw *(Writer: - Maulana Abul Hasan Ali Nadwi)*	Hindi	15/-
84. Dar-e-Arqum ka Ahsan Insani Dunya Par *(Writer: - Maulana Abul Hasan Ali Hasani Nadwi)*	Hindi	20/-
85. Maanawta Aaj Bhi Usi Chaukhat ki Muhtaaj Hai *(Writer: - Maulana Muhammad Hasani)*	Hindi	20/-
86. Ramzan Ka Tohfa *(Writer: - Maulana Rabey Hasni Nadwi)*	Hindi	20/-
87. Yaksa Civil coad Aur Mahilaou ke Adhikar *(Writer: - Maulana Rabey Hasni Nadwi)*	Hindi	20/-
88. Malik Wa Makhlooq Shresth Kaun? *(Vicharak: - Mohd Mustafa Qadri) (Tasheeh wa Tarteeb: - Mufti Mohd Sarwar Farooqui Nadwi)*	Hindi	20/-
89. Yateemoon ki kifalat *(Writer: - Mohd Aamir Siddique Nadwi) (Translated: - Mufti Mohd Sarwar Farooqui Nadwi)*	Hindi	20/-

Publisher & Distributors

Maktaba Payam-E-Amn

Tagore Marg, Daliganj, Lucknow-226020 U.P. (India)
Website: www.islamicjpamn.com
Mobile– 0091– 9919042879, 9984490150
E- Mail–jpa_lko@ yahoo.com, siddiquilko@yahoo.com

पहली बार

कुर्आन का पैग़ाम

तफ़्सीर फ़ारूक़ी

कुर्आन के पाँच-पाँच पारों में तफ़्सीर

मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी

यह कुर्आन मजीद की तफ़्सीर है, जो आसान हिन्दी भाषा में लिखी गई है जिसे मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम सभी लोग समझ सकते हैं।

इस में सबसे पहले सूरः नाज़िल होने की वजह और पूरी सूरः का संक्षिप्त परिचय कराते हुए उसकी फ़ज़ीलत पर रोशनी डाली गई है फिर लगभग दस-दस आयतों या कुछ कम ज़्यादा मज़मून के हिसाब से तर्जुमः और मुकम्मल तफ़्सीर और उससे सम्बन्धित मसायल और नई-नई तहक़ीक़ात के साथ हमारे कुछ भाईयों को जिन आयतों पर एतिराज़ होता है उन के जवाबात भी अच्छे ढंग से दिये गये हैं।

इस तरह इतनी तफ़्सील से हिन्दी में इस तरह की तफ़्सीर पहली बार कही जा सकती है, जो तमाम इन्सानों के लिए बहुत फ़ायदेमन्द है।

إِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا الذِّكْرَ وَإِنَّا لَهُ لَحَافِظُونَ

कुर्आन का पैग़ाम

कुर्आन का आसान हिन्दी अनुवाद

सन्देश

इस्लामी जगत के प्रख्यात विद्वान

मुफ़क्किरे इस्लाम ह़ज़रत मौलाना सय्यद अबुल ह़सन अ़ली ह़सनी नदवी (अ़ली मियाँ) (रह़०)

अनुवाद-

मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी

(सदर- जमअ़ीयत पयामे अम्न, लखनऊ)

जमअ़ीयत पयामे अम्न

मर्कज़ुत्तौह़ीद अल् इस्लामी, अम्न कालोनी (सिकरौरी)

हरदोई रोड, लखनऊ (यू0पी0) इण्डिया–227107

अन्तिम सन्देष्टा

एम० एम० सरवर फ़ारुक़ी नदवी
(एम० ए० व आचार्य)

"वेद, पुराण, उपनिषद, बौद्ध, तौरेत, इन्जील, पारसी, अ़रब कवि, भारतीय कवि, विशेष रूप से तुलसीदास जी, कबीरदास जी की वाणियों सहित गुरू नानक जी की वाणियां तथा इतिहासकारों, वैज्ञानिकों और पवित्र कुर्आन की दृष्टि में, ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०)।"

इस्लाम धर्म
तलवार से फैला या सदाचार से
?

प्रस्तुत पुस्तक में इस्लाम की परिभाषा, काफ़िर का अर्थ, इस्लाम पर लगाये गये आरोप, क़ुर्आन के अनुसार इस्लाम के प्रचार का तरीक़ा, ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के समय में इस्लाम के फैलने का माध्यम, अ़रब में इस्लाम के फैलने का कारण, यमन में, नजरान में, बहरैन में, उमान में और हिन्दुस्तान में फैलने के माध्यमों का विस्तारपूर्वक वर्णन करते हुए ह़ज़रत मुह़म्मद (सल्ल०) के युद्ध के पूर्व की दशा का वर्णन करने के बाद विश्व प्रसिद्ध विद्वानों के विचारों को स्पष्ट किया गया है।

मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी

प्रकाशक-
मकतबः पयामे अम्न
नदवा रोड, डालीगंज, लखनऊ-२० (यू०पी०) इण्डिया

इस्लाम की बुनियादी मालूमात

सवाल व जवाब की रोशनी में

बच्चों के लिए इस्लामी कोर्स

इसमें इस्लाम के अक़ायद, पाकी, नापाकी, वुज़ू, ग़ुस्ल, नमाज़, रोज़ः, ह़ज, ज़कात, विरासत, क़ुर्आन, ह़दीस, इस्लामी हुकूमत, सज़ाएँ, अदालत, हुक़ूक़ और नबियों तथा ख़ुलफ़-ए-राशिदीन से सम्बन्धित मालूमात प्रश्नोत्तर के रूप में दिया गया है।

मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी

प्रकाशक-
मकतबः पयामे अम्न
नदवा रोड, डालीगंज, लखनऊ-२० (यू०पी०) इण्डिया

रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का हुलिया मुबारक और आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सुन्नतें

इसमें हुज़ूर (सल्ल०) का हुलिया मुबारक और आप (सल्ल०) के खाने, पीने, सोने, जागने कपड़ा पहनने, कंघा करने, तेल लगाने, नाख़ून काटने, इस्तिंजा करने, जूता पहनने, अंगूठी पहनने, मस्जिद और घर में दाख़िल होने, बाज़ार जाने, गुफ़्तगू करने, वुज़ू, ग़ुस्ल, अज़ान, नमाज़, दुआ, रमज़ान, ईदैन, सफ़र, सलाम, निकाह, मय्यित और उससे मुतअ़ल्लिक़ सुन्नतों से लेकर आप (सल्ल०) के अख़लाक़ व आ़दात का तफ़्सील से ज़िक्र है।

मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी

प्रकाशक-
मकतबः पयामे अम्न
नदवा रोड, डालीगंज, लखनऊ-२० (यू०पी०) इण्डिया

आओ नमाज़ की ओर

नमाज़ पढ़ने का मुकम्मल सुन्नत तरीक़ा

लेखक

मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी

प्रकाशक-

मकतबः पयामे अम्न

नदवा रोड, डालीगंज, लखनऊ-२० (यू०पी०) इण्डिया

रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की पाकीज़ह ज़िन्दगी

मुख़्तसर किताबी के हवाले से

बच्चों के लिए इस्लामी कोर्स

मुफ़्ती मुहम्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी (आचार्य)

प्रकाशक-

मकतबः पयामे अम्न

नदवा रोड, डालीगंज, लखनऊ-२० (यू०पी०) इण्डिया

झाड़, फूँक, जादू, टोना
और
तअ़वीज़, गंडे

शरीअ़त की रोशनी में

मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारुक़ी नदवी
(सदर जमीअ़त पयामे अम्न, लखनऊ)

प्रकाशक-
मकतबः पयामे अम्न
नदवा रोड, डालीगंज, लखनऊ-२० (यू०पी०) इण्डिया

जन्नत के हालात
और
जन्नती

कुर्आन व ह़दीस की रोशनी में

इसमें मरने के वक़्त से, अ़िल्लीय्यीन, सिज्जीय्यीन, क़ब्र, क़ियामत, मैदाने ह़श्र, पुलसिरात, आ़मालनामा, ह़िसाब-किताब, शफ़ाअ़त, जन्नत, उसके दर्जे, दरवाज़े, पहरेदार, ख़ज़ान्ची, ख़ेमे, तख़्त, कमरे, बर्तन, लिबास, सवारियाँ, मजलिसें, पेशाब-पाखाना, ग़िज़ा, शराब, कबाब, रोटी, फल, मेवे, परिन्दे, नहरें, बाग़ात, बीवियाँ, हूरें, मुह़ब्बत और अल्लाह का दीदार का तफ़्सीली ज़िक्र है।

मुफ़्ती मुह़म्मद सरवर फ़ारूक़ी नदवी
(सदर जमीअ़त पयामे अम्न, लखनऊ)

प्रकाशक-
मकतबः पयामे अम्न
नदवा रोड, डालीगंज, लखनऊ-२० (यू०पी०) इण्डिया